सत्साहित्य प्रकाशन

मास्टर महिम

—बंगला के एक हृदयस्पर्शी उपन्यास का हिन्दी रूपान्तर—

लेखक

मनोज वसु

अनुवादिका

माया गुप्त

प्रकाशकीय

हमारी बहुत दिनों से इच्छा रही है कि भारत की प्रमुख भाषाओं के उत्तम उपन्यासों के हिन्दी-अनुवाद प्रकाशित हों। उनसे हिन्दी के पाठकों को तो लाभ होगा ही, साथ ही विभिन्न भाषाओं की चुनी हुई कृतियों से हिन्दी का भण्डार भी सम्पन्न होगा।

इसी उद्देश्य को सामने रखकर हमने अबतक अनेक उपन्यास प्रकाशित किये हैं। बंगला, मराठी, गुजराती, कन्नड़, तमिल आदि भाषाओं के कई उपन्यास पाठकों को मिल चुके हैं।

हमें हर्ष है कि इसी माला में यह नया उपन्यास निकल रहा है। इस उपन्यास के लेखक बंगला के प्रतिष्ठित लेखक हैं। उनके 'नवीन यात्रा' उपन्यास को, जो 'मण्डल' से इसी माला में प्रकाशित हुआ है, पाठक पढ़कर मुग्ध रह गये हैं।

इस उपन्यास में उन्होंने वर्त्तमान शिक्षा-पद्धति और शिक्षक-समुदाय का चित्र खींचा है। इसमें कहीं-कहीं पाठकों को अतिरंजना मालूम हो सकती है, लेकिन इसमें शक नहीं कि हमारे देश में प्रारंभिक अवस्था में दी जानेवाली शिक्षा और उसे देनेवाले शिक्षकों की दशा बड़ी ही शोचनीय है। वैसे देखा जाय तो शिक्षक मानव के निर्माता हैं और इसी दृष्टि से मूल बंगला में इस उपन्यास का नाम 'मानुषेर गढ़िया कलाकार' रक्खा गया है, पर सच यह है कि अपनी दुर्दशा के कारण शिक्षक सोने को मिट्टी बना देते हैं।

हम आशा करते हैं कि यह उपन्यास सभी क्षेत्रों में पढ़ा जायगा और इसमें जिस समस्या की ओर लेखक ने संकेत किया है, वह हमारे देश के कर्णधारों एवं शिक्षा-शास्त्रियों का ध्यान आकर्षित करेगी।

—मंत्री

दो शब्द

श्री मनोज वसु बंगला के उन सफल लेखकों में से हैं, जो कला कला के लिए नहीं, बल्कि कला को किसी महान उद्देश्य की सिद्धि के लिए, जीवन को ऐश्वर्यशाली बनाने के लिए, काम में लाने में विश्वास करते हैं।

यों कहा जाता है कि शिक्षक का पेशा बहुत ऊंचा है, और है भी ऊंचा, क्योंकि बच्चे पर मां-बाप से भी कहीं ज्यादा असर शिक्षक का होता है। शिक्षक बच्चों में जो संस्कार डालता है, उन्हींको वह आमरण पूंजी के रूप में अपने साथ लेकर चलता है, पर वास्तविक क्षेत्र में होता यह है कि शिक्षक को बहुत ही निम्न कोटि का जीव समझा जाता है। मुदर्रिस, शिक्षक, मास्टर कहते ही समाज के एक निम्न सोपान का बोध होता है। उसे वेतन कम मिलता है, उसके जीवन में उन्नति के लिए विशेष गुंजाइश नहीं होती। जो छात्र सफल नहीं होते, वे तो शिक्षकों को कोसते ही हैं, पर जो सफल हो जाते हैं, वे भी अपने भूतपूर्व शिक्षकों को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते।

घर में मास्टर का बुरा हाल रहता है। न पत्नी के प्रति वह न्याय कर पाता है, न बच्चों के प्रति। बच्चे तो पहचानते ही नहीं हैं, क्योंकि वह बड़े तड़के उठ जाता है और बहुत रात को ट्यूशनें समाप्त करके घर में आता है।

मनोजबाबू ने इस उपन्यास में शिक्षक के जीवन पर मानो एक महाकाव्य लिखा है। गद्य में होने पर भी यह एक महाकाव्य ही है। महिम नामक शिक्षक हाड़-मांस का एक इंसान है। वह संग्राम करता है, जान-बूझकर गलत रास्ता नहीं अपनाता, पर धीरे-धीरे जीवन के थपेड़ों के कारण वह समझौता करता जाता है। हर समझौते के पीछे जो संघर्ष है, वह वास्तव में महान है। यह महाकाव्य केवल शिक्षक जीवन पर नहीं है, बल्कि यह भी दिखाता है कि आज के समाज में सातू घोष जैसा बेईमान

पनपता है, जबकि शिक्षक के भूखों मरने की नौबत आ जाती है। पुस्तक में और भी बहुत-सी बातें मिलेंगी, जैसे सारी बातें होते हुए भी यदि महिम के अधिक बच्चे न होते तो उसकी स्त्री न मरती और न उसके होनहार लड़के को मृत माता की इच्छा के विरुद्ध शिक्षक होने की तैयारी ही करनी पड़ती। समाज-निर्माण में शिक्षक का स्थान देखते हुए उसके प्रति समाज का व्यवहार और अच्छा हो, यही लेखक का शायद उद्देश्य है।

—माया गुप्त

मास्टर महिम

यह कोई आज की बात नहीं है।

महिम ने बी.ए. पास किया। हिसाब में आनर्स मिला। महिमा रंजन सेन, बी.ए. (आनर्स)। नाम के साथ अब डिग्री तो कोई लिखता नहीं, क्योंकि उसका रिवाज उठ गया है। पर यूनिवर्सिटी से मिली हुई डिग्री को लिखने का सोलह आने अधिकार उसे है।

वह देहात का लड़का था। आलतापोल गांव में उसका घर था। शहर से स्नातक हुआ था। पास होने की खबर मिलते ही मुहल्ले के कई घरों से चावल और ताड़ की खीर खाने का बुलावा मिलने लगा। मां ने कहा, "इतने दिनों की मेहनत अब कारगर हुई है। अब कोई ऐसा काम-काज करना पड़ेगा, जिससे सब दिन खीर-पूड़ी मिलती रहे। नौकरी ढूंढ़ो बेटा, चाहे वह कैसी हो, घी-दूध तो मिल ही जायगा। माछना गांव के सातू घोष बाप का श्राद्ध-करने घर आये हैं। एक दिन उनके पास चला जा। शायद वह कुछ कर दें। वह कलकत्ता में रहते हैं। कई तरह के उनके रोजगार हैं। उनका बड़े-बड़े लोगों से मेल-जोल है। कमाते भी अच्छा हैं, यह श्राद्ध की तैयारी देखकर ही पता चल जाता है। चार गांवों को बुलाया है। तो क्या वह तुम्हें कहीं लगवा नहीं सकेंगे? जरूर लगवा सकेंगे।"

जब सातू कौड़ी घोष अपने बाप के श्राद्ध-कार्य से छुट्टी पा गए, तब एक दिन महिम माछना गया। उसके पास होने की खबर सुनकर उसकी पीठ जोर से थपथपाकर सातू घोष बोले, "शाबाश, तुम तो हम लोगों के गौरव हो। अव्वल दर्जा आनर्स पाया है। मेरे साथ चलो। मेरे पास रहना। चिन्ता न करो। माजी...बुआजी...दीदी...तुम सब कहां हो? इधर तो आओ। अरे, खुशी, कहां गई? चाय लाओ...वाह, तुम चाय नहीं पीते? अच्छा तो चाय रहने दो। माजी, देखो, इस लड़के ने बी.ए. आनर्स किया है। बड़ा विद्वान है और शकल भी क्या पाई है इसने, जैसे कोई राज़-

कुमार हो। अच्छा, कसरत भी करते हो ? मुगदर, डम्बल, होरीन्जटल बार ये जरूर करते होगे, नहीं तो ऐसी देह कैसे बनती ! हां, मैं अभी दो हफ्ते यहां और रहूंगा। किसीका नौकर थोड़े ही हूं । जाने के पहले तुम्हें खबर कर दूंगा। साथ ही चलेंगे।"

इतना कहकर ही उन्होंने बात समाप्त नहीं कर दी। एक दिन बड़े तड़के टहलते हुए वह आलतापोल पहुंचे। महिम की मां से मिलकर प्रणाम किया, बोले, "चाची, शहर में बड़ा काम रहता है। बहुत दिन बाद पिताजी का श्राद्ध करने घर आया हूं। कहिए, आप लोगों के क्या हाल-चाल हैं ?"

महिम की मां ने पीढ़ा आगे बढ़ा दिया। उनके बैठने पर अपने बेटे की बात चलाई—"बेटा, तुम महिम को साथ ले जा रहे हो, यह सुनकर मैं बेफिकर हो गई। अगर कहीं उसे काम पर हिलगा लो तो बड़ा अच्छा रहे।"

"चाची, मैं परसों जाऊंगा, यही खबर देने आया हूं। सोचा, आदमी क्या भेजूं, मैं ही टहलते-टहलते बता आऊंगा और चाची को प्रणाम भी करता आऊंगा, बातें भी हो जायंगी। आप शायद नहीं जानतीं, चाची, मैं पहले-पहल कलकत्ता में रंगलाल चाचा के पास ठहरा था। मैं तो ठहरा निरा मूरख। चाचा से ही मदद मिली। तभी इतने बड़े शहर में कमा-खा रहा हूं। यह बात भूलती नहीं। वह रसोई बनाते थे। मैं नल से पानी लाता था। मसाला बटता था, रकाबी में हम दोनों खाना खाते थे। यह सब आज की बात थोड़े ही है ! जमाना बीत गया। महिम तो उन दिनों पाठ-शाला जाने लायक भी नहीं था। रंगलाल चाचा ने मुझे लकड़ी की टाल पर लगा दिया। तीन रुपया तनखा और खाना। मैं मूरख तो हूं, पर नाशुकरा नहीं हूं। किसीका उपकार नहीं भूलता। उस लकड़ी के टालवाले के साथ अभी तक प्यार बना है। उन लोगों को मैं अक्सर काम देता रहता हूं।... महिम को मैं लिये जा रहा हूं। अपने पास रखूंगा। मुझे भी एक पढ़े-लिखे अपने आदमी की जरूरत है। काम-धंधा बढ़ता ही जा रहा है। अंग्रेजी में चिट्ठी-पत्री के लिए कोई चाहिए। इस जमाने में धंधे में बहुत तरह की बातें होती हैं। बाहर के आदमी को भेद क्यों बताऊं? चाची, अपना आदमी मिल गया, बड़ा अच्छा हुआ।"

वातों का तूफान खड़ा करके सातू घोष चले गए। उनके जाते ही महिम की विधवा वड़ी वहन सुधा वहां आकर खड़ी हो गई, वोली, "मां, इतना अपनापन इन्होंने किसलिए दिखाया है ? तुम कुछ समझीं ?"

मां ने कहा, "वेटी, उन्होंने अपनी जिन्दगी में दूसरों के लिए वहुत किया था। सातू घोष के लिए भी कम नहीं किया।"

सुधा हँसकर वोली, "उहुं, पुरानी वातों को कौन याद रखता है, मां ! असल वात यह है सातू घोष की वहन सयानी हो गई है। उसे वह 'खुशी' के नाम से पुकारते हैं। उसीको महिम के मत्थे मढ़ना चाहते हैं। पश्चिम वाड़ी की छोटी वहू माछना की ही लड़की है। उसीने यह सब वताया है। लड़की की नाक चपटी है, सूरत भोंड़ी है और रंग सांवला है।"

मां ने सिर हिलाते हुए कहा, "यह नहीं होने का, वेटी। कभी नहीं। एक ही तो मेरे वेटा है। तुम्हारी भी एक ही भावज आयगी। मैं तो खूब सुघड़ वहू लाऊंगी। सातू घोष कुछ भी करे, पर यह नहीं होने का। अच्छा, जाने दो, अभी चुप रहो। शादी-व्याह की वात एकदम आने ही मत दो। अभी तो महिम काम-काज में लग-लगा जाय, फिर देखा जायगा।"

सातू घोप के साथ महिम कलकत्ता चला गया।

महिम के पिता रंगलाल कलकत्ता में रहे थे। शुरू में वहुत भटकने के बाद अन्त में उन्हें हाईकोर्ट के बंगाली जज के मकान में काम मिला था। वहीं वह स्थायी रूप से टिक गए थे। जजसाहव के वहुत-से मकान थे। उनके किराये वसूल करना, मकानों को लेकर होनेवाली मुकदमेवाजी को निपटाना, यही सव उनका मुख्य काम था। ऊपर से घर का भी कुछ काम-काज रहता था। जजसाहव की पत्नी रंगलाल से वहुत स्नेह करती थीं। उनके छोटे-मोटे काम भी वह कर देते थे। जव वह घर लौटते तो उनकी पत्नी के लिए जजसाहव की स्त्री साड़ी, सिन्दूर, आदि खरीदकर भेज देती थीं।

रंगलाल के कोई लड़का नहीं था। वंश-वेल सूख न जाय, यह दुःख उनके मन में हरदम रहता था। काफी उम्र में महिम पैदा हुआ। जव वह छः साल का था, रंगलाल वहुत वीमार पड़ गये और नौकरी छोड़कर

कुमार हो। अच्छा, कसरत भी करते हो ? मुगदर, डम्वल, होरीन्जटल वार ये जरूर करते होगे, नहीं तो ऐसी देह कैसे वनती ! हां, मैं अभी दो हफ्ते यहां और रहूंगा। किसीका नौकर थोड़े ही हूं । जाने के पहले तुम्हें खवर कर दूंगा। साथ ही चलेंगे।"

इतना कहकर ही उन्होंने वात समाप्त नहीं कर दी। एक दिन वड़े तड़के टहलते हुए वह आलतापोल पहुंचे। महिम की मां से मिलकर प्रणाम किया, वोले, "चाची, शहर में वड़ा काम रहता है। वहुत दिन वाद पिताजी का श्राद्ध करने घर आया हूं। कहिए, आप लोगों के क्या हाल-चाल हैं ?"

महिम की मां ने पीढ़ा आगे वढ़ा दिया। उनके वैठने पर अपने वेटे की वात चलाई–"वेटा, तुम महिम को साथ ले जा रहे हो, यह सुनकर मैं वेफिकर हो गई। अगर कहीं उसे काम पर हिलगा लो तो वड़ा अच्छा रहे।"

"चाची, मैं परसों जाऊंगा, यही खवर देने आया हूं। सोचा, आदमी क्या भेजूं, मैं ही टहलते-टहलते वता आऊंगा और चाची को प्रणाम भी करता आऊंगा, वातें भी हो जायंगी। आप शायद नहीं जानतीं, चाची, मैं पहले-पहल कलकत्ता में रंगलाल चाचा के पास ठहरा था। मैं तो ठहरा निरा मूरख। चाचा से ही मदद मिली। तभी इतने वड़े शहर में कमा-खा रहा हूं। यह वात भूलती नहीं। वह रसोई वनाते थे। मैं नल से पानी लाता था। मसाला वटता था, रकावी में हम दोनों खाना खाते थे। यह सव आज की वात थोड़े ही है ! जमाना वीत गया। महिम तो उन दिनों पाठशाला जाने लायक भी नहीं था। रंगलाल चाचा ने मुझे लकड़ी की टाल पर लगा दिया। तीन रुपया तनखा और खाना। मैं मूरख तो हूं, पर नाशुकरा नहीं हूं। किसीका उपकार नहीं भूलता। उस लकड़ी के टालवाले के साथ अभी तक प्यार वना है। उन लोगों को मैं अक्सर काम देता रहता हूं।... महिम को मैं लिये जा रहा हूं। अपने पास रखूंगा। मुझे भी एक पढ़े-लिखे अपने आदमी की जरूरत है। काम-धंधा वढ़ता ही जा रहा है। अंग्रेज़ी में चिट्ठी-पत्री के लिए कोई चाहिए। इस जमाने में धंधे में वहुत तरह की वातें होती हैं। वाहर के आदमी को भेद क्यों वताऊं? चाची, अपना आदमी मिल गया, वड़ा अच्छा हुआ।"

बातों का तूफान खड़ा करके सातू घोष चले गए। उनके जाते ही महिम की विधवा बड़ी बहन सुधा वहां आकर खड़ी हो गई, बोली, "मां, इतना अपनापन इन्होंने किसलिए दिखाया है ? तुम कुछ समझीं ?"

मां ने कहा, "बेटी, उन्होंने अपनी जिन्दगी में दूसरों के लिए बहुत किया था। सातू घोष के लिए भी कम नहीं किया।"

सुधा हँसकर बोली, "उहुं, पुरानी बातों को कौन याद रखता है, मां ! असल बात यह है सातू घोष की बहन सयानी हो गई है। उसे वह 'खुशी' के नाम से पुकारते हैं। उसीको महिम के मत्थे मढ़ना चाहते हैं। पश्चिम बाड़ी की छोटी बहू माछना की ही लड़की है। उसीने यह सब बताया है। लड़की की नाक चपटी है, सूरत भोंडी है और रंग सांवला है।"

मां ने सिर हिलाते हुए कहा, "यह नहीं होने का, बेटी। कभी नहीं। एक ही तो मेरे बेटा है। तुम्हारी भी एक ही भावज आयगी। मैं तो खूब सुघड़ बहू लाऊंगी। सातू घोष कुछ भी करे, पर यह नहीं होने का। अच्छा, जाने दो, अभी चुप रहो। शादी-व्याह की बात एकदम आने ही मत दो। अभी तो महिम काम-काज में लग-लगा जाय, फिर देखा जायगा।"

सातू घोष के साथ महिम कलकत्ता चला गया।

महिम के पिता रंगलाल कलकत्ता में रहे थे। शुरू में बहुत भटकने के बाद अन्त में उन्हें हाईकोर्ट के बंगाली जज के मकान में काम मिला था। वहीं वह स्थायी रूप से टिक गए थे। जजसाहब के बहुत-से मकान थे। उनके किराये वसूल करना, मकानों को लेकर होनेवाली मुकदमेबाजी को निपटाना, यही सब उनका मुख्य काम था। ऊपर से घर का भी कुछ काम-काज रहता था। जजसाहब की पत्नी रंगलाल से बहुत स्नेह करती थीं। उनके छोटे-मोटे काम भी वह कर देते थे। जब वह घर लौटते तो उनकी पत्नी के लिए जजसाहब की स्त्री साड़ी, सिन्दूर, आदि खरीदकर भेज देती थीं।

रंगलाल के कोई लड़का नहीं था। वंश-बेल सूख न जाय, यह दुःख उनके मन में हरदम रहता था। काफी उम्र में महिम पैदा हुआ। जब वह छः साल का था, रंगलाल बहुत बीमार पड़ गये और नौकरी छोड़कर

आलतापोल लौट आये। बुखार, खांसी और खून की उल्टी। किसीने कहा—रक्तपित्त है; किसीने कहा—तपेदिक हो गया। दो साल तक बीमार रहने के बाद नाबालिग बेटा और दो विवाह के योग्य कन्याएं छोड़कर वह चल बसे।

बाद में महिम की मां ने दोनों बेटियों का ब्याह किया। बेटे को बी.ए. तक पढ़ाया। वह बहुत ही बुद्धिमती और हौसलेवाली हैं। तभी तो यह सब कर सकीं।

रंगलाल सेन ने जिन्दगी के बहुत-से साल कलकत्ता में बिताये थे। उन्हींका बी: ए. पास बेटा महिम सियालदह पहुंचकर दंग रह गया। उसकी आंखें खुली-की-खुली रह गई।

सातू घोष ने पूछा, "क्यों, क्या हो गया ?"

वह बोला, "यहां तो इतनी भीड़ है! ये लोग कहां जा रहे हैं ?"

सातकौड़ी अवाक् रह गये। कलकत्ता पहले भले ही न आया हो, पर आखिर वह बी.ए. पास तो है। क्या अबतक उसने किसीसे सुना भी नहीं कि कलकत्ता कैसा है!

हँसी दबाकर उन्होंने कहा, "ये लोग रथ-यात्रा के मेले में जा रहे हैं।"

भोला महिम फिर भी नहीं समझा। हिसाब लगाकर बोला, "अभी रथ-यात्रा कहां से आई ? उसमें तो एक महीना से ऊपर बाकी है।"

सातू घोष ने कहा, "यहां हर रोज रथ-यात्रा का मेला लगा रहता है, बारहो महीने, तीसों दिन।"

वह मन-ही-मन कुछ निराश हो उठे। यह लड़का तो निरा बुद्धू है! इससे व्यापार का काम भला कैसे चलेगा!

सातू घोष मेस में रहते हैं। मेस का भारी-भरकम नाम है—'इम्पीरियल लाज'। सड़क से लगा उनका कमरा है। दरवाजे के पास ही बड़ी-सी तख्ती लगी है—घोष एण्ड कम्पनी, कन्ट्रैक्टर्स, बिल्डर्स, बैंकर्स, जनरल मर्चेन्ट्स, आर्डर सप्लायर्स। फिर छोटे अक्षरों में और भी बहुत-कुछ लिखा है। आदमी के दिमाग़ में जितने व्यापारों की कल्पना हो सकती है, सब-के-सब उस बोर्ड पर लिख दिये गए हैं। सातू का कहना है, "क्यों न लिखूं ? बोर्ड के आकार का हिसाब लगाकर पैसा तो देना ही पड़ता है। कम लिखने

पर सस्ता थोड़ा हो जायगा ?"

छोटे-से दरवाजे से भीतर आंगन में जाकर सातकौड़ी ने अन्दर का ताला खोला। फिर ज़ोर से आवाज लगाई, "महाराज, मेरा एक दोस्त भी आया है—हमेशा टिकनेवाला दोस्त। ज़रा ख्याल रखना।"

कमरे के अन्दर आकर उन्होंने बाहरवाला दरवाजा नहीं खोला। बोले, "रात को तो यह सोने का कमरा रहता है, दिन को दफ्तर बन जाता है। उसी समय वह बाहरवाला दरवाज़ा खोलता हूं। बाहर के लोग आते हैं।"

कुर्सी खिसकाकर उन्होंने एक ओर कर दी तो कुछ जगह निकल आई। जमीन पर चटाई बिछा दी। लकड़ी की अलमारी में से चद्दर-तकिया निकालकर बोले, "और कमरा नहीं मिलता। अगल-बगल दो कमरे मिलें तो काम बने। एक में आफिस रहे, दूसरा सोने के काम आवे। क्या बताऊं, भाई, चार साल से पैर फैलाकर नहीं सोया। कितनी तरह से कुर्सियों को जमाया है, पर इससे ज्यादा जगह नहीं निकलती ! घर जाकर इतने दिन बाद हाथ-पैर फैलाकर सोया, तब जान-में-जान आई !

महिम चकित होकर बोला, "जिधर देखता हूं, मकान-ही-मकान तो हैं। इतनी ईंटें कहां से आईं ? आप फिर भी कह रहे हैं कि कमरे नहीं मिलते !"

"भैया, आदमी भी तो यहां कीड़ों की तरह कुलबुला रहे हैं। कितने सड़क की पटरियों पर पड़े रहते हैं, यह किसी दिन रात को बाहर जाकर देखना। कभी-कभी तो बाहर जाना होता ही रहेगा।"

खाना-पीना खतम हुआ तो पान चबाते हुए सातकौड़ी ने महिम को बगलवाली जगह दिखाकर कहा, "यहीं पर लेट जाओ, मेरी बगल में ! बाप रे, तुम्हारा सीना कितना चौड़ा है। चित्त होकर लेटे तो दो पक्के हाथ जगह तो ले ही लोगे। मुश्किल ही है। मेज को और जरा उधर खिसका दो। काम-काज निबटाकर सोने के लिए समय ही कितना बचता है। कितने तो बैठे-बैठे ही सो लेते हैं। समझ लो ऐसा ही है। फिर मां गंधेश्वरी और बाबा गणेश की कृपा से व्यापार में अगर तरक्की हो जाय तो दोनों बगल तकिया लगाकर गद्दी पर सोवेंगे। तुम्हारी क्या राय है ?"

तख्ती पर बड़े-बड़े कारोबारों के नाम देखकर महिम ने सोचा था कि

वह जाने कितना बड़ा व्यापारी है। सोने का यह प्रबंध देखकर उसका मन कुछ गिर आया। लेटे-लेटे जबतक नींद नहीं आई, व्यापार के बारे में बहुत-सी बातें सुनता रहा। पल्ले में कौड़ी नहीं थी और अनपढ़ होते हुए भी सिर्फ लगन के कारण सातू घोष ने इतना सब बना लिया है। उसकी आकांक्षा बड़ी है, इसीलिए बोर्ड पर चुन-चुनकर व्यापारों का नाम लिखवा दिया है। एक दिन वह ये सब कारोबार करेंगे और बोर्ड पर लिखी हुई बातें सोलहों आने सच होकर रहेंगी। महिम जैसा शिक्षित और घर का ही अपना एक आदमी अब मिल गया है तो सातू घोष निश्चिन्त हो गये हैं। अपने आदमी की आखिर इसीलिए तो जरूरत होती है कि व्यापार का भेद दूसरों पर न खुले। कलकत्ता ठगों की नगरी है। यहां के गाहक झांसेबाज हैं, व्यापारी चलते-पुर्जे हैं, दलाल, महाजन, सभी चार-सौ बीस हैं। भीतर चाहे जो हो, ऊपर से लोग खूब लम्बी-चौड़ी हांकते हैं। हां, उनकी बातों से ढोल के अन्दर की पोल समझ में आ जाती है। कभी-कभी पोल का नतीजा ही साढ़े पन्द्रह आना हो जाता है।

कमरे में घुप अंधेरा था। इसीलिए सातू घोष को दिखाई नहीं पड़ा कि शहर के लोगों का वर्णन सुनकर महिम का मुंह सूखकर छोटा-सा हो गया था। कैसी मुसीबत है! सबके साथ यही धोखा-धड़ी करनी पड़ेगी? दिन-रात झूठ बोलना पड़ेगा!

सातकौड़ी कहते जा रहे थे—"देखो, तुम गांव के हो! शुरू में कुछ अटपटा-सा लगेगा, बाद में सब ठीक हो जायगा। एक दिन मुझसे भी आगे निकल जाओगे, यह मैं कहे देता हूं। शहर के पानी में जादू ही ऐसा है। सुबह मैं तुम्हें काम पर ले चलूंगा।"

सुबह सातू घोष के साथ महिम काम देखने चला। पहले वे लकड़ी की ढंस टाल में गये, जहां सातू घोष ने सबसे पहले नौकरी की थी।

सातू घोष ने वहां जाकर कहा, "बहुत दिन से बाहर गया था। बक्स का काम कितना हुआ है?"

"करीब-करीब तैयार है। इसी महीने में आपको दे दिया जायगा।"

सातू घोष की खूब आवभगत हुई। सिगरेट आई, चाय मंगाई गई,

टाल के दरवान को साथ लेकर सातू घोष पीछे की ओर नीम के पेड़ के नीचे गए। वहां लम्बी पाइप-जैसी चीज पड़ी थी, पर गोल नहीं, चौकोर। पन्द्रह-बीस हाथ लम्बा और चौड़ा भी खूब। कोई आदमी चाहे तो उकड़ू बैठकर पाइप के अन्दर से निकल सकता है। इसीको बक्सा कहा गया था?

हां, उसे बक्सा ही कहा जाता है। सुन्दरवन इलाके के साहब की बस्ती के लिए इसे बनाने का आर्डर मिला है। बांध बनाकर वहां खारा पानी रोक लिया जाता है। बांध में बीच-बीच में ऐसे बक्से रखे जाते हैं। खेत में अगर पानी ज्यादा हो तो उसे निकाल देते हैं, पर नदी का खारा पानी एक बूंद भी खेत के अन्दर नहीं जाने पाता, क्योंकि बक्से का मुंह पानी के दबाव से बन्द हो जाता है।

एकाएक लकड़ी का एक टुकड़ा उठाकर सातकौड़ी ने गरम होकर कहा, "यह क्या? सागवान लगाने के लिए किसने कहा था? सो भी बर्मी सागवान?"

टाल का मालिक वही था शायद। हाथ मलते हुए हो-हो करके हँसने लगा, फिर बोला, "सागवान से बनाने का आर्डर था, इसीलिए सोचा, कम-से-कम बक्से के ढक्कन पर बाहर की ओर दो-चार टुकड़े सागवान के रहना ठीक रहेगा।"

सातकौड़ी बोले, "आपको चिन्ता करने की क्या जरूरत थी? सागवान की लकड़ी से बनाने का आर्डर तो है ही, नहीं तो कसकर दाम कैसे वसूल होंगे। मैंने आपसे जारुल की लकड़ी लगाने के लिए कहा था। उसीको लगाइये। बक्सा तो बांध के नीचे रहेगा, वहां जारुल या सागवान देखने कौन जायगा।"

"पूरा बक्सा तो जारुल की लकड़ी से ही बनाया गया है। मुंह बाहर-बाहर ही रह जाता है, इसीलिए, मैं डरा कि कहीं लकड़ी का भेद साहब को न मालूम हो जाय?"

"डर की कोई बात नहीं है।"—कहते हुए सातू घोष हँस पड़े। "साहब की नज़र न पड़े, इसका इन्तजाम अच्छी तरह हो गया है। कोई उनके दिमाग़ में बैठाये कि क्या जारुल होता है और क्या सागवान, तभी तो वह देख पायंगे! यह काम कोई नहीं करेगा, सबके ओठ सीं दिये गए हैं।

किसीको पन्द्रह, किसीको वीस। जैसा मुंह, वैसा भोग। कीमती लकड़ियों को हटा दीजिये, कहीं भूल से मिस्त्री उन्हें लगा न दे।"....

फिर दोनों चलकर वहां पहुंचे, जहां सातू घोष की देखरेख में एक मकान वन रहा था। ट्राम पर सवार हुए तो मुंह बनाकर सातकौड़ी ने कहा, "इस धक्का-मुक्की में कहीं काम किया जा सकता है? देख लेना, एक दिन फिटन चलवाऊंगा। कोचवान ऐड़ी से घंटी वजाकर भीड़ हटाता जायगा। गाड़ी रुकने पर वर्दी पहने हुए कोचवान दरवाजा खोलेगा। जल्दी-जल्दी काम सीख लो, फिर हम खुद ही ठेका लिया करेंगे।

सातू घोष व्यापार की वातें सुनाने लगे—"यहां बड़ी-बड़ी कम्पनियां हैं। उनके पास काफी रुपये हैं। अच्छे इन्तजाम हैं। वे ही ठेके मार ले जाते हैं। फिर वे दूसरों से सस्ते में काम करा लेते हैं। विना कुछ करे-धरे ही बीच में पैसे बना लेते हैं। पर छोटे ठेकेदार भी काम-काज के झंझट में क्यों फंसने लगे! वे भी तिकड़म कर लेते हैं। हमारी घोष कम्पनी अभी दो सीढ़ी नीचे है। हां, हमारे नीचे कोई नहीं है। रस तो पहले ही लोगों ने निचोड़ लिया है। हमारे लिए अव क्या वचेगा! अपने राम के पास तो कानी कौड़ी भी नहीं हैं। खाली हाथ क्या कौतुक दिखावें। लेकिन यह हालत अव ज्यादा दिन नहीं रहने की, पैसे तो चारों ओर विखरे पड़े हैं। कायदे-कानून सीख लिये। वस, अव तो पैसे बटोरने भर की देर है।"

एक दिन सातू घोष लौटे तो वहुत रात बीत चुकी थी। महिम खा-पीकर लेट गया था। सातकौड़ी ने फुसफुसाकर बुलाया, "क्यों इतनी जल्दी सो गए! उठो। कुछ काम है।"

महिम हड़बड़ाकर उठ वैठा। सातकौड़ी ने कहा, "नये रास्ते पर जो चौमंजिला मकान वन रहा है, वहां चले जाओ। मोड़ पर लारी खड़ी है। ड्राइवर के पास वैठ जाना। यह लो, गोदाम की चावी। तुम्हें कुछ नहीं करना पड़ेगा। लारी में कुली हैं। जो करना होगा, वे ही करेंगे।!"

महिम ने यंत्रवत हाथ वढ़ाकर चावी ले ली और चला गया।... लारी नये रास्ते की ओर चल पड़ी। वह आम रास्ते से नहीं गई, वल्कि अगल-वगल की अंधेरी गलियों में लुकती-छिपती।

एक स्थान पर गाड़ी को रोककर ड्राइवर उतर पड़ा और सावधानी के लिए सड़क पर टहलने लगा। एकाएक वह महिम के पास आकर फुस-फुसाते हुए बोला, "गोदाम खोलिये, जल्दी, बहुत जल्दी।"

गोदाम का दरवाजा गली में ही खुलता था। किवाड़ें खोलते ही सीमेंट की बोरियां झटपट लारी पर रख ली गईं। लोहे की छड़ें रख ली गईं। यह तो साफ चोरी है! महिम की देह थरथराने लगी। आज ही यह सारा माल लाया गया था। दिन में इसी लारी में लाकर और हिसाब लगाकर गोदाम में रखा गया था और अब रात को इसे उड़ाया जा रहा है! सातू घोष ने खुद न आकर उसे भेजा है। पकड़ा जाय तो सीधे जेल में। पढ़-लिख-कर क्या वह सातू घोष के चोरी के कारोबार में शामिल हो गया? ऐसे कामों में आज भले ही बच जांय, पर एक-न-एक दिन तो उसे जेल की रोटी खानी ही पड़ेगी। सातकौड़ी चंट हैं। वह खुद आगे नहीं आते। दूसरे से काम करा लेते हैं। मरे तो दूसरा मरे, वह खुद बचे रहेंगे। बहुत भयंकर आदमी है वह!

करीब तीन घण्टे बाद लारी ने महिम को फिर उसी मोड़ पर उतार दिया। मेस के दरवाजे पर आकर उसने किवाड़ें थपथपाईं। पहले से ही सातकौड़ी ने कुण्डी बजाने के लिए मना कर दिया था। महिम की छाती धक-धक कर रही थी। इतनी देर बाद अब जान में जान आई। कमरे में घुसकर उसने किवाड़ें अन्दर से बंद करके कुण्डी लगा दी, तब कुछ निश्चिन्त हो पाया।

सातकौड़ी ने पूछा, "सब काम ठीक हो गया? माल बर्मन साहब के घर पहुंच गया?"

महिम ने कहा, "बाप-दादा के पुण्य से बच आया हूं।"

सातू घोष हँसकर बोले, "तुम डर रहे हो? गांव के ठहरे न, अच्छी तरह व्यापार में जुट जाओ, फिर यह डर-वर सब खतम हो जायगा।"

महिम ने ज़रा तेज होकर कहा, "व्यापार किसे कहते हैं? यह तो चोरी है। एकदम चोरी है। क्या गांव, क्या शहर, कानून तो दोनों जगह एक ही है। पकड़ा गया तो सीधा जेल जाना पड़ेगा।"

सातू घोष ने कहा, "भले आदमी, कोई नहीं पकड़ सकेगा, यह सोचकर

बेफिकरी से काम करते जाओ। यही तो व्यापार है।"

महिम बोला, "देखिये, आनेस्टी इज द बेस्ट पालिसी। (ईमानदारी ही सबसे अच्छी नीति है।) सच्चाई से काम करें, आपकी तरक्की होगी।"

अवाक् होकर सातू घोष थोड़ी देर महिम को घूरते रहे। फिर बोले, "हो चकी तरक्की ! किताबों में पढ़कर आये हो न यह सब ! अभी तक दिमाग़ में यही सब भरा है। इसे भूल जाओ, नहीं तो जिन्दगी में कुछ नहीं कर सकोगे। ये बातें इम्तहान में लिखने के लिए होती हैं, पर दुनिया के काम-काज में कदम-कदम पर रोड़ा बनेंगी। यह कूड़ा मन से निकाल दो।"

महिम ने बड़ी सरलता से पूछा, "मुझे क्या इसीलिए लाये हो, भैया ?"

"वक्त-बेवक्त करना ही पड़ता है, भाई। ठेके के काम में नया हूं। जहां भी पानी गिरेगा, वहीं छाता फैला देना पड़ेगा। अभी तो हर किस्म का काम करना पड़ेगा। तुम यह करो, मैं वह करूं, इस तरह काम बांटने से नहीं चलेगा। एक बार जमा लेने दो, फिर कुर्सी-मेज सजाकर फाइलें लेकर बैठे रहना। भाव-ताव ठीक करके वर्मन से पेशगी ले आया हूं। पांच टन मिट्टी और बारह हण्डर लोहे की छड़ें रात को ही पहुंच जायंगी। सुबह यही माल वर्मन किसी दूसरे को दे देगा।"...

फिर मुस्कराकर बोले, "शायद हम लोगों के ही पास आजाय। सुबह हमारे ही गोदाम में फिर पहुंच जाय।

"सुनिए, मुझे बड़ा डर लग रहा था।"

सातू घोष ने उदारता दिखाकर कहा, "पहले-पहल तो ऐसा होता ही है। क्या हम लोगों को नहीं होता था ? पर जैसी मूरत, वैसा अच्छत। कच्चा कलेजा होने से कहीं काम बनता है ? दिल को मजबूत करो।"

"आप नहीं जानते, भैया! दो सिपाही उसी रास्ते पर पहरा दे रहे थे।"

"बहुत-से मकान बन रहे हैं न वहां। अफवाह फैली है कि रात को गोदाम से माल चोरी हो जाता है। मकान-मालिक बहुत शक्की मिजाज का है। पुलिस में कहकर पहरे का इंतजाम करवा लिया। सिपाही होने से कहीं चोरी बन्द हो जायगी ?"

महिम ने कहा, "टहलते-टहलते सिपाही दूसरी ओर चले गए, तभी तो यह सब हो पाया। ड्राइवर ने आकर कहा, 'यही मौका है।'..."

"वे दूसरी ओर चले गए ? जाते क्यों न ?"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि अगर वे न जाते तो तुम अपना काम कैसे करते वे समझदार हैं, मौका देखकर सरक गये।"

महिम ने सोचा—बात तो कुछ ऐसी ही है, फिर पूछा, "सीमेंट गायब हो गया है तो दीवार कैसे खड़ी होगी ?"

"जो बचा है, उसीसे काम चलाया जायगा। तुम्हें बताये दे रहा हूं कल से बालू-सीमेंट दस-एक के हिसाब से होगा।"

"हिसाब तो तीन-एक का होना चाहिए। काम ऐसे ही हो रहा था। मकान-मालिक की ओर से एक ओवरसियर भर ही था, पर अब उसके ऊपर भी पासशुदा इंजीनियर रख दिया गया है।"

सातू घोष ने नाराज़गी से मुंह बनाया, बोले, "यही तो आफत है। हम लोगों का खर्चा बढ़ता ही जा रहा है। ओवरसियर को पच्चीस रुपये, तो इंजीनियर को सौ देने होंगे। इसके मानी हुए कि और माल हटाना पड़ेगा। एक-पर-एक आदमी बढ़ाता जा रहा है, बाद में तो खाली बालू खपाने पर भी कुछ नहीं बचेगा।"

दो महीने बीत गए। महिम को अब सारी चीज बहुत अखरने लगी। क्या इसी सबके लिए उसने पढ़ाई-लिखाई की थी ? चारूदादा कालेज के छात्र थे। बहुत दिनों तक छात्र बने रहे। उन दिनों महिम और उसके साथी गांव के ही स्कूल में पढ़ते थे। गरमी और दशहरे की छुट्टी में चारूदादा बाहर से अलतापोल आते थे। तो लगता था कि उनके आने के साथ ही गांव भर में ज्ञान का प्रकाश फैल जाता था। दोपहर को चारूदादा चुपके-चुपके लड़कों को इकट्ठा करके पढ़ाया करते थे। देश-विदेश के स्वतंत्र होने का इतिहास और स्वामी विवेकानन्द की किताबें पढ़ी जाती थीं। उनपर चर्चाएं होती थीं। चरित्र-गठन, साधुता, सच्चाई और आत्मत्यागी बनने की बातें होती थीं। देश के लिए प्राण न्यौछावर करने का संकल्प किया जाता था। शरीर-गठन के लिए व्यायाम भी किया जाता था। कलकत्ता आने तक महिम की ये आदतें बनी रहीं। तभी तो उसकी ऐसी कसी देह

है। चारूदादा जो मुंह से बोलते थे वह उन्होंने अपनी जिन्दगी में भी कर दिखाया। गोलियों के सामने ही प्राण दे दिये। महिम तो क्षुद्र है। इतना तो शायद न कर पावे, पर सातू घोष की संगत में उसकी सांस घुटती-सी लगती थी। यह तो पाप-जाल है। यहां तो जो रक्षक हैं वे ही भक्षक भी हैं। महिम ने लक्ष्य किया कि अधिकारी ठीक काम के समय इधर-उधर हो जाते हैं। उनके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट रहती है। इस गुट में एक भी आदमी साफ दिल का नहीं है। ऊपर से नीचे तक एक भी भला आदमी नहीं है। महिम ने कहा, "भैया! मुझे छुट्टी दीजिये। मुझसे अब यह सब नहीं होगा।"

सातू घोष ने हँसकर तसल्ली देते हुए कहा, "होगा और होगा। घबराते क्यों हो? दो महीने में नहीं हुआ तो क्या हुआ! दो साल लग जाने दो।'

"फिर भी नहीं होगा। आप दूसरा आदमी खोजें।"

"ऐसा आदमी कहां मिलेगा! ये भेद अगर खुल जायं, तो सत्यानाश हो जायगा। तुम्हारी खुशामद आखिर क्यों कर रहा हूं? क्या बात है? खुश नहीं हो? तनख्वा बढ़वाना चाहते हो?"

"जब काम ही नहीं करना है तो फिर तनख्वा की बात कहां उठती है?"

सातू घोष ने उदारता से कहा, "आगे के महीने से पांच रुपये तनख्वा बढ़ाये दे रहा हूं। तनख्वा तो है ही, मन लगाकर काम करोगे, तो कारोबार में एक आने का हिस्सा भी दूंगा। ठंडे दिमाग से सोच-विचार करलो। देख रहे हो, कारोबार बढ़ता ही जा रहा है। एक आने के हिस्से से ही कम-से-कम पांच हज़ार की रकम तुम्हारी बन जायगी।"

महिम चुप रहा।

"क्या सोचा?"

"मुझे माफ कर दीजिये। रुपये के लिए इन्सानियत को नहीं बेच सकता।"

यह बहुत दिन पहले की बात है। महिम तब नौजवान था। मन की साफ-साफ कहकर उसे बड़ी शान्ति मिली थी।

उसकी बातें सुनकर सातकौड़ी खो-से गये। सिर हिलाकर सिर्फ इतना

ही कहा—"हूं, लगता है, कोई पीछे पड़ गया है। मैं पूछता हूं, आखिर इन्सानियत बचाकर क्या काम करोगे ? मैं भी तो सुनूं !"

"अभी कुछ तय नहीं किया। रमेन हमारा सहपाठी था। अब कार्पोरेशन में है। उसके ससुर साहब लाइसेन्स आफिसर हैं। कोशिश करने पर शायद लाइसेन्स इन्स्पेक्टर बन सकूंगा।"

सातू घोष ने तारीफ की, "हां, यह तो अच्छी नौकरी है। कार्पोरेशन का ऐसा ही नियम है। नौकरी देकर छोड़ दिया। अपना बनाओ-खाओ। पर उसमें तो तुम्हारी इन्सानियत की और मिट्टी पलीद होगी। दूकानदार को फंसाओगे, तभी तो वह पैसे निकालेगा ? जब कुछ बोरियां सीमेंट लारी में रखवाने से ही तुम्हारे सिर में चक्कर आता है तो फिर दिमाग ठंडा रखकर दूकानदारों को जाल में कैसे फंसाओगे ?"

फिर व्यंग से बोले, "नहीं, वह तुम्हारे बस का नहीं है। भूखों मरोगे। तुम सिर्फ स्कूल-मास्टरी के लायक हो। बस, आदमी बनाने का व्रत लोगे। इस काम में बारह साल में आदमी खुद गधा बन जाता है, पर तुम्हारे लिए इतने दिन की जरूरत नहीं है। तुम आधे तो पहले से ही हो, नहीं तो लगी-लगाई रोजी को लात मारते ?"

बाद में महिम को ये बातें याद आईं तो सचमुच उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। सातूघोष की बातें ब्रह्मवाक्य सिद्ध हुईं। सातू घोष के भी जैसे तीसरा नेत्र हो। दो-चार साल में ही कारोबार खूब जमा लिया। राई से पहाड़ बन गए। महिमा रंजन सेन बी. ए. ने आदमी बनाने का व्रत लिया, वह भारती इन्स्टीट्यूशन में शिक्षक बना।

प्रभातकुमार पालित स्वनामधन्य व्यक्ति हैं। विद्वान हैं, सरकारी वकील हैं, वकालत भी अच्छी चलती है। इसके अतिरिक्त बहुत बड़े रईस घराने के हैं और जमींदारी की आमदनी भी कम नहीं है। वकालत के साथ-

साथ इन दिनों समाज-सेवा भी करते हैं। अखबारों में हमेशा नाम आता रहता है। बहुत दिन हुए, तब वह भी एक बालक थे और शायद उन दिनों महिम के स्वर्गीय पिता रंगलाल ने उन्हें कुछ दिन अंग्रेजी की वर्णमाला पढ़ाई थी। महिम ने ये बातें मां से सुनी थीं। मां बड़े गौरव के साथ कहा करती थीं, "प्रभात पालित का नाम सुना है न ? 'वह' उनके मास्टर थे। पता नहीं, कितने दिन पढ़ाया था।" जाने किस ओहदे के मास्टर थें, मां यह ठीक-ठीक नहीं बता पाईं।

सातू घोष की नौकरी छोड़कर महिम उसी मेस का मेम्बर बन गया और सातू घोष ने इस बीच दो कमरे खोजकर घोष एण्ड कम्पनी को मेस से हटा लिया। रमेन और उसके अफसर ससुरजी के पीछे-पीछे घूमने से कुछ काम नहीं बना। कलकत्ता शहर जैसे उसके लिए लहलहाते समुद्र-सा बन गया। इस समुद्र में प्रभात पालित दूर से दिखाई पड़ते प्रकाश-स्तम्भ जैसे प्रतीत हुए। उन्हींके सहारे शायद कुछ हो जाय !

महिम बड़ी हिम्मत करके एक दिन पालित महोदय के मकान के लम्बे-चौड़े अहाते के भीतर घुसा और ड्राइंग रूम के बाहर बेंच पर बैठा रहा। कई दिन ऐसे ही बैठना पड़ा। एक दिन पांचूलाल बाबू से परिचय हुआ। पांचूबाबू घनी दाढ़ीवाले काले चेहरे के आदमी हैं। कोर्ट कमिश्नर के दफ्तर में काम करते हैं। खाली समय में पालित महाशय के मकान में पड़े रहते हैं। खाते-पीते भी वहीं हैं। हर शनिवार को गांव जाकर बीवी-बच्चों को देख आते हैं। पालित ने ही कमिश्नरसाहब से कहकर उन्हें यह नौकरी दिला दी थी। वह पालित-परिवार के शुभाकांक्षी हैं। बहुत दूर का कोई रिश्ता भी है शायद। प्रभातबाबू को तो सांस लेने की भी फुरसत नहीं मिलती, इसलिए घर की देख-रेख का बोझ पांचूलाल पर ही है। देख-रेख क्या, औरत-मर्द, बूढ़े-बच्चे सबको बातों से खुश रखना, यही उनका काम था।

पांचूलाल कहीं जा रहे थे। मुड़कर महिम के पास आ खड़े हुए। पूछा, "कहो भई तुम्हारा क्या काम है ? कई दिन से देख रहा हूं। रोज आते हो।"

महिम ने अपना परिचय दिया, फिर बोला, "मैं जब आठ साल का

था, तभी पिताजी चल बसे।" फिर अपने पिताजी और पालितबाबू का सम्बन्ध बताकर कहा, "पता नहीं सच है कि झूठ। पर सच न हो तो भी मुझे कोई काम दिला दें, नहीं तो शहर में नहीं रह सकूंगा। गांव भी लौटूं तो खाऊंगा क्या? मेरी पढ़ाई और बहन के विवाह से बड़ा कर्ज हो गया है।"

उसकी बातचीत और सरलता का पांचूलाल पर बड़ा असर पड़ा। उसपर दया आई। वह प्रभातबाबू के पास जाकर बोले, "रंगलाल सेन नाम के किसी आदमी के पास आप कभी पढ़े थे?"

"रंगलाल?... हां-हां।"...प्रभातबाबू को एकदम याद आ गया। उनका नाम रंगलाल ही तो था। बोले "हां, तो उनका लड़का क्या चाहता है?... अच्छा, ठीक है। अभी तो मुकदमे में बहुत घिरा हूं। उसे सोमवार, नहीं... मंगलवार, नहीं... बुधवार को आने के लिए कह दीजिये।"

महिम बुधवार को आया। सवेरे से ही आकर बैठ गया। घड़ी में जब ठीक आठ बजे तो उसे मालूम हुआ कि साहब कमरे में आ गये। फिर कितने ही आदमी आये, उनसे भेंट करने भीतर गये, बातचीत खतम होने पर लौट भी गये, पर महिम बैठा ही रहा। सबसे पहले उसने ही तो पुर्जा भेजा था, साहब के नीचे उतरने के बहुत पहले ही। प्रति क्षण महिम को ऐसा लगता, अब शायद बैरा आयगा। कहेगा—साहब बुला रहे हैं। टुन-टन... घड़ी में साढ़े नौ बजे। प्रभातबाबू फिर ऊपर चले गए। बैठे-ही-बैठे महिम को पता लग गया। बैरा आकर बोला, "बाबूजी, आप जाइये, आज साहब से भेंट नहीं हो सकेगी।"

दूसरे दिन महिम फिर आया और वैसे ही बैठा रहा। पांचूलाल ने उसे देखा तो बोले, "ओह, भेंट नहीं हुई? इन दिनों वह बहुत व्यस्त हैं! अच्छा, मैं एक बार फिर उन्हें याद दिलाऊंगा।"

कई दिन लगातार ऐसा ही चलता रहा। महिम आता, बैठता, और फिर बिना मुलाकात हुए चला जाता। एक दिन उसने बैरे की बात नहीं मानी। बैरे ने जाने के लिए कहा, पर वह ज्यों-का-त्यों बैठा रहा। प्रभातबाबू की मोटर जा रही थी। पीछे की सीट पर वह बैठे थे। बगल में धोती-कुर्ता पहने एक और सज्जन थे। आगे ड्राइवर की

बगल में भी वैसे ही एक व्यक्ति थे। दरबान फाटक खोलने लगा, तभी महिम ने दौड़कर मोटर के अन्दर झांका।

पर यह क्या ? प्रभातबाबू की बगल और ड्राइवर की बगलवाले आदमियों ने कुर्ते की जेब से रिवाल्वर निकालकर महिम की ओर तान दिया। लगा कि अब गोली चली। इन दिनों अदालत में बहुत-से क्रान्तिकारी मुकदमे चल रहे थे। कुछ मुकदमों का फैसला भी हो चुका था। प्रभात पालित सरकारी वकील हैं। एक आदमी फांसी पा गया। कइयों को काला पानी की सजा मिली। सरकारी वकील आशु विश्वास को अदालत में ही गोली मार दी गई थी। तबसे सरकार की ओर से काफी इन्तजाम था। अब तो ये लोग बहुत संभलकर घूमते-फिरते हैं। मामूली पोशाक में दो हथियारबंद सिपाही हमेशा आगे-पीछे मौजूद रहते हैं।

महिम का काम तमाम हो चुका होता यदि प्रभातबाबू ने 'उहुं' कहकर दोनों को रोक न दिया होता। दोनों के रिवाल्वर फिर कुर्ते की जेब में पहुंच गए, ठीक वैसे ही जैसे कीड़े सीपी की खोल में समा जाते हैं। क्षण-भर में उन दोनों ने फिर सज्जनता का बाना धारण कर लिया।

प्रभातबाबू ने देखा, यह लड़का कई दिनों से आ-आकर बैठा रहता है। पांचूलाल से सुन-सुनकर ही उन्होंने महिम को पहचान भी लिया था। उन्होंने कहा, "तुम रंगलालबाबू के लड़के हो न ? नौकरी का रंग-ढंग तो देख ही रहे हो। अच्छा, सोमवार को आना। शायद तुम्हारे लिए कुछ कर सकूं।"

उन्होंने खुद आने का दिन बता दिया। तो महिम का नाम प्रभातबाबू को याद है ? हाय, बेचारे की जान अभी तो चली ही गई होती। बाल-बाल बच गया।

प्रभातबाबू ने सोचा, इस लड़के के लिए कुछ किया जा सकेगा ? वह भारती इन्स्टीट्यूशन के सभापति हैं। हेडमास्टर के नाम एक चिट्ठी लिख दें तो ? बहुत बड़ा स्कूल है। कलकत्ता के इने-गिने स्कूलों में है।

मोटर चलने ही वाली थी कि तभी उन्होंने फिर झांककर महिम को बुलाकर कहा, "सोमवार की शाम को आजाना।"

पांचूलाल जिस कमरे में रहते थे, महिम वहीं चला गया। पांचूलाल

ने सब-कुछ सुन लिया था। धमकाकर कहा, "बिल्कुल गंवार हो! कहीं इस तरह बड़े आदमियों से मिला जाता है?"

महिम समझ गया कि यह मूर्खता ही हुई थी। लज्जित होकर उसने सिर झुका लिया।

कुछ नरम होकर पांचूलाल ने पूछा, "उन्होंने क्या कहा?"

"सोमवार की शाम को बुलाया है। कुछ करेंगे।"

पांचूलाल ने कहा, "तब तो तुमने दौड़कर अच्छा ही किया। कुछ करेंगे, यानी तुम्हारा काम बन ही गया। जाओ, अब चैन की नींद सोओ। सरकार उनकी बड़ी खातिर करती है। एक शब्द कहने से ही तुम्हें राइटर्स बिल्डिंग में कुर्सी पर बैठा दिया जायगा, या किसी और जगह भी लग सकते हो। बहुत दूर तक उनकी पहुंच है। वह झूठी तसल्ली देनेवाले आदमी नहीं हैं।"

पांचूलाल के पांच मुंह होते तो भी वह प्रभातबाबू का गुण गाते न अघाते। कहते गए कि प्रभातबाबू किस पाए के आदमी हैं, कितने बड़े-बड़े लोगों के साथ उनका उठना-बैठना है। फिर भी देखो, बचपन में किसने पढ़ाया था, यह भी उन्हें याद है। वह पुराने मास्टर पर कितनी श्रद्धा रखते हैं? बिना गुण के भला कोई इतना बड़ा हो सकता है!

महिम ने सिर हिलाया, "हां।" पर प्रभात पालित बहुत बदनाम आदमी हैं। अंग्रेजों के तलुए चाटते हैं। देश-भक्तों के जानी दुश्मन हैं। महिम जिन दिनों कालेज में पढ़ता था, लड़के प्रभात पालित के नाम पर थूकते थे। प्रभात पालित अखबारों में निबन्ध लिख-लिखकर क्रान्तिकारियों को गाली देते थे। उनका कहना था—वे ही अंग्रेजों को चिढ़ा-चिढ़ाकर देश का सत्यानाश कर रहे हैं। अंग्रेजों में बड़े गुण हैं। लोगों के धन और प्राण उन्हींके शासन में निरापद हैं। दुर्भाग्य से कहीं वे लोग चले जायं तो ताश के महल की तरह शासन-व्यवस्था मिट्टी में मिल जायगी।

इसी प्रसंग में महिम को सूर्यकान्त मास्टर की याद आई। महिम उनका प्रिय छात्र था। आलतापोल से करीब तीन कोस दूर घोषगांति गांव में उनका घर था। जिन दिनों वह आलतापोल के स्कूल में पढ़ाते थे, सूर्यकान्त-बाबू शनिवार को घर आते और सोमवार को लौटते थे। आज उनकी बड़ी

दुर्गति हो रही है। घर-गृहस्थी के नाम पर केवल दो ही बेटियां थीं—रानी और लीला। रानी की कोई तुलना नहीं की जा सकती। पिता को पलकों पर बैठाये रहती। सूर्यकांतबाबू उसीके पास रहते थे। दुर्भाग्य से वही रानी मर गई। दामाद ने दूसरी शादी कर ली। तब सूर्यकान्तबाबू छोटी बेटी लीला की ससुराल जाकर रहने लगे। लीला की शादी थोड़े ही दिन पहले हुई थी। दामाद कुछ करता-धरता नहीं था। सास नाराज़ रहती थी। समधी के साथ अच्छी तरह बोलती भी नहीं, पर उपाय भी क्या है? बुढ़ापे में एक सहारा तो चाहिए ही। जिन्दगी-भर जो थोड़ा-बहुत जोड़ रखा था, उसीसे सबको खुश रखने की कोशिश करते हैं और चुपचाप बाहर के कमरे में पड़े रहते हैं।

उन दिनों कक्षा में एक पुस्तक पढ़ाई जाती थी—'इंग्लैण्ड्स वर्क्स इन इण्डिया'। विश्वविद्यालय का प्रकाशन था। इतिहास के अध्यापक सूर्यकान्त वह किताब पढ़ाते थे। प्रभात पालित जैसा कहते हैं, ठीक वैसा ही उस पुस्तक में लिखा था, जैसे अंग्रेजों के गुणों की फहरिस्त हो। उसी किताब का एक अध्याय अच्छी तरह पढ़ाकर सूर्यकान्तबाबू उसे संक्षेप में लिखवा देते थे और कहते थे, "लड़को, इसे अच्छी तरह रट लो। खूब नम्बर मिलेंगे, पर इसका एक अक्षर भी सच मत मानना। सारी बातें झूठी हैं।"

प्रभात बिल्कुल उल्टे हैं। वह केवल मुंह से ही नहीं कहते, विश्वास भी करते हैं। ऐसा न होता तो वह अखबारों के लिए लेख क्यों लिखते? वकालत इतनी अच्छी चलने पर भी सरकारी गुलाम बनकर और कमर कसकर क्रान्तिकारियों के पीछे क्यों पड़ते? एक-एक मुकदमे के लिए इतनी मेहनत करते हैं, जैसे एक आसामी फांसी पा जाय तो उन्हें ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होगी। इसीलिए जनता उनके सम्बन्ध में जिस भाषा का प्रयोग करती है, उसे सुनकर कान में उंगली लगा लेनी पड़ती है। पर आज महिम ने उनका एक नया पहलू भी देख लिया। दुर्लभ शक्तिशाली पुरुष अपने ज्ञान, विश्वास और अपने विचारों पर बहुत ही आस्थावान हैं। वे जिसपर विश्वास करते हैं, प्रति क्षण अपने जीवन को संकट में डालकर भी जोरदार आवाज में दस लोगों के बीच उसे कहने से नहीं चूकते।

महिम ने कहा, "उन्होंने मुझे सोमवार की शाम को आने के लिए कहा है।"

पांचूलाल ने कहा, "तो आ जाना।"

"आने का दिन एक दिन पहले ही नहीं किया जा सकता ? अगर ऐसा हो तो बड़ी सुविधा हो। एक ट्यूशन मिल गया है, टाकीगंज में। जहां से नया रास्ता बन रहा है, वहीं पर। बड़ी दूर पड़ता है। अभी नया-नया है, इसीलिए नागा करने में डर लगता है। ट्यूशन अगर छूट गया तो मेस का खर्च भी नहीं चल पायगा। रविवार को कोई असुविधा न होगी।"

पांचूलाल बोले, "रविवार को कैसे आओगे ? उस दिन तो साहब घर पर भी नहीं रहते।"

"तो फिर शनिवार की शाम को आ जाऊं ? शनिवार को स्कूल में दो बजे छुट्टी हो जाती है। बच्चे को पहले से ही कह रखूंगा कि उस दिन दोपहर में पढ़ाऊंगा। शायद मान ले।"

सतीश टाइपिस्ट है। पांचूलाल ने एक चिट्ठी टाइप करने के लिए दी थी। वही लेकर आया। बोला, "शनिवार को कचहरी के बाद साहब बाहर चले जाते हैं। फिर सोमवार को सवेरे ही लौटते हैं। आते ही कामकाज में जुट जाते हैं।"

बड़े आदमियों की बातों में टांग अड़ाना ठीक नहीं, पर महिम गंवार जो था, बिना सोचे-समझे झट-से पूछ बैठा, "कहां जाते हैं वह ?"

प्रश्न सतीश से किया था, पर वह सुनी-अनसुनी कर गया। टाइप किया हुआ पत्र पांचूलाल के हाथ में देकर एक अर्थपूर्ण मुस्कान बिखराकर वह बाहर चला गया।

पांचूलाल ने गुस्से में कहा, "तुम्हें इससे क्या मतलब? तुमको अपने काम से काम रखना है।...अगर सोमवार की शाम को न आसको, तो मत आना। कोई जबर्दस्ती नहीं है।"

महिम ने झेंपकर कहा, "जी नहीं, जरूर आऊंगा।" मैं जिन्दगी-भर आप लोगों का उपकार नहीं भूलूंगा:"

आखिर किस्मत खुल ही गई। सोमवार की सांझ को महिम और

सतीश को बुलाकर प्रभातबाबू बोले, "भारती इन्स्टीट्यूशन जानते हो ? वहां के हैडमास्टर को चिट्ठी लिख देता हूं। अगर किसी मास्टर की जगह खाली होगी तो दो-चार दिन तुम्हारा काम देखेंगे। देखो, शिक्षकवृत्ति से बढ़कर और कोई पुण्य कार्य नहीं है। वही देश की सेवा भी है। हमारे देश के भावी नागरिकों को ठीक-ठीक ढांचे में ढालने से बढ़कर जिम्मेदारी का काम और क्या होगा ? जज हो या मजिस्ट्रेट, मिनिस्टर हो या गवर्नर शिक्षक जैसा सम्मानित कोई नहीं होता। गोखले मास्टर थे। विद्यासागर भी संस्कृत कालेज के मास्टर थे। मैं भी कभी-कभी अपने बच्चों को पढ़ाता हूं। मुझे तो बहुत अच्छा लगता है, पर करूं क्या, समय बिल्कुल नहीं मिलता।"

उस दिन प्रभातबाबू का मिजाज बहुत खुश था। भूमिका खतम करके सतीश से बोले, "शुरू करो।"

वह बोले जा रहे हैं, सतीश नोटबुक पर शार्टहैंड में लिखता जा रहा है। प्रभातबाबू बोले, "टाइप करके ले आओ। दस्तखत कर दूंगा।"—फिर महिम की ओर देखकर बोले, "यह चिट्ठी लेकर कल भारती इन्स्टीट्यूशन चले जाना। देखो, क्या होता है ?"

फिर उन्होंने मुकदमे की फाइलों में आंख गड़ा ली, जैसे महिम से कहते हों, तुम्हारा काम खतम, बाहर जाओ।

चिट्ठी लेकर जाते समय पांचूलाल से भेंट हो गई। वह बोले, "वाह, चिट्ठी मुझे नहीं दिखाई।"

लिफाफे में से चिट्ठी निकालकर उन्होंने सरसरी निगाह से देखकर सांस छोड़ते हुए कहा, "हां, किस्मत अच्छी है। देखो न, साहब कैसे आदमी हैं। एक बात में नौकरी !"

महिम ने उदासी से कहा "अभी नौकरी मिली कहां है ? उन्हें मास्टर की जरूरत हो, तब न ! अभी तो मेरा काम देखने-भर के लिए कहा है, सो भी दो-चार दिन।"

पांचूबाबू ठहाका मारकर हँसे। फिर बोले, "चिट्ठी ले जाकर देखो तो सही। खुद प्रेसीडेन्ट की चिट्ठी है, मास्टर की जरूरत कैसे नहीं होगी ? तुम्हारा काम देखने के लिए कहा है, पर वहां से खबर आयगी कि ऐसा मास्टर कभी देखने में नहीं आया। दो-चार दिन क्या, जबतक सूरज-

चांद रहेंगे, तबतक रखेंगे। मैं पूछता हूं, क्या हैडमास्टर को अपनी तरक्की की चिन्ता नहीं है ? वह भी तो चाहते हैं कि दस-बीस रुपये और मिलें। बूढ़े हैं। कहीं काम से न हटा दिये जायं ! बेखटके चले जाओ, देखो, क्या होता है।"

रात को बहुत देर तक महिम को नींद नहीं आई। सातू घोष चाहे जो कहें, पर उस नौकरी को करके वह बहुत बड़ा काम करेगा। महिम को चारूदादा की याद आई। सर्वत्यागी युवक चारूदादा को लक्ष्य करके उसने मन-ही-मन कहा, "मैं बड़ा गरीब हूं। मां बहुत-सा कर्ज सिर पर लिये मेरी ओर देख रही है। मां के लिए मैं अन्धे की लकड़ी हूं। मैं तुम्हारी राह पर नहीं चल पाया, पर तुम्हारे जैसे अगर दस जने उठ गए हों, तो देखना, मैं वैसे ही दोसौ जने तैयार करूंगा, यही मेरा व्रत है।" चारूदादा भी सूर्यबाबू के पास पढ़े थे। बड़े यत्न से पढ़ाने के बाद फट-से किताब बन्द करके कहते थे, "लड़को, मैंने जो कुछ पढ़ाया, वह सब झूठ है।" सूर्यबाबू स्कूल मास्टर हैं। अगर स्कूल में ऐसे मास्टर रहें, तो अंग्रेज खुफिया लगाकर और पुलिस से विद्यार्थियों को पिटवाकर क्या कर सकेंगे। चाहें तो स्कूल-कालेज बन्द कर दें, चाहें तो मास्टर-प्रोफेसर को जेल में डाल दें।

३

भारती इन्स्टीट्यूशन की जड़ें मजबूत हैं। वह काफी पुराना भी है। पिछले साल स्वर्ण जयन्ती मनाई गई थी। जब स्कूल बना था, तब उसके चारों ओर परती, जंगल और खुले नाले थे। आस-पास आबादी ही क्या थी ! इसीलिए तो इतनी बड़ी इमारत और इतनी ज्यादा जगह-जमीन है। आज के जमाने में इतनी जमीन खरीदने के लिए बड़ी हिम्मत चाहिए। ऐसे भी परिवार हैं, जिनके बच्चे तीन-चार पुश्तों से भारती स्कूल में ही पढ़ते आ रहे हैं—दादा-बाप-बेटा। शायद किसी-किसीके परदादा भी

सी स्कूल में पढ़े हों। नामी-गरामी लोग बचपन में यहीं पढ़े हैं। मास्टर ोग इन्हीं कीर्तिवान छात्रों का नाम लेकर आस-पास के स्कूलों को हेच ताते हैं। स्कूल की सालाना रिपोर्ट में बीस-पच्चीस साल से एक स्वर से ही बातें दुहराई जाती हैं।

प्रभात पालित की चिट्ठी लेकर महिम स्कूल आया। बहुत जल्दी हुंच गया। स्कूल खुलने में अभी देर थी। बाप रे, कितने लड़के आते ही ा रहे हैं! पहली मंजिल...दूसरी मंजिल...तीसरी मंज़िल, सब छात्रों े भर गई। फिर भी लड़के आते जा रहे हैं। सामने एक छोटा-सा और ीछे खूब बड़ा-सा अहाता है। शायद ही कोई बच्चा ऐसा हो, जो समय को योंही जाने दे। अपनी सीट पर किताब रखते ही बाहर निकल आता है। जेब से गोलियां, गेंदें निकल आती हैं। जिनके पास खेलने का कोई सामान न हो वे चोर-पुलिस खेलते हैं। एक खेल और भी है। नल के मुंह को उंगली से दबाकर पानी का फव्वारा छोड़ना। एक तरफ़ लंगड़ी खेल हो रहा था। पर जब नल की फुहारों से वह लड़का भीग गया तो खेल छोड़कर घूंसा तानकर दौड़ा।

एकाएक जैसे मन्त्रबल से सब चुप हो गये। सामने के छोटेवाले अहाते में तो चूं की आवाज तक नहीं रह गई। सब लड़के एकदम सभ्य बनकर तेज़ी से अपनी-अपनी कक्षा में घुस गये। आंख-मुंह से इशारे हुए, दबी फुसफुसाहटें हुईं—"हैडमास्टर साहब, हैडमास्टर साहब।"

गम्भीर चाल से चलते हुए हैडमास्टर साहब दि. ध. दा. भीतर घुसे। उनका पूरा नाम है दिव्येन्दु धर दास। गोरा-लम्बा चेहरा, चौड़ा माथा, गंजा सिर, यानी हजारों के बीच पहचाने जा सकते हैं। बन्द गले का काला कोट, सूती चद्दर, पैरों में स्प्रिंगदार चीनी जूते। वह जैसे-जैसे आगे बढ़ते जा रहे हैं, सन्नाटा छाता जा रहा है। खट्-खट् वह सीढ़ी चढ़े। लाइब्रेरी के कमरे में कुछ अध्यापक जोर-जोर से वाद-विवाद और विनोद कर रहे थे। एकाध नींद ले रहे थे। दरवाज़े के बाहर ही हैडमास्टर को देखकर सब सावधान हो गये। मुंदी आंखें खुल गईं। दुखीराम चपरासी ने दौड़कर हैडमास्टर साहब के हाथ से छाता ले लिया। उनका अपना अलग कमरा था। उसे खोलकर बैरा ने पंखे की चाल बढ़ा दी।

जैसे भेड़ों की तरह वाड़े में रहते हैं। किसी समय स्कूल जाकर तो देखिये। कमेटी भी खुश है, खासकर सेक्रेटरी साहव। सेक्रेटरी शहद की तरह मीठी वोली वोलते हैं। कभी जरूरत पड़ने पर मास्टरों के आने पर वड़ी खातिर से वैठाते हैं। कहते हैं—"स्कूल तो आप ही लोगों का है। अच्छे अध्यापक न हों, तो अकेला हैडमास्टर और कमेटी क्या करेंगे!" इसके वाद अपनी पेंचदार वातों से वह यह भी जान लेते हैं कि हैडमास्टर के लिए मास्टरों के क्या विचार हैं। मन-ही-मन खुश होते हैं। हां, मास्टरों को कैसा ठंडा कर रखा है। ऐसा न हो, तो फिर किस काम का हैडमास्टर!"

टन-टन-टन। मन्दिर में आरती करने की तरह लम्वे वरामदे में दुखीराम घण्टा वजाता जा रहा है। यह पहला घंटा है। लड़को, क्लास में जाओ। लाइब्रेरी के कमरे से निकलकर मास्टर भी क्लास की ओर चलने लगे। इसके वाद टन्-टन्...वड़ी दीवार-घड़ी वजेगी। वस, स्कूल चालू हो जायगा। हर वर्ग में पढ़ाई की गुनगुनाहट सुनाई पड़ेगी, जैसे कारखाने में मशीन चालू हो जाती है। एक के वाद एक घण्टे-पर-घण्टे घड़ी के अलसाए कांटे के साथ घिसटते जायंगे और तवतक घिसटते रहेंगे जवतक कि पश्चिम के लालवाले मकान के पीछे सूरज डूव नहीं जायगा।

हैडमास्टर अपने दफ्तर से निकलकर वाहर खड़े-खड़े चारों ओर देख रहे हैं। मास्टर खड़िया और झाड़न या किताव; भूगोल के मास्टर लिपटे हुए मैप और लाठी के आकार के प्वाइंटर और हिसाव के मास्टर लम्वा फुटा लेकर, अपने-अपने विषय की जरूरी चीजों से लैस होकर जल्दी-जल्दी अपने-अपने वर्गों की ओर चल पड़े। भूदेववावू ने जाते-जाते टेढ़ी नज़र से हैडमास्टर की ओर देखा, "आज तीन-तीन मिनट जवर्दस्ती मार दी। सेहत भी ऐसी है कि एक दिन वीमार भी नहीं पड़ते। अगर ऐसा दिन आ जाय, तो देखना, क्या हालत करता हूं स्कूल की।"

महिम दीवार से सटा खड़ा है। हैडमास्टर की निगाह उसपर पड़ी। वोले, "ए लड़के, तुम यहां क्या कर रहे हो?"

उन्होंने महिम को छात्र समझ लिया। वहुत दिन हो गये, तव चेहरे पर ताज़गी थी। वी. ए. पास किया है, फिर भी स्कूल की किसी ऊंची कक्षा में जाकर वेंच पर वैठ जाता तो मजे में खप जाता।

"ए लड़के, तुम फौरन क्लास में जाओ।"

महिम ने पास जाकर प्रभात पालित की चिट्ठी आगे कर दी।

"क्या है ? सवेरे-सवेरे छुट्टी..."

चिट्ठी पढ़कर उन्होंने महिम की ओर देखा और एक वार फिर चिट्ठी पढ़ी। फिर वगल का वड़ा कमरा दिखाकर वोले, "जाइये, लाइब्रेरी में वैठिये।···चित्तवावू, ज़रा इधर तो आइये, यह देखिये।"

महिम लाइब्रेरी में चला गया। स्कूल में जव लाइब्रेरी है तो किताबें पढ़ने को मिलेंगी ही। किताबें उसको बहुत प्रिय हैं। किताव लेकर पड़े रहने के अलावा उसे और कुछ नहीं चाहिए। ओह, सातू घोष के साथ ऐसे जाल में फंस गया था कि क्या कहे। किताव पढ़ना सातू के लिए मखौल जैसा है। उसकी निगाह में यह तो वेवकूफों का काम है। उसने खाली पैसे को ही पहचाना है। पैसे के पीछे दौड़ने के सिवा जिन्दगी का और कोई लक्ष्य नहीं है। पढ़ने-लिखने के वातावरण में आकर महिम का जैसे पुनर्जन्म हुआ।

पर डेढ़ हजार छात्र और इतने अध्यापकों के लिए महज चार अलमारी किताबें हैं! शायद और कमरों में हों। एक ओर की दीवार से सटाकर अलमारियां खड़ी की गई हैं। वीच में लम्वी-सी मेज के दोनों ओर कुर्सियों की कतार है। मास्टर अपनी-अपनी कक्षा में चले गए थे। कुर्सियां करीव-करीव खाली थीं। जिनका घण्टा खाली था, उन्हींमें से दो-चार वहां हैं। पंखा चल रहा है। उसके नीचे आराम से आंख मूंदे पड़े हैं। महिम अलमारी के पास खड़े होकर पुस्तकों का नाम पढ़ने लगा—एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, १८९५ ई० का संस्करण। दूसरी पुस्तकें भी काफी पुरानी हैं। स्कूल की शुरुआत में जव आज के जाने-माने प्रतिष्ठित लोग छात्र के रूप में इस स्कूल में आये थे, तभी शायद जोश में आकर ये पुस्तकें खरीदी गई थीं। फिर वाद में ऐसा कभी नहीं हुआ होगा। कम-से-कम शीशे के वाहर से देखने पर तो ऐसा ही लगता है।

इतने में छोटी-सी मोटी कापी लेकर दुखीराम आया। मास्टरों को दिखाकर हस्ताक्षर करवाने लगा। छुट्टी के अमुक घंटे में अमुक वर्ग लेना होगा।

गगनविहारीबाबू सो रहे थे। झट-से सीधे होकर बैठते हुए बोले, "हूं, चित्रगुप्त की बही आ गई ? मेरा नाम कहां है ? मेरा नाम न हो तो स्कूल ही न चले।"

दुखीराम ने कहा, "आपके लिए कुछ नहीं है, मास्टरजी।"

"बड़े अचरज की बात है ! दो-दो खाली घंटे होने पर भी मेरा नाम चित्रगुप्त की कलम से अछूता बच गया ! क्या कलयुग खतम हो गया ?"

उन्होंने अपना सिर फिर मेज पर टिकाकर आंखें बन्द कर लीं।

दुखीराम ने कहा, "पताकीबाबू, आपके लिए है। टिफिन के बाद वाले घण्टे में, यह देख लें।"

उसने कापी खोलकर पताकीबाबू का नाम उन्हें दिखाया। पताकीबाबू ने दस्तखत कर दिये। फिर हँसकर बोले, "आज एकदम छुट्टी है, जान बची।"

दाशू की उम्र अभी कम है। थोड़े दिन पहले ही काम में लगा है। पूरा नाम है दाशरथि, पर सब उसे 'दाशू' कहते हैं। समझ में नहीं आया तो पूछ बैठा, "छुट्टी कैसी ?"

"हमने तो भई, नियम बना लिया है कि जिस दिन छुट्टी का घण्टा मारा जायगा, उस दिन सारे घण्टों में छुट्टी मनाऊंगा। किसी भी वर्ग में जाकर कुछ नहीं करूंगा। मास्टरी करते दस साल हो गये। तीन-तीन स्कूल देखे हैं। न चाहने पर कोई मुझसे काम कराले, ऐसा कोई माई का लाल नहीं देखा।"

सोते-सोते ही गगनबाबू ने कहा, "मां तक क्यों पहुंचते हो, पताकीबाबू ? यह भी कोई अच्छी बात है ?"

पताकीबाबू कुछ सहम गये और इधर-उधर देखने लगे। दाशू की ओर भी एक बार देखा। कहते हैं, दाशू हैडमास्टर के पास जाकर चुगलखोरी करता है, और इसी प्रकार नौकरी में तरक्की पाने की सोचता है। उसकी चुगली की बात याद आते ही पताकीबाबू अपनी बात खा जाने के लिए बेचैन हो उठे, बोले—"हैडमास्टर या चित्तबाबू के बारे में तो मैं नहीं कह रहा हूं न ! अध्यापक अगर नागा करे तो किसी-न-किसीका छुट्टी का घंटा तो मारा ही जायगा। वे बेचारे करें भी तो क्या करें ? मैं तो लड़कों के लिए

कह रहा था। सेकिन्ड-सी की इतनी बदनामी सुनते हैं कि भूदेवबाबू की कक्षा में भी उस वर्ग के बच्चे धरती पर पैर पटकते हैं। कल तो मैं एक पैरा अनुवाद करने को देकर चाय पीने नीचे चला गया। बाहर से किसीको पता भी नहीं चला कि अंदर लड़के जिन्दा हैं कि मरे हैं। इसीलिए तो कह रहा था, क्लास के लड़कों को सम्हालने के लिए खून-पसीना हरदम एक ही करें, ऐसी भी क्या बात है ?"

बहुत-सी इधर-उधर की ऊट-पटांग बातें कहकर पताकीबाबू ने अपनी पहले की गई भूल को दबाने की कोशिश की। दुखीराम मोटीवाली कापी पढ़ने का भरसक प्रयत्न कर रहा था। बोला, "दाशूबाबू, जरा देखिये यह एम० आर० एस० मास्टर साहब कौन हैं ?"

"एम० आर० एस० मास्टर साहब ? कौन हैं ये ? पताकीबाबू, हमारे बीच यह एम० आर० एस० कौन है ?"

तभी करालीकान्त कमरे में घुसे। काला रंग, दुबला-पतला शरीर, दूध जैसे सफेद रंग की कुर्ता-धोती, सीधी-सी मांग। हमेशा कहते हैं कि वह चड़क डांगा के दत्त-परिवार के हैं। हैडमास्टर, चित्तबाबू और वृद्ध सुपरिन्टेन्डेन्ट गंगापदबाबू पद-मर्यादा में बड़े हैं। करालीबाबू भी उनके कुछ पास हैं। वह स्कूल के प्रबंधक (केयरटेकर) और लाइब्रेरियन हैं। स्याही चुक गई है, निब खत्म हो गये हैं, खड़िया नहीं है, टट्टी में सफेदी करवानी है, बैंच की टांग टूट गई है, इन सारी बातों की वह देखभाल रखते हैं। इसके लिए उन्हें वेतन के अतिरिक्त पांच रुपया महीना भत्ता मिलता है। साथ ही, पुरानी चारों अलमारियों की भी देख-रेख का भार उन्हींके सिर है। इसके लिए भी पांच रुपया भत्ता मिलता है। औरों की अपेक्षा उनके कई घंटे खाली रहते हैं। इसीलिए वह हरदम शंकित भी रहते हैं कि कहीं चित्तबाबू की कलम की नोक पर उनका कोई खाली घण्टा आ न जाय। इसीलिए उस मोटी कापी के लिखते समय चित्तबाबू के पास यह जमे रहते हैं। कह देते हैं, "यह क्या ? उस समय तो सफेदीवाला मिस्त्री आनेवाला है। उसे कुछ बताना है। मैं क्लास में बैठा रहूं तो काम कैसे बनेगा ?" आज भी वह अभी तक इतनी देर वहीं बैठे-बैठे ग्रह शांत करके आये हैं।

"यह एम० आर० एस० कौन है, करालीबाबू ?"

"वही महिमबाबू, जो आज नये-नये आये हैं ? आप खड़े-खड़े क्या कर रहे हैं जी ? आइये, बैठिये। बातें करें। अच्छा, यह बताइये प्रेसीडेन्ट को कैसे काब में कर लिया ?"

दो-तीन जने करीब-करीब एक साथ चौंककर बोले, "ऐं, प्रेसीडेन्ट ?"

करालीबाबू ने कहा, "आप तो एकदम हाई कोर्ट से फरमान लाये हैं। आपको कौन इन्कार कर सकता है ! इन्हें कौन-सी क्लास दे रहा है, भाई दुखीराम ? आठवीं बी...? मैंने तो चित्तबाबू से कहा कि प्रेसीडेन्ट के आदमी को रौरव-कुम्भीपाक में क्यों ढकेल रहे हो ? बोले कि ट्यूशनवालों में से कोई नहीं चाहते थे, क्योंकि नीचे की क्लास के मास्टरों को कोई अपने बच्चे के लिए ट्यूटर नहीं रखता। यह तो नये आदमी हैं। अभी ट्यूशन के चक्कर में नहीं पड़े हैं। थोड़े दिन इस क्लास को सम्हाल लें तो क्या बुरा है ?"

दुखीराम बाहर जाकर दूसरी क्लासों में घूमने लगा, फिर तेज कदमों से वापस लौटकर बोला, "गगनविहारीबाबू, उठिये। उस समय मैं नहीं देख पाया था !

"है न ? सो ही तो कहूं। मैंने क्या योंही चित्रगुप्त नाम दे रखा है ! चित्तगुप्त नहीं, चित्रगुप्त, यमराज के मैनेजर। बारहों महीने, तीसों दिन यही चलता है इनका। जिन्दा आदमी को तो मार नहीं सकते, सो छुट्टी के घंटों को ही मारकर दाह बुझाते हैं। पताकीबाबू, आप क्या कहते हैं ?"

पताकीबाबू भी हमदर्द थे, पर फिलहाल अभी इस चक्कर में नहीं पड़ना चाहते थे। अभी तक दाशू वहां बैठा था, ऊपर से करालीकान्त, फिर जाने यह नया-नया आदमी प्रेसीडेन्ट के यहां से कैसा आया है ! तीन विकट, महा विकट। जेब से बीड़ी निकालकर वह चुपचाप उसे सुलगाने लगे।

एक घण्टी बजी, फिर दूसरी। महिम को अब कक्षा में जाना है। इतने दिनों वह स्कूल-कालेज में पढ़ता ही आया था। अब जिन्दगी में पहली बार स्कूल में पढ़ायेगा। उफ, कितने दिन बीत गये ! साथ के आठवीं कक्षा के छोटे-छोटे बच्चे अब कई-कई बच्चों के बाप बन गये। शायद कोई-कोई नाना-दादा भी बन गया हो।"

घण्टी वजने पर सव मास्टर लाइब्रेरी में लौटने लगे। चारेक सुराही और उनपर गिलास रखे हैं। वे सुराही को झुकाकर पानी पीते हैं, फिर बीड़ी सुलगाते हैं। चपरासी के घर के बगल में एक छोटा-सा बिना खिड़की का अंधेरा कमरा है। वहांपर हुक्का-चिलम का भी इन्तजाम है। बिना हुक्का जिनका काम नहीं चलने का, वे जल्दी से उधर ही बढ़ गये। बाप रे, मास्टर भी कितने हैं! सबको पहचानने में महीना भर तो लग ही जायगा। महिम गांव के स्कूल में पढ़ा था। इतनी विशाल संस्था के बारे में तो सोचा भी नहीं था।

सुपरिन्टेन्डेन्ट गंगापदवाबू बहुत बूढ़े हो गये हैं। बदन झुक गया है। सिर पर एक भी बाल काला नहीं है। आकर महिम से बोले, "बेटा, आज से ही काम में लग रहे हो क्या? अभी तुम्हें कौन-सी क्लास मिली है? अच्छा, आठवीं। बहुत अच्छा। देखो, छोटी क्लास को लोग बहुत छोटा समझते हैं। पर बात बिलकुल उलटी है। बुनियाद तो वहीं बनती है। छोटी क्लासों में तो हैडमास्टर को ही पढ़ाना चाहिए। ऊंची क्लासों में तो बस ऊपरी पोताई होती है। नींव अगर कच्ची रह गई तो ऊपर के दबाव से हिल जाती है और फाइनल में विद्यार्थी लुढ़क जाता है। अगर नींव मजबूत हो तो आगे के लिए परेशानी नहीं होती।...ए दुखीराम, सुराही में कितने छटांक पानी भरते हो? गिलास में उड़लते ही सुराही खाली। 'तुम' 'तुम' कहकर बातें कह रहा हूं। बेटा महिम, बुरा मत मानना!"

महिम ने कहा, "आप यह क्या कह रहे हैं? मैं तो आपके छात्र के बराबर हूं।"

"बराबर कहते हो? अरे, मेरे तो बहुत-से छात्रों के बेटे भी तुमसे उम्र में बड़े होंगे। मेरी एक बात याद रखना। पढ़ाना बहुत बड़ा पुण्य-कार्य है! हँसमुख होकर और मन को खूब पवित्र बनाकर कक्षा में जाना।··· दुखीराम, नये मास्टरजी को ज़रा कक्षा तो बता दे, नहीं तो ढूंढ़-ढूंढ़कर बेचारे हैरान हो जायंगे।"

बूढ़े होने के कारण गंगापदबाबू कुछ ज्यादा बोलते हैं। बोलते-बोलते ही वह अपनी कक्षा की ओर दौड़ गए। दौड़ते समय उनका शरीर झुका नहीं होता, बल्कि बिल्कुल सीधी रेखा की तरह होता है।

लम्बा-सा कमरा। एक ही कमरे के अन्दर आठवीं कक्षा के दो विभाग हैं, ए और बी। सी और डी विभाग भी ठीक ऐसे ही आकार के कमरे में उल्टी ओर हैं। महिम की कक्षा में बीच की दीवार भी नहीं है। दीवार से जो जगह घिर जायगी, उसमें कम-से-कम दस लड़के बैठ जायंगे। स्कूल में जगह नहीं है, इसीलिए न, नहीं तो डेढ़ हज़ार की जगह ढाई हजार लड़के बड़े आराम से भर्ती कर लिये जाते। भारती इन्स्टीट्यूशन का काफी नाम है।

बाबा आदम के जमाने की भारी-भारी हत्थोंवाली कुर्सी-मेज को देखकर लगता है कि पेड़ के पूरे तने-के-तने पर ही कीलों से मोटे-मोटे तख्ते जोड़ दिये गए हैं। एकदम पक्का काम। पचास साल पहले स्कूल की शुरुआत के समय अगर ये कुर्सी-मेजें बनवाई गई हों तो आगे पचास साल और भी बड़ी आसानी से काम दे जायंगी।

"कौन-सा विषय पढ़ना है ?"

सामने की बेंच पर बैठा सबसे आगेवाला लड़का उठकर बोला, "बंगला, सर !"

दूसरे लड़के हल्ला करने लगे, "कहानी, सर, कहानी !"

कहानी का नाम सुनकर ए विभाग के लड़के भी चौकन्ने हो गये। नये-नये मास्टर हैं, जरूर नरम मिजाज के होंगे। जरूर जिद्द को पूरा करेंगे। वे लड़के भी चिल्लाये—"कहानी ही सुनाइये, सर !"

महिम ने पूछा, "तुम्हारे विभाग के अध्यापक कौन हैं ?"

"रामकिंकरबाबू। वह आज नहीं आये हैं, सर !"

महिम बोला, "अच्छा, कहानी ही सही। मैं जोर से बोलूंगा, जिससे तुम सब लोग सुन पाओ। पर पहले पढ़ाई हो जाय। तुम लोगों को थोड़ी देर बिल्कुल चुप रहना होगा। कहां से पढ़ना है ?"

सामनेवाली बेंच का लड़का खड़ा होकर बोला, "बाघ और पालतू कुत्ता।"

"ओह, वही पालतू कुत्ते और जंगल के शेर की कहानी। कुत्ते को खाना-पीना तो अच्छा ही मिलता है, पर गले में जंजीर का दाग... वही न ? अच्छा, तो इसी पाठ की कहानी सुनाऊंगा। अच्छा खाना मिलेगा, यह जानकर भी शेर गृहस्थ के घर जाने से क्यों इन्कार करता है ? यही

बताऊंगा।"

वही लड़का फिर बोला, "सर, कल जगदीश्वरबाबू ने इसे पढ़ाया था। घर से कठिन शब्दों का अर्थ लिखकर लाने के लिए कहा था, मैं लिख लाया हूं।"

शाबाशी पाने के लिए वह कापी खोलकर पढ़ने लगा—"बाघ माने शेर, पालतू माने प्रतिपालित, कुत्ता माने सारमेय..."

एकाएक एक मुलायम हाथ ने आकर महिम का मुंह दूसरी ओर घुमा दिया। एक सुन्दर-सा बालक। कहानी का प्रस्ताव शुरू में ही गड़बड़ाते देखकर जब नहीं रहा गया तो वह सीट पर से उठकर आ गया। बड़ी मीठी बोली में बोला, "कहानी कहिये, सर। यह सब नहीं, कहानी।"

दो-तीन लड़के हाथ के इशारे से बुलाकर कह रहे थे, "मलय, चले जाओ। ऐसा कहीं करते हैं। अरे, सर के शरीर से हाथ क्यों लगा रहा है ?" फिर महिम से बोले, "सर, अभी यह नया-नया आया है। परसों ही पहली बार स्कूल में दाखिल हुआ है, इसलिए कुछ नहीं जानता। सर, उसे माफ कर दें।"

महिम का मन हुआ कि मलय को गोद में लेकर कुछ बोले, पर लड़के मना जो कर रहे थे। मां की गोद से निकलकर अभी-अभी बाहर आया है। अपना-पराया नहीं जानता। प्यार से छू लिया है। बिल्कुल कुछ बोले बिना कैसे रहा जा सकता है। महिम ने पूछा, "तुम्हारा नाम मलय है ? बहुत ही सुन्दर नाम है। तुम कितने भाई-बहन हो ?"

"शैतान कुर्सी पकड़कर खड़ा हो गया है। मुंह से अभी तक दूध की गंध आती है, पर हिम्मत इतनी है ! जा, अपनी सीट पर जा !"—हुंकारते हुए रामकिंकरबाबू कमरे में घुसे।

उनके जबड़े हरकत कर रहे हैं। हरदम सुपारी जो चबाते रहते हैं। लड़के खड़े हो गये। महिम के एकदम पीछे बैठे थे रामकिंकरबाबू, अपने बी विभाग की हद में। उन्हें आते देखकर महिम भी कुर्सी छोड़कर खड़ा हो गया।

रामकिंकरबाबू बोले, "उसे इतना बढ़ावा क्यों दे रहे हैं ? आप जो सोच रहे हैं, वह तो पहले से ही गुड़गोबर होगया।"

"मैं क्या सोच रहा हूं ?"

ही-ही हँसते हुए रामकिंकरवावू वोले, "शकल-सूरत से आप ठीक समझे हैं। लड़का अच्छे घर का ही है। चौधरी परिवार का। दाशू ट्यूशन कर रहा है। वह चलता-पुर्जा है। उम्र कम है तो क्या हुआ, दिमाग में दांव-पेंच भरे हैं। उसके सामने हम लोग योंही रह जाते हैं। वी विभाग में तो हमारे ही हाथ में तीन-चार दिन रहा, पर मुझसे कुछ नहीं हो पाया और दाशू शिकार मार ले गया।"

रामकिंकरवावू की डांट सुनकर मलय सहम उठा और अपनी जगह पर जा बैठा। उसने फिर उधर देखा ही नहीं, शायद अव रोयेगा। अपनी अप्रसन्नता को दवाकर महिम बोला, "पर मैंने तो कुछ नहीं सोचा था। अभी तो मैं कक्षा में नया-नया आया हूं, सो लड़कों से जान-पहचान कर रहा था।"

"अच्छा।"

महिम को दो वार आपादमस्तक घूरकर रामकिंकरवावू भृकुटि तानकर बोले, "ओफ्फो, एकदम नये ? मसें भी अभी नहीं भीगी हैं। हां-हां, अभी तो आरंभ ही है, इसलिए नहीं सोचा, पर वाद को सोचना पड़ेगा। यह तो हुआ, पर यह दरवाजा खुला रखकर पढ़ाने का कौन-सा ढंग है ? वाहर का शोर अन्दर आता है, यहां की आवाज वाहर जाती है। कमरे में आकर पहले अच्छी तरह से दरवाजा वन्द कर लिया करें। अपना पढ़ाने का तरीका दूसरों पर क्यों प्रकट करें ?"

इतना कहकर अपने हाथों से दरवाजा भेड़कर वह ए विभाग में चले गये और कुर्सी पर वैठकर दोनों पैर मेज पर फैला दिये। पूछा, "आज क्या है ?"

"हिसाव।"

रामकिंकरवावू खिसिया उठे, "अभी तो दौड़-धूप करके कक्षा में आ रहा हूं ! अभी हिसाव कैसा ! हिसाव तो शाम को होगा।"

"कार्यक्रम में यही है, सर।"

"क्यों नहीं होगा ? चित्तवावू का वनाया कार्यक्रम है न ! खुद तो कभी क्लास में पैर रखेंगे नहीं, इसे-उसे भेजकर काम वनवा लेंगे। उन्हें

क्या मालूम कि इस धूप में हांफते हुए आकर बोर्ड के सामने खड़े होकर हिसाब पढ़ाने में छठी का दूध याद आ जाता है। अच्छा, इतिहास कब है ?

"टिफिन के बादवाले घण्टे में, सर !"

"तो फिर अभी वही हो जाय। निकालो इतिहास की किताब।"

आठवीं के कक्षा-अध्यापक यह रामकिंकरबाबू आठवीं कक्षा के ए विभाग में पढ़ाते हैं। हमेशा से वह आठवीं और नवीं कक्षा में पढ़ा रहे हैं। दूसरे मास्टरों की तरह इस विषय में वह कोई आपत्ति नहीं करते। किसीके नागा होने पर चित्तबाबू जब कभी इन्हें दो-एक ऊपर की कक्षाएं पढ़ाने के लिए देने लगते हैं, तो रामकिंकरबाबू मना करते हैं। कहते हैं, "जब उम्र थी, तब तो ऊंची क्लासों में भेजा नहीं, बुढ़ापे में अब क्यों इस बखेड़े में डाल रहे हैं ? अब मुझे याद ही क्या रह गया है। कभी जो जानता था, वह सब इतने दिनों में एकदम पच गया है। नई क्लास में जाकर दिन में तारे दिखाई पड़ेंगे।"

दूसरे मास्टर लोग कहते हैं, "उनके कहने से क्या ! तीन बेटे रोज़गार से लगे हैं। ट्यूशन अगर एक-दो मिल जायं तो अच्छा ही है और न मिले तो परवा भी नहीं। रामकिंकरबाबू जैसा भाग्य औरों का कहां !..."

रामकिंकरबाबू कहे जा रहे हैं, "इतिहास कहां से पढ़ना है ? शाहजहां और ताजमहल ? अच्छी तरह से याद करके आये हो न ? एक शब्द भी इधर-उधर हुआ, तो बस समझ लेना, खैर नहीं है।"

बच्चे चुप बैठे हैं। एकाएक रामकिंकरबाबू ने सदय होकर कहा, "पूरा-का-पूरा पाठ लिख डालो। लिखना ही तो असली चीज है। खूब बनाकर धीरे-धीरे लिखो।"

लड़कों ने इतिहास की किताब खोल ली। रामकिंकरबाबू ने पैर तो मेज़ पर पहले ही फैला रक्खे थे। अब उन्होंने आंखें भी मूंद लीं। रह-रहकर खर्राटे की आवाज़ निकलती, फिर जल्दी-से वह सम्भल जाते। इतिहास लिखना छोड़कर लड़के 'किला-कांटिया' का खेल खेलने लगे। बच्चों ने ऐसे कितने ही खेलों का आविष्कार कर रखा है, जिसमें आवाज नहीं होती। खेल खेलो, कोई एतराज नहीं है। हां, शोर नहीं होना चाहिए। सर को गहरी नींद में देखकर बच्चों का साहस बढ़ता जाता

है। खेल बदल रहे हैं। एक दूसरे की पेन्सिल छीनी जा रही है। कितावें फेंककर गेंद की तरह लपकी जा रही हैं। कोई-कोई एक दूसरे को चिकोटियां काट रहा है। अपने बैठने की सीटें अदल-बदलकर अपने-अपने मित्रों के साथ बैठने का प्रवंध हो रहा है। ऐसे में किसीकी किताव नीचे गिर पड़ी। सोये हैं तो क्या, धीमी-से-धीमी आवाज भी रामकिंकरबावू के कानों में पहुंच जाती है। वह एकदम गरज उठते हैं, "ऐं!"

लड़के डरकर इधर-उधर देखते हैं। फिर यथारीति खेल शुरू हो जाता है। वह कुछ नहीं है। सोते समय सर ऐसी आवाज करते ही हैं। विना आंखें खोले ही ऐसी हुंकार भरते हैं। तीस साल की आदत जो है। क्लास में चोर-पुलिस खेलो या जो मन में आये, पर जवतक शोर न हो, कोई डर नहीं है।

कुछ नये लड़के थोड़े दिन पहले ही आये हैं। वे अभी यह सब नहीं जानते, सो लिखाई खतम करके एक ने वुलाया, "सर!"

दूसरे लड़कों ने हाथ के इशारे से कहा कि लौटकर अपनी सीट पर जाओ। वह लड़का इशारे को शायद समझ नहीं पा रहा था, या चाहता था कि सवसे पहले लिखाई दिखाकर मास्टरजी से शावाशी ले ले।

"हो गया, सर!" उसने फिर आवाज की।

नींद में ही रामकिंकरवावू वोले, "ऊं।"

रामायण में प्रसंग है कि कुम्भकर्ण की जव नींद भंग होती थी तो तीनों लोकों में उथल-पुथल मच जाती थी। रामकिंकर महाशय की नींद भी अव खुलनेवाली है। पल-भर में पट-परिवर्तन हो गया। लड़के अपनी-अपनी जगह बैठकर कापी पर झुककर खूव मन लगाकर लिखने लगे।

"सर, हो गया?"

"इतनी जल्दी? देखूं तो?"

लड़के के हाथ से कापी छीनकर कच्ची नींद टूट जाने से लाल-लाल आंखें दिखाकर रामकिंकरवावू गर्जने लगे, "शाहजहां में कौन-सा 'स' लगता है? ताजमहल में कौन-सा 'ज' लगेगा?"

वह लड़का पढ़ाई में अच्छा था। फिर भी दोनाली वन्दूक के मुंह का अपनी ओर निशाना सधा देखकर घवड़ाकर वोला, "तालव्वी 'श', उहुं,

दन्ती 'स'।"

"मूर्धन्य 'ष' क्यों नहीं ?"

"हां, मूर्धन्य 'ष', सर।"

कहने-भर की देर थी। पल-भर में चादर के नीचे से बायां हाथ निकलकर चील की तरह लड़के के वालों को पकड़कर खींचने लगा। दाहिने हाथ की दोनों अंगुलियों ने चिमटे की तरह उस लड़के की कुहनी के पास पकड़ लिया। चमड़ी को चुटकी में भरकर वह ऐंठते रहे।

"क्यों, यह सब क्या है ?"

नये नियमों से कक्षा में वेंत ले जाना मना है। हैडमास्टर साहब ने उसपर पावंदी लगा रखी है।

लाइब्रेरी के कमरे में कोने में अलमारियों के पीछे वीस-पच्चीस वेंत होते थे। मास्टर लोग जरूरत पड़ने पर उन्हें इस्तैमाल करते थे। हैडमास्टर साहब के आदेश से वे सब जलवा दिये गए। बूढ़े शिक्षक एक-दूसरे का मुंह ताकते हैं—'मूर्खस्य लट्ठौषधि', 'स्पेयर द राड एण्ड स्पाइल द चाइल्ड',[1] ये शास्त्रवाक्य हैं। इसकी उपेक्षा करने के कारण दिन-व-दिन क्या होता जा रहा है! रामकिंकरवावू नये विचारों से अछूते हैं। वेंत न हुआ तो क्या! उनका कहना है कि अंगुलियां तो हैं ही। वच्चे कहते हैं—रामकिंकर सर की अंगुलियां अंगुलिया थोड़े हैं, लोहे की संड़सी हैं। अंगुली से वदन पर चिकोटी काटने का नाम भी वड़ा अच्छा है—"मधुमोड़ा यानी मीठी ऐंठ।"

चिकोटी काटते-काटते रामकिंकरवावू ने पूछा, "कैसा मीठी चिकोटी है ? है न शहद जैसी ?"

जव यह सब होरहा था कि पीछे से एक और वुद्धू लड़का आ खड़ा हुआ। वेचारा! वड़ी-वड़ी आंखें, घुंघराले घने वाल, पर वहां का हाल-चाल देखकर वह खिसकने की ताक में था, किन्तु रामकिंकरवावू ने उसे यह सुयोग नहीं दिया। उन्होंने पहलेवाले को छोड़कर दूसरे के हाथ से झटककर कापी छीन ली। वह जैसे लड़ाई के मैदान ...न ...ओ, वह ...हुआ! सिर पर

[1] वच्चों की ठुकाई न करो तो वे विगड़ जाते हैं।

में उतर पड़े हैं। जो भी सामने आयगा, उसे नहीं छोड़ेंगे। वह कापी पर सरसरी नज़र डाल गये। आंख उठाकर एक बार उस लड़के की ओर देखा, फिर से कापी को देखा। अभागा न जाने कहां से आया है, कापी में एक भी गलती नहीं है। एक लाइन टेढ़ी-मेढ़ी नहीं है। ई, ऊ, मात्रा में गलती नहीं है। सिर से पैर तक जैसे वह लड़का लोहे के कवच से रक्षित था। कापी को मोड़कर उसीसे ठेलकर उन्होंने लड़के को उठाते हुए कहा, "जा, अपनी सीट पर बैठ। एक बार लिखने से नहीं होता, फिर लिख। दो-तीन बार लिख और अच्छी तरह बनाकर लिख। तीन बार हो जाय तब लाना, उससे पहले नहीं।" फिर कक्षा के सारे लड़कों को घूरकर बोले, "और किसका खतम हुआ? कापी ले आओ।"

पर किसी और लड़के का न तो काम पूरा हुआ है, और न उस घण्टे में होगा। सर पुराने हैं। उन्हें बहकाना सब जानते हैं। इन दोनों लड़कों की तरह नई भर्ती नहीं हुई है। रामकिंकरबाबू ने निश्चिन्त होकर फिर से आंखें बन्द कर लीं।

घण्टा बजते ही रामकिंकरबाबू की आंखें खुल गईं। वह उठ खड़े हुए। बाहर जाते-जाते महिम के पास आ खड़े हुए। बोले, "क्यों भई, नये-नये हो न! तुम्हारा पढ़ाना मैं सुन रहा था। कक्षा में इतना शोर-गुल क्यों होता है? देखो, बदनाम हो जाओगे।"

महिम ने कहा, "शोर-गुल कहां? मैं उन्हें समझा रहा था। एकदम आवाज किये बिना कैसे पढ़ाया जायगा?"

"तो फिर मैं कैसे पढ़ाता हूं? तीस साल हो गये। कितने ही गधों को पीटकर घोड़ा बना दिया। सुखमय चक्रवर्ती का नाम सुना है न? छोटी अदालत में जज है। हमारी क्लास का छात्र था। छमाही परीक्षा में अंग्रेजी में कुल तेरह नम्बर मिले थे। मैं पढ़ाने लगा, सालना में तिरानवे मिले। ... ही बदल गया। एकदम चुप रहता। कितना भी मारो-पीटो, ... अब हाकिम बनकर अदालत में बैठता है, पर वह

"तुम पढ़ाते समय बहुत चिल्लाते हो। इससे हमारे वर्ग को असुविधा होती है। तुम अपने फेफड़े से अधिक काम लेते हो। कोरे हो न अभी, कुछ नहीं समझ पाये हो। जब इस लाइन में आगये तो तीस-चालीस साल खींचोगे ही। एक ही दिन में सब पढ़ा दोगे तो बाकी क्या रह जायगा? फेफड़ा भी आगे क्या इतना सह पायगा?"

घण्टा बजते ही हैडमास्टर अपना कमरा छोड़कर बरामदे में खड़े हो जाते हैं। मास्टर एक कक्षा से निकलकर दूसरी कक्षा में जाते हैं। टाल-मटोल करके एक-दूसरे से बात करने में दो-चार मिनट बिता भी देते हैं। लड़के भी मास्टरों के पीछे ही निकल आते हैं। हैडमास्टर के खड़े होने से इनपर कुछ रोकथाम रहती है। रामकिंकर को हैडमास्टर ने बुलाया, "ज़रा इधर सुनिये। आज आप कितने बजे स्कूल आये हैं?"

"साढ़े दस बजे।"

"लिखा तो साढ़े दस ही है, बल्कि साढ़े दस भी नहीं, दस बजकर पच्चीस मिनट। पर आये हैं ग्यारह के बाद।"

रामकिंकरबाबू चुप रह गये।

"क्या कह रहे हैं? आपने सोचा होगा, मुझे कुछ पता नहीं होता?"

हाथ मलते हुए रामकिंकरबाबू ने कहा, "जी नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है। आप तो अन्तर्यामी हैं? क्या मजाल कि आपके न जाने स्कूल में कोई बात हो जाय!"

"तो देर से आकर आपने दस बजकर पच्चीस मिनट का समय क्यों लिखा?"

"जी, गलती होगई।"

"कल भी आपको देर हुई थी। रोज ही देर होती है।"

"जी।"

"क्यों देर होती है? मैं आपसे यही पूछ रहा हूं।"

अब रामकिंकरबाबू ने एक लम्बी-सी फेहरिस्त बनाकर कहा, "बहू ने बड़ियां मिलाकर बैंगन का झोल बनाया था। बाज़ार में नये-नये बैंगन आये हैं। बड़ा स्वादिस्ट झोल बनता है। ऊपर से बहू "यह खाओ, वह खाओ" करती रहती है। पर मजे से खाऊं, यह कब नसीब हुआ! सिर पर

भूत सवार रहता है। आपकी याद आते ही खाना छोड़ दिया, हाथ-मुंह घोया और भाग निकला, फिर भी देर हो गई। अवकी वार माफ कर दें, आगे से ऐसा नहीं होगा।"

मास्टर लोग उनसे थरथराते हैं, यह सुनकर हैडमास्टर वहुत खुश होते हैं। उन्हें इससे वड़ा संतोष अनुभव होता है, खासकर रामकिंकरवावू से, जो उम्र में उनसे करीव डेढ़ गुने से क्या कम होंगे। वह थोड़ा मुस्कराकर आगे वढ़ गये, यानी रामकिंकरवावू का मामला निपट गया। जल्दी-से कदम वढ़ाकर वह महिम के पास पहुंच गये। विना कुछ वोले ही अपनी चद्दर लेकर महिम के कन्धे पर लटका दी। महिम अवाक् होकर देखता रहा। हैडमास्टर ने कहा, "यह क्या ? आप विना चादर के ही क्लास में गये थे ? आज मेरी ही चादर लेकर क्लास में जायं। कल से चादर लेते आइयेगा।"

महिम को अव ख्याल आया कि हर मास्टर के कन्धे पर चादर है। सिपाही की कमर में जैसे पेटी, वैसे ही मास्टर के गले में चादर। हैडमास्टर का कहना है कि छात्रों और शिक्षक में कुछ अन्तर तो होना ही चाहिए। चादर इसी काम में आती है।

हैडमास्टर की यह एक अनोखी सूझ है। चादर जरूर चाहिए, नहीं तो चेहरे पर गम्भीरता नहीं आती। महिम को यह अच्छा नहीं लगता। उसे ऐसा लगता है कि चादर के साथ-साथ जैसे उम्र में वीस-तीस का अंक वढ़ा दिया गया। चंचलता एकदम समाप्त। स्कूल के इलाके के अन्दर चेहरा एकदम गम्भीर रखना पड़ेगा। यह सव फरमान भी जैसे चादर पर ही लिखे होते हैं। जवतक वूढ़े नहीं लगोगे तवतक मास्टर नहीं हो पाओगे। इसीलिए जवर्दस्ती चादर डालकर वूढ़ा वना दिया जाता है।

सामने के छोटे अहाते के एक कोने में पानी पीने की जगह है। वहुत से लड़के कतार लगाकर पानी पी रहे हैं। रामकिंकरवावू भी उन्हींके वीच जाकर नल के नीचे हाथ लगाकर पानी पीने लगे। पानी पीते-पीते उन्होंने आंख उठाकर देखा, थोड़ी दूर पर जगदीश्वरवावू खड़े हैं। शायद उनका घण्टा खाली है। झेंपकर हँसते हुए रामकिंकरवावू ने कहा—"मैं तो साहव, पानी कुछ ज्यादा पीता हूं। पचास मास्टरों के लिए सिर्फ चार

सुराहियां हैं। थोड़ी देर में ही खाली हो जाती हैं। नाप-तौलकर मुझसे पानी नहीं पिया जाता।"

जगदीश्वरबाबू बोले, "आप हैडमास्टर से वह सब क्या कह रहे थे? भला कल आपको कहां देर हुई थी? हम दोनों साथ-साथ ही तो आये थे।"

रामकिंकरबाबू ने तुरन्त कहा, "हां, देर तो आज हुई थी, कल नहीं।"

"तो फिर आपने सिर हिलाकर 'हां' क्यों कह दिया? यह बात तो आप हैडमास्टर से कह सकते थे।"

हँसकर रामकिंकरबाबू ने कहा, "ऊपरवालों के साथ झगड़ा नहीं करना चाहिए। उनकी 'हां' में 'हां' मिलाना ही ठीक रहता है।"

"पर आपने कहा है कि अब कभी देर नहीं होगी।"

रामकिंकर ने निश्चित उदासीनता से कहा, "तीस साल की नौकरी में मैं कम-से-कम तीनसौ बार ऐसा कह चुका हूं। इनसे कहा है, इनके पहले जो हैडमास्टर थे, उनसे कहा है और उनसे भी पहले जो थे, उनसे भी कहा है। वहू के पांच बाल-बच्चे हैं। नौकर-चाकर नहीं है। इतनों को सम्भालकर ही तो रसोई करेगी। दस दिन में से एकाध दिन समय पर आ पहुंचा तो आ पहुंचा। अब आप ही कहिये, अब और कितने दिन खाने को रह गये हैं? इसीलिए सोचता हूं, खा-पी लूं, स्कूल कहां भागा जाता है। पर समझाने से कौन समझता है! इसीलिए 'हां' में 'हां' मिलाकर खिसक जाना ही अच्छा है।"

४

आधी छुट्टी का घण्टा टनटनाते ही पहली मंजिल, दूसरी मंजिल, तीसरी मंजिल, सभी कमरों में जोरों का शोर-गुल शुरू हो गया—"हो-ओ-ओ-ओ।" मानो डेढ़ हजार सोडे की बोतलों का मुंह खोल देने से झाग निकल रहा हो, शोर-गुल की आवाज़ भी कुछ ऐसी ही है। तीन घण्टे मुंह बन्द रख-कर कक्षा में बेंचों पर लड़के मानो सजाकर रखे हुए थे। क्षण-भर में उथल-पुथल मच गई। बरामदे में, दोनों अहातों में, बड़े कमरे में शोर-गुल,

हुड़दंग, मारपीट। स्कूल आते समय एक, दो, पांच, दस करके आते हैं। इससे पूरा पता नहीं चलता कि भारती इंस्टीट्यूशन सचमुच कितना वड़ा है।

अजय और विजय, दोनों भाई हैं। शकल-सूरत करीव एक जैसी ही है, यानी वताने की जरूरत नहीं पड़ती कि दोनों भाई हैं। कपड़े भी दोनों करीव-करीव एक ही जैसा पहनते हैं। सफेद नेकर और सफेद ही आधी वाहों की कमीज। लोहा विल्कुल ताजा ही दीखता है। घण्टा वजने के साथ-साथ ही उनकी मोटर आकर गेट पर खड़ी हो जाती है और दोनों भाई गाड़ी से उतरकर उछलते-कूदते दूसरी मंजिल पर चले जाते हैं। गाड़ी का दरवाजा फट-से वन्द हो जाता है और पलक झपकते ही कार चली जाती है। उस समय गाड़ी में एक खूवसूरत लड़की वैठी रहती है। मास्टरों में से कइयों ने उसे देखा है। आज जव जगदीश्वरवावू फर्राटे से स्कूल चले आ रहे थे, तव स्कूल के वाहर ही अजय-विजय की मोटर दिखाई पड़ी थी। वह फाटक के पास ही ठिठक गये। उस लड़की को एक नज़र देख लेना है। उम्र का अन्तर तव याद नहीं रह जाता। इसीलिए तो रजिस्टर में दस्तखत करने में दो मिनट देर हो गई। हैडमास्टर दूर नहीं थे। सो दस वजकर सत्ताईस मिनट ही लिखा। रामकिंकर की तरह आने का समय चुपके-से घटा नहीं दिया। देर होने की वजह से नाम के नीचे लाल लाइन भी खिंच गई, फिर भी क्षण-भर उस लड़की को देख लेने से एक अनोखी तृप्ति मिलती है। वातों-ही-वातों में जगदीश्वरवावू ने कक्षा में अजय-विजय से उस लड़की का परिचय भी पूछ लिया। वह अजय-विजय की वड़ी वहन है। दोनों भाइयों को स्कूल छोड़कर वह दफ्तर चली जाती है। किसी दफ्तर में अच्छी-सी नौकरी करती है। ये सारी वातें जगदीश्वरवावू को मालूम हो गईं।

आधी छुट्टी में एक अधेड़ आदमी अजय-विजय का नाश्ता लेकर आता है। कुछ खास ज्यादा चीजें नहीं होतीं। वस, दो-दो सन्देश और शीशे की सुराही में पानी। वह आदमी हर रोज़ दिखाई पड़ता है और वे चीजें भी रोज आती हैं। फाटक से वाहर रास्ते के किनारे आधी छुट्टी के समय गरम-गरम पकौड़े विकते हैं। रेलिंग के वाहर हाथ वढ़ाकर कितने ही लड़के पत्ते में पकौड़े खरीदकर खाते हैं। संदेश हाथ में लिये विजय ने दयनीय नेत्रों

से उनकी ओर देखा, तभी एक ने कहा, "क्यों, खाने का मन होता है ? खाओगे ?"

विजय ने कहा, "तव तुम एक संदेश खाओ ।"

वह ऊंची कक्षा का लड़का था। मुंह वनाकर वोला, "हुश, संदेश क्यों खाऊंगा ? चिपचिपा है, जीभ पर कीचड़ की तरह लिपट जाता है।"

पर थोड़ी ही देर में जैसे वहुत वड़ा अहसान करते हुए वोला, "अच्छा, लाओ एक संदेश, मैं तुम्हें दो पकौड़े दे रहा हूं। एक के वदले दो। लो, खाओ।"

दोनों पकौड़ों को दोनों भाइयों ने वांटकर खुशी-खुशी मौज से खाया। जो आदमी नाश्ता लाया था, उससे कहा—"मथुर, तुमको तो जैसे कुछ और आता ही नहीं। वस, संदेश-संदेश !"

मथुर ने हँसकर कहा, "माजी का यही हुक्म है कि तितु हलवाई की दुकान से दो-दो संदेश ले जाया करो। तुम लोग भी तो कुछ नहीं कहते, दादा भैया !

अजय वोला, "पकौड़ा है, दाल-मोंठ है, गोलगप्पा है। हम लोग अव से यही सव खायंगे। समझे ?"

मथुर ने कहा, "यह सव तो वहुत आसान है। ये चीजें तो रोज मिल सकती हैं। रोज अदल-वदलकर एक-एक चीज़। जव तुम चाहते हो, तो मैं क्यों नहीं लाऊंगा ? पर माजी को अगर मालूम हो जायगा तो मुसीवत हो जायगी। वह तो वार-वार कहती हैं कि तुम लोगों को संदेश के अलावा दूसरी कोई चीज न मिले।"

विजय ने कहा, "हम लोग मां को नहीं वतावेंगे। अगर पूछेंगी तो संदेश का ही नाम लेंगे। फिर उन्हें कैसे मालूम होगा ?"

फिर भी मथुर चिन्ता में ही पड़ा रहा। विजय ने कहा, "आज तो एक-एक पकौड़ा मिल ही गया। कल दालमोंठ ले आना। समझे।"

मथुर वोला, "वहुत मुश्किल है। माजी तो सिर्फ चार आने पैसे देती हैं। वड़ी मुश्किल से चार संदेश आ पाते हैं, पर चार आने में दालमोंठ कैसे आयंगे, यही सोच रहा हूं।"

अजय ने कहा, "तो गोलगप्पे ले आना।"

मथुर ने सुना और सिहरकर कहा, "उसमें तो और भी खर्च पड़ेगा।"

अजय उसे हौंसला बंधाते हुए बोला, "मथुर भैया, तुम बिल्कुल परेशान मत होओ। मेरे पास तो रुपये हैं ही। फूफाजी ने दशहरे में पांच रुपये खर्च करने के लिए दिये थे, मैंने वे खर्च नहीं किये हैं। अभी तक रखे हैं। वही मैं कल तुमको दे दूंगा। किसीसे कुछ मत कहना, कल गोलगप्पे ज़रूर ले आना।"

आज महिम का पहला दिन था। वह अवाक् होकर खड़ा-खड़ा देख रहा था। अचानक पीछे से किसीका हाथ छू गया। उसने मुड़कर देखा, मलय चौधरी। चेहरा बुझा-बुझा-सा। अच्छी तरह देखने पर आंखों के कोनों में आंसू की बूंदें दिखाई पड़ीं।

महिम ने पूछा, "तुम खेल नहीं रहे हो, मलय?"

"नहीं, खेलने को मेरा मन नहीं हो रहा है, सर! मैं घर जाऊंगा। आप दरवान से कह दीजिये, मुझे मां की याद आ रही है।"

मलय महिम का हाथ पकड़कर खींचता हुआ फाटक की ओर बढ़ा। महिम भी उसके साथ-साथ चलने लगा। कैसे इन्कार करता! बाप और बेटा, दोनों स्कूल की दरवानी करते हैं। दोनों फाटक पर खड़े थे। बेटा तो एकदम पहलवान जैसा है। दोनों हाथों से फाटक के दोनों पल्लों को पकड़कर छाती फुलाकर खड़ा है, मानो ललकार रहा है, किसमें कितना बल है, आगे आओ! बूढ़ा दरवान पीछे से भीड़ को हटा रहा है, जिससे सब एक साथ फाटक के ऊपर न जा पड़ें। हैडमास्टर के दस्तखती टिफिन-पास जिनके पास हैं, सिर्फ वे ही बाहर जा सकते हैं। इनके अलावा मास्टर और बच्चों के अभिभावक ही बाहर जा सकते हैं।

महिम पास आया तो बूढ़े दरवान ने हुंकारकर पूछा, "पास?"

महिम हतबुद्धि होकर देखता रहा। दरवान ने पूछा, "पास नहीं है? भागो यहां से। शैतान!"

करालीबाबू पीछे से आगये थे। वह हँस पड़े। बोले, "इनका पास नहीं लगेगा, दरवान। यह टीचर हैं। अभी नये-नये आये हैं।" फिर महिम से कहने लगे, "आपकी उम्र कम है न, इसीसे इसने सोचा कि आप भी विद्यार्थी होंगे। गले से चादर उतारकर रख आये हैं न, इसीलिए यह

गड़बड़ी हुई। वाहर चलेंगे क्या ? चलिये, मैं भी चल रहा हूं।"

"नहीं, वाहर जाने की मेरी इच्छा नहीं है। यह लड़का जाना चाहता है।"

"अभी तो यह छोटा बच्चा ही है, फिर भी खेलने जाने के लिए तैयार है! अगर वाहर जाना है तो घर से चिट्ठी लाओ। देखो तो, पास लिये बिना ही वाहर जाना चाहता है। यह ढंग है इसका! फाटक के पास आकर खड़ा रहता है। टिफिन के समय भीड़-भाड़ होती है न, तव पासवालों के साथ झट-से वाहर निकल जाता है।"

मलय की ओर मुड़कर विनोद से करालीवावू वोले, "अव तो पहले जैसी भीड़ नहीं रह गई, वेटा। आज वाहर जाने का दांव नहीं लगेगा। कुछ देर हो गई न। घंटी वजते ही भीड़ में घुस जाते तो मौका हाथ आ सकता था।"

मलय ने न जाने क्या समझा! उसका चेहरा और भी वुझ गया और वह वहां से चला गया। करालीवावू ने महिम से कहा, "चलिये, उस मोड़ तक चलें। पान खिला लाऊं। दरवान, मास्टरजी को पहचान रखो, फिर कभी ऐसी गलती न हो।"

पान खाने की इच्छा नहीं थी, पर करालीवावू छोड़ें तव न। वह महिम को खींचकर ले गये। वगल से जल्दी-जल्दी एक और मास्टर सन्-से चले गए—सलिलवावू। सींकिया देह, लम्वा कद, गंजा सिर, गढ़े में धंसी हुई दो आंखें, पर हवा की तरह दौड़ते जा रहे हैं। करालीवावू ने आंखें मिचमिचाकर कहा, "एक मजेदार चीज देखिये!" फिर चिल्लाकर वुलाया, "सलिलवावू, सुनिये। एक जरूरी वात है।"

वार-वार वुलाने पर सलिलवावू ने एक वार मुड़कर पीछे देखा, फिर हाथ हिलाकर, तेजी से जाने लगे।

"ओ सलिलवावू, आपके दामाद को नौकरी मिल गई। आपको खवर मिली ?—"

"हां ऽ ऽ।"—अस्पष्ट-सी आवाज देकर सलिलवावू नजरों से ओझल हो गये।"

करालीवावू हँस पड़े। वोले, "देखा, अभी यात्रा में है न। अगर

सुन लें कि लड़का छत पर से गिर पड़ा, फिर भी हाथ हिलाकर चले जायंगे। गुप्त अध्यापन का वादशाह है।"

महिम की समझ में कुछ नहीं आया। पूछा, "यह गुप्त अध्यापन क्या है?"

करालीवावू ने वताया, "वाह, आप मास्टरी लाइन में आगये और गुप्त अध्यापन नहीं जानते? वही तो असली चीज है। अंग्रेजी में उसे प्राइवेट ट्यूशन कहते हैं। पर इतने दिनों में भी मैं आजतक यह काम कभी अच्छी तरह नहीं कर पाया। सुवह-शाम मिलाकर कुल चार ट्यूशन कर पाता हूं।"

"लेकिन सलिलवावू अभी पढ़ाने जा रहे हैं?"

करालीवावू ने कहा, "सुवह-शाम। रात को तो इतने हैं कि सांस लेने का भी मौका नहीं रहता। ऊपर से एक को इस स्कूल के समय में भी पढ़ा लेते हैं। चित्तवावू को रोज चाय पिलाकर खुश रखते हैं, जिससे टिफिन के वाद उनका पहला घण्टा खाली रहे। उस मोटी-सी कापी में लिखने से रिकार्ड खराव होता है, इसीलिए स्लिप पर लिखकर किसी मास्टर को उनकी क्लास पढ़ाने भेज दिया जाता है। ऊपर से लोग समझते हैं कि मास्टर वड़े भोले-भाले होते हैं, पर भीतरी वात तो अन्दर आने से ही पता लगती है।"

पान की दूकान पर खड़े होकर एक पैसे में डवल पान लेकर महिम को दिया। सिगरेट भी खरीदकर दे रहे थे, पर महिम सिगरेट नहीं पीता। मास्टर के लिए तो यह सदाव्रत से कम नहीं है, पर करालीवावू की वात और है। वह सोलहो आने मास्टर नहीं हैं, फिर ऊपर से वड़े घर के लड़के हैं। मुक्की, लक्का, गोला, और लोटन, चार किस्म के सौ कवूतर उनके दादा ने पाल रखे थे। केवल कवूतरवाजी में हर महीने कितने ही रुपये खर्च होते थे। अव पैसा नहीं है, पर मिजाज तो वही है। उन्होंने पूछा, "प्रेसीडेण्ट के साथ आपका क्या रिश्ता है? ज़रा वताइये तो?"

"रिश्ता क्या है? कुछ भी नहीं।"

"यह कैसे मान सकता हूं? रिश्ता न होने पर खुद लिखकर थोड़े ही नौकरी पर भेज देते। आप कहना नहीं चाहते सो और वात है।"

महिम बोला, "सचमुच कोई ऐसा सम्बन्ध नहीं है। मेरे पिताजी ने उन्हें बचपन में पढ़ाया था। वह महान हैं।"

उसकी बात को बीच में ही रोककर करालीबाबू बोल उठे, "पर लोग कहते हैं (इधर-उधर देखकर दुविधा दबाकर) "···आप तो मेरे छोटे भाई के समान हैं। कह दूं! कोई-कोई कह रहे हैं कि स्कूल की भीतरी खबर लेने के लिए प्रेसीडेन्ट ने एक अपने आदमी को रखा है। अगर यह सही भी हो, तो मैं इसमें कोई बुराई नहीं देखता। स्कूल का इतना नाम है। इस स्कूल से कितने ही इन्द्र-चन्द्र निकले हैं, पर पिछले तीन सालों से नतीजा ऐसा खराब हो रहा है कि कहते नहीं बनता। सभी गुप्त व्यापार मालिकों को जतलाना जरूरी है, नहीं तो सुधार कैसे होगा! देखा न, सलिलबाबू स्कूल छोड़कर ट्यूशन करने जा रहे थे। चित्तबाबू कापी में खुले आम और चुपके-से स्लिप में क्या कुछ करते रहते हैं? बड़ों को तो छू नहीं सकते, छोटों को पीसते रहते हैं।"

थोड़ा रुककर एक बीड़ी सुलगाकर वह फिर कहने लगे, "मेरी ही बात लीजिये न! सीधा-सादा आदमी हूं, इसीलिए कुछ बोलता नहीं हूं। व्यवस्थापक को कितना सारा काम है। अभी मुझे खड़िया का स्टाक खरीदने कलुटोला तक दौड़ना पड़ रहा है। हमेशा एक-न-एक काम रहता ही है। रुपये कितने देते हैं, सो जानते हैं? सिर्फ पांच रुपये माहवारी। लाइब्रेरी का बोझ भी ऊपर से सिर पर लादा है, उसके भी पांच देते हैं। सोच सकते हैं? जल्दी ही कमेटी की मीटिंग है, अरजी भेज दी है। बातों-ही-बातों में आप ज़रा प्रेसीडेन्ट को मेरी बात सुना रखिएगा। आपको छोटा भाई-सा समझता हूं, इसीलिए यह सब कहा है।"

"ये सब सोचते क्या हैं? प्रेसिडेन्ट क्या महिम के दोस्त हैं, जो हर वक्त भेंट-मुलाकात होती रहे? गपशप होती रहे? या स्कूल के बारे में ही सुनने के लिए वह इतने उत्कण्ठित रहते हैं, कहने-भर की देर और करालीबाबू का अलाउन्स दुगना-तिगुना हो जाय?"

तभी रामकिंकरबाबू दिखाई पड़े। लड़कों को हटाकर दाहिने हाथ से मुंह पोंछते हुए पानीवाले कमरे से निकल रहे थे। छाती पर का कुर्ता और आस्तीन एकदम भीग गये थे। ऊपर पहुंचे तो जगदीश्वरबाबू ने

कहा—"यह क्या रामकिंकरवाबू, आप तो एकदम पानी से सरावोर हो गये हैं।

"क्या पूछते हैं आप ? छोकरों ने पीछे से धक्का देकर हिला दिया। पीछे से दो आंखें होतीं तो देख लेता शैतानों को।"

जगदीश्वरवाबू ने कहा, "आप पानी बहुत पीते हैं। इतना पानी पीना ठीक नहीं है। अभी तीसरे घण्टे में आपने कितनी देर तक पानी पिया था।"

हँसते हुए रामकिंकरवाबू ने कहा—"सबका एक वार टिफिन होता है, पर मेरे लिए तीसरे घण्टे में हुआ, फिर यह, अभी कई वार और होगा।"

"पर आप तो इतना खाकर आते हैं। वह सामने वैठाकर खिलाती है। फिर इतनी जल्दी पानी से पेट भरने की जरूरत पड़ जाती है।

रामकिंकरवाबू नाराज होगये, वोले "ज़रा कहिये तो कि इतनी वातें कहां से गढ़ लेते हो।"

"मैं क्यों गढ़ूं ? आप ही हैडमास्टर से कह रहे थे।"

"अधिकारियों के सामने जो वोलना पड़ता है, उसका भी क्या कोई मतलब होता है ? सुन लीजिये सच्ची वात—वह तो पाजी है। नीच है। स्कूल की तनख्वा इक्कीस रुपये पहली तारीख को ही ले लेती है। ट्यूशन के पन्द्रह रुपये वरावर सात तारीख को दे देता हूं। कई दिनों से उसीका तकाजा करती है। पर अव ट्यूशन कहां ? वह तो दिसम्बर में ही खतम हो गया। नया शिकार पकड़ में आया ही नहीं। कह दूं तो आग-ववूला हो जाय। फिर भी शायद थाह ली है। वहाना वनाकर आज स्कूल आने के पहले रसोई में ही नहीं गई।"

इतने शिक्षकों में से उनकी मित्रता केवल जगदीश्वरवाबू से ही है। उनसे ही वह अपना दुःख-सुख का रोना रोते हैं और फिर कहकर फौरन चेतावनी दे देते हैं—दूसरे किसीसे मत कहिएगा। खवरदार, हैडमास्टर को न मालूम होने पाये, नहीं तो दूसरों की आंखों में इज्जत नहीं रह जायगी।

अपनी छुट्टी खतम होने के ज़रा पहले ही दुखीराम ने एक टुकड़ा कागज का लाकर महिम के हाथ में पकड़ा दिया। अंग्रेजी में लिखा था—"एम० आर० एस० पांचवें घण्टे में तीसरी ई क्लास लें।"—करालीवाबू जो

कह रहे थे, यही बात है। चिट भेजकर छिपी मार करते हैं ।

गगनविहारीबाबू ने कहा, "आगया न ? वह तो आना ही था। आप नये-नये आये हैं, एतराज नहीं कर सकते न, इसलिए आपके साथ लगातार ऐसा ही होगा। किस क्लास को पढ़ाना है, यह भी बिना देखे ही बता सकता हूं—तीसरी ई, ठीक है न ? क्या पढ़ाना होगा, यह भी बता सकता हूं—हिसाब ! चाहे क्लास में जाकर पूछ लीजिये। किसकी क्लास है, यह भी बता देता हूं—खुद छोटे बाबू चित्तगुप्त की। कभी भूलकर भी क्लास में नहीं जाते। अरे साहब, हाथ में ताकत है और वह मोटी-सी कापी है, वह क्यों पढ़ाने लगे ?"

एकाएक दरवाजे के पास असिस्टेंट हैडमास्टर चित्तगुप्त दिखाई पड़े। हड़बड़ाकर गगनविहारीबाबू चुप हो गये। महिम ने उनकी ओर देखा तो चित्तबाबू ने इशारा करके पास बुलाकर कहा, "आप उच्च शिक्षित ग्रेजुएट हैं। एक के बाद एक तीन नीचे की क्लासों में भेजते बुरा लगता है। आप ऊपर की कक्षा में जाइये। प्रेसीडेंट ने आपका काम देखने के लिए लिखा है। बाल-पाठ और सरल गणित से क्या पता लगेगा, तभी मैंने बड़ी कठिनाई से यह इन्तजाम किया है। तीसरी मंजिल पर चले जाइये। चौखट के ऊपर बोर्ड पर तीसरी ई लिखा है, देख लीजियेगा।"

ऊंची कक्षा में पढ़ाने का काम देकर उन्होंने जैसे महिम को कृतार्थ कर दिया। चेहरे पर गौरव का भाव लिये चित्तबाबू तम्बाकू पीने नीचे की ओर जाने लगे, पर दो कदम जाकर ही लौटते हुए बोले, "एक बात बताये दे रहा हूं, क्लास में शोर-गुल न होने पाये। लड़के बड़े शरारती हैं। क्लास के अन्दर बैठकर आप क्या कर रहे हैं, यह तो कोई नहीं देखने जायगा, पर शोर-गुल होने पर बाहर तक सुनाई पड़ेगा। समझदारी से काम कीजियेगा।"

जमाना बीत गया, पर महिम को वे दिन साफ-साफ याद आते हैं। दुर्गा का जाप करते हुए तीसरी ई की दुर्दान्त कक्षा में महिम घुस पड़ा। दानव की तरह एक आदमी उनके साथ-साथ ही भीतर आया। लम्बाई-चौड़ाई और वजन में महिम से डेढ़ गुना तो होगा ही। किसी बच्चे का अभिभावक समझकर महिम जल्दी-से कुर्सी से खड़ा हो गया।

"सर, मैं इसी क्लास में पढ़ता हूं। पानी पीने गया था।"

आधी छुट्टी के बाद हाजिरी का रजिस्टर फिर से भरने का नियम है। उसी समय महिम उस छात्र का नाम जान गया—मणीन्द्र मोहन घोष। यह भी पता लगा कि उस क्लास में वैसा दानव सिर्फ वही नहीं, आधे दर्जन से भी ऊपर हैं। उसे अजीब-सा लगा था, पर बाद में इसी दिन की बात सोचकर महिम ने कितनी बार अफसोस किया। उन दिनों कक्षा कैसी भरी रहती थी। कितने ही छात्र एक-दो बच्चों के बाप होने पर भी किताब-कापी लेकर पढ़ने आते थे। पर मनीघोष की बात ऐसी नहीं थी। उम्र कम ही थी, पर स्वास्थ्य हद से ज्यादा अच्छा था। आजकल के लड़के तो डेस्क के पीछे ऐसे छिप जाते हैं कि दिखाई ही नहीं पड़ते। कलियुग बीतते-बीतते सब बौने हो जायंगे और बैंगन के पौधों के नीचे बाज़ार लगा करेगा। बस, वे दिन आने ही वाले हैं।

सिर पर पंखा भन-भन घूम रहा है, फिर भी महिम पसीना-पसीना होगया। कमजोरी नज़र न आये, इसलिए बिना किसीकी ओर देखे उसने पूछा, "हिसाब में क्या हो रहा है ?"

"काम का सवाल।"

मणिघोष तड़ाक से खड़ा हो गया। बोला, "पहले यह हिसाब ज़रा समझा दें, सर! निकाल नहीं पा रहा हूं।"

महिम ने सिर हिलाया, "अभी नहीं, बाद में।"

उसने तिरछी निगाह से मणि की कापी की ओर देख लिया। बात कुछ-कुछ समझ में आने लगी। प्रेसीडेन्ट ने तो हैडमास्टर को लिखा था कि उसकी परीक्षा ले लें, पर उससे पहले तो इस क्लास के लड़के ही उसकी परीक्षा लेने लगे। चक्कर से बचे रहने में ही कुशल है।

"क्लास का काम हो जाय, उसके बाद बाहर के सवाल समझा दूंगा।" गम्भीर आवाज में फैसला देकर महिम ने गणित की पुस्तक खोल ली। वह खूब आसान तरीके से सवाल समझाने लगा। एक सवाल समझाते समय कोई कहानी सुनाने लगता। यह कला उसे खूब आती है। असहयोग-आन्दोलन के समय कालेज छोड़कर उसने थोड़े दिन जहां-तहां अनपढ़ किसानों के बीच भाषण भी दिया था। लगता है, वह सब अभी तक भूला

नहीं है। नये मास्टर के सम्बन्ध में कौतूहल है, इसीलिए लड़के शुरू में उसकी उपेक्षा नहीं करते। वह क्या कहते हैं, ज़रा सुन ही लिया जाय। क्या बोल रहे हैं, इसके बारे में तो कोई दिलचस्पी नहीं, पर बोलने का ढंग अच्छा है। एकाएक महिम को सुनाई पड़ा, मणि घोष फुसफुसा रहा था, "बहुत...बहुत चालाक हैं। इसी तरह से घण्टा खतम कर देंगे और झंझट-से बच जायंगे।"

महिम के स्वाभिमान को चोट-सी लगी। हिसाब में आनर्स किया था और ऊंची कक्षा की ही एक लड़की को रोज शाम को हिसाब पढ़ाता था। अपनी बात को बीच में ही रोककर मणि की ओर देखते हुए बोला, "कापी लाओ, पर एक बात है..."

सारी कक्षा को घूरकर वह फिर बोला, "मैं हिसाब समझाऊंगा, पर जब बोर्ड की ओर मुंह किये रहूंगा, तुम लोग पीठ-पीछे शोर-गुल नहीं करोगे, यह वादा करो।"

मणि घोष वर्ग का मुखिया था। खड़ा होकर बोला, "कोई भी मुंह नहीं खोलेगा, सर ! आप सवाल समझाइये।"

पहला हिसाब होगया। महिम ने कहा, "तुम कापी में उतार लो।"

मणि चकित रह गया। बोला, "सर, इतनी जल्दी होगया ?"

"उत्तर मिलाओ। जल्दी करो। इतने थोड़े-से समय में इतने सारे सवाल करने हैं।"

किला फतह हो गया। महिम उनके मन की बात जान गया था। पहलेवाला हिसाब बोर्ड पर से मिटाकर दूसरा हिसाब शुरू कर दिया। वह जल्दी-जल्दी खड़िया से लिखता जाता था। एकाएक रुककर बोला, "अब ऊपरवाली संख्या को घटाओ, उत्तर मिल जायगा। समझे ?"

मणि ने कहा, "बस, अब और हिसाब करने की जरूरत नहीं है, सर। बाकी हिसाब मैं घर पर कर लूंगा। अब आप जो समझा रहे थे, वही समझाइये।"

सारा वर्ग स्तब्ध रह गया। घण्टी बज गई तो महिम क्लास से निकला। मणि भी उसके साथ-साथ बाहर आकर बोला, "सर, आपके पैर छूकर माफी मांगता हूं। हम लोगों की कक्षा की बदनामी सुनकर आप आये हैं।

हर रोज नये-नये मास्टर आकर उलटा-सीधा, वेसिरपैर समझाकर किसी तरह घण्टा विताकर चले जाते हैं। उन्हें कुछ नहीं आता। विना तैयारी किये ही उन्हें कक्षा में भेज दिया जाता है। वे भी क्या करें। इसीलिए उन्हें हैरान करने के लिए हमने ये हिसाव इकट्ठे कर रखे हैं। आप रोज आइये, सर ! कभी कोई गड़वड़ी नहीं होगी। जरा भी शोरगुल नहीं होगा। आप देख लीजियेगा।"

मास्टरी के पहले दिन ही महिम का मन आत्म-विश्वास से भर गया। कहते थे, तीसरी-ई के लड़के शेर हैं। दो हिसाव समझाकर ही शेरों के झुंड को महिम ने वश में कर लिया। सचमुच लड़के भले हैं। मणि घोष अच्छा है। मलय अच्छा है। और मास्टरों को वह अच्छा नहीं लगता। वे मास्टर शिक्षित हैं। एक वहुत वड़े काम की जिम्मेदारी उन्होंने सिर पर ले रखी है, पर मौका पाते ही वे एक-दूसरे पर कीचड़ उछालते हैं। यह सव क्या है ? छुट्टी का घंटा कट जाने से सव नाराज होते हैं। महिम के लिए ये सव वातें विलकुल उल्टी हैं। उसे छुट्टी के घंटे में खाली न वैठकर लड़कों के बीच में वैठना पसन्द है। अंधेरी गली से जैसे वह खुले हुए रास्ते की चमकती रोशनी में आजाता है।

घंटा समाप्त होने पर महिम जा रहा था कि सलिलवावू ने वुलाया, "ठहरिये साहव, जरा ठहरिये। इतना दौड़ क्यों रहे हो ! सालों तक पढ़ाने के वाद फिर यह काम घिनौना लगने लगेगा। जरा ठहरिये तो एक क्षण, परिचय होजाय।"

महिम के पास आने पर दवी आवाज में वोले, "करालीवावू उस समय क्या कह रहे थे ? मेरे ही वारे में न ?"

महिम ने सिर हिलाकर इन्कार कर दिया। चारुदादा कहा करते थे—सवसे वड़ा काम है आदमी को गढ़ना। इस काम में आकर पर-निन्दा, परचर्चा में नहीं पड़ना चाहिए। पर सलिलवावू सहज छोड़ने-वाले नहीं हैं। उन्होंने फिर पूछा, "तव क्या कह रहे थे ?"

"अपने वारे में ही कुछ कह रहे थे।"

"रहते तो वड़े ठाट-वाट से हैं। मौज करते हैं। फिर अपनी क्या कहेंगे?"

महिम कुछ हिचकिचाकर वोला—"व्यवस्थापक का इतना काम,

पर भत्ता कुल पांच रुपये। यही सब...

"यह तो काफी कह डाला उन्होंने।"

इसी बीच पताकीबाबू भी आ गये, बोले, "इस काम को कमेटी ठेके पर दे दे। भत्ता एक पैसा नहीं, बल्कि हर महीने स्कूल को कौन कितना दे सकता है। मैं महीने में दस रुपये देकर यह काम सम्भालने के लिए तैयार हूँ।"

सलिलबाबू ने कहा, "मैं पन्द्रह तक दे सकता हूं।

कहकर वह हँसने लगे। फिर बोले, "नानाजी का एक नौकर था। वह सबसे दस्तूरी लेता था। एक दिन उसे सन्देश लाने भेजा। और कुछ नहीं तो उसने सन्देश को ही थोड़ा-सा चाट लिया। हमारे करालीबाबू का भी यही हाल है। स्कूल के लिए एक बोतल फिनायल आये तो उसमें से भी एक-चौथाई शीशी में उंडेलकर घर उठा ले जायंगे। दुखीराम को बहुत-कुछ मालूम है, एक दिन उससे पूछियेगा।"

तभी हेडमास्टर का चेहरा दिखाई पड़ा। जल्दी-जल्दी कक्षा में घुस गये।

५

कालीपद कोनार स्कूल की प्रबंध-कमेटी के सदस्य तो हैं ही, मास्टरों के प्रतिनिधि भी हैं। मास्टरों ने ही उन्हें चुना है। उन्हींकी तरह एक सदस्य और भी हैं—चित्तबाबू। इसके अलावा हैडमास्टर तो हैं ही।

कालीपद फाटक के भीतर आये। पांच-सात लोगों ने उन्हें घेर लिया। पताकीचरण, जगदीश्वर, सलिलबाबू भी वहीं पर हैं। हृदय भूषण चार साल से अस्थायी रूप से काम करते आ रहे हैं। पीछे से उन्होंने भी गर्दन बढ़ा दी। कमेटी की बैठक क्या होती है, मानों कुम्भ मेला लगता हो। एक बार हो जाय तो फिर कब होगी, यह नहीं कहा जा सकता। मंत्री अवनीश चटर्जी डाक्टर हैं, और सभापति हैं बहुत बड़े वकील। कभी एक

को समय मिलता है तो दूसरा खाली नहीं रहता। कितने सारे काम पड़े हैं।...कल रात को कालीपदबाबू और चित्तबाबू दोनों मंत्री के पास यही पूछने गए थे कि बैठक कब होगी ?

"बताइये तो क्या तय हुआ ? मंत्री ने क्या कहा ?"

कालीपद सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते बातें करते जा रहे थे। बोले, "दशहरे तक नहीं होगी। जनवरी-फरवरी में जब खेल-कूद और पुरस्कार-वितरण होगा, उसी समय बैठक भी होगी। अबकी बार बड़ी मुश्किल से सभापति और मंत्री को समय मिला तो राय महाशय के बिना बैठक रुक गई। वह वृन्दावन चले गए।"

राखहरि राय उप-सभापति हैं। बूढ़े होगये हैं। अवकाश प्राप्त करके अब तीर्थ-व्रत करते फिर रहे हैं। उनके दादाजी ही स्कूल के प्रतिष्ठाता थे। उनके रहे बिना अगर बैठक होजाय तो वह एकदम नाराज हो जायंगे—"सात-छः महीने में एक बार बैठक होती है, वह भी बिना मेरे ही ? जंगल कटवाकर, सीली जमीन पर मिट्टी डलवाकर, मेरे ही दादा ने स्कूल बनवाया और मैं कुछ नहीं हुआ ? बिना मेरे बैठक हो जाती है ! तुम लोग ही अपनी टांग अड़ाये रहते हो ? अपने बाप-दादा का खाता तो ज़रा ढूंढ़ो, कभी किसीने स्कूल को खर्चे के लिए एक पैसा दिया है !"

बूढ़ा बहुत ऊटपटांग बोलता है। कभी-कभी तो सबके घर जा-जाकर गालियां सुना आता है। किसीकी परवा नहीं करता।

जगदीश्वरबाबू नाराजी से बोले, "राय महाशय तो पांच-छः दिन से नहीं हैं। इसके पहले क्या हो रहा था ? क्या आपके मंत्री कान में तेल डालकर सो रहे थे ?"

कालीपद बोले, "सोयेंगे क्या, मरीज देखने से फुरसत हो तब न ! बेचारे रात तक में नहीं सो पाते। यही सब कह रहे थे।"

"तो छोड़ क्यों नहीं देते ?"

मास्टरों के सामने कालीपद को साहसी और स्वतंत्र विचारों का होकर रहना पड़ेगा, ताकि बाद में भी वह चुन लिए जायं। इसीलिए मंत्री की शिकायत में भी उन्हें शामिल होना पड़ता है। मास्टरजी कुछ कहें, उन्हें कम-से-कम उसका दुगुना कहना जरूरी है।

पताकीचरण ने कहा, "समय नहीं है तो पद से छुट्टी क्यों नहीं ले लेते ?"

कालीपद हँसकर बोले, "आज तो मान-सम्मान है, डाक्टरी चल रही है, कल को न रहे तब ? तब समय कैसे कटेगा ? रौब किसके ऊपर जमायंगे ? ये जो झुंड-के-झुंड डाक्टरी पास करके निकल रहे हैं, डाक्टरों की तो भरमार हो जायगी। तब उनके जैसे कैम्बेल स्कूल के पासशुदा डाक्टर के पास कौन आवेगा ? यही सब सोचकर शायद जमे हुए हैं।"

पताकीचरण ने नमक-मिर्च मिलाकर चटपटा बनाते हुए कहा, "नये डाक्टर क्या करेंगे ? यही सबको मार-मारकर खतम किये दे रहे हैं ! लोग जिन्दा रहेंगे, तभी तो बीमार पड़ेंगे ? लोग कहते हैं, अवनीश डाक्टर के हाथ पड़कर फिर मरीज को छुटकारा नहीं मिलता, यानी वह यमराज के ही भाई हैं। हां, देश-सेवा भी कर रहे हैं। अगर ऐसे ही दो-चारसौ डाक्टर रहते तो खाद्य समस्या बड़ी आसानी से हल हो जाती। आदमी ही नहीं बचते, फिर खाता कौन ?"

कालीपदबाबू बोले, "फिर भी जाकर उनकी प्रैक्टिस देख आइये। हम लोग तो यही समझकर ऐसे समय गये कि उस समय मरीज नहीं होंगे, पर बातें करते-करते कम-से-कम पांच टेलीफोन आये। कभी नुस्खा लिये कम्पाउन्डर आता, कभी उठकर उन्हें मरीज से बातें करने जाना पड़ता।

पताकीबाबू ने कहा, "हूं, वह तो होगा ही। मछली, मनुष्य और मच्छर, जितने मरेंगे, उतने ही आते रहेंगे। जितनी मछली मारी जायंगी उतनी ही बंसी से चारा खाने इकट्ठी होंगी। आदमी भी ऐसा ही है।"

जगदीश्वरबाबू अधैर्य से बोले, "मजाक छोड़िये, दशहरा आरहा है। सौ तरह के खर्च सिर पर सवार हैं। पूजा-बोनस चाहिए। इतने दिन तक टालकर अब राय महाशय वृन्दावन की यात्रा पर चल दिये। यह बैठक न करने का बहाना है।"

कालीपद ने कहा, "पूजा-बोनस की बात हो गई है। सब दस्तखत करके दरख्वास्त भेज दीजिये। हैडमास्टर को पचास रुपये, चित्तबाबू को चालीस रुपये और बाकी सबको पच्चीस-पच्चीस अपनी जिम्मेदारी पर मंत्री दे

देंगे, इसका इन्तजाम मैं कर आया हूं।"

करालीबाबू ने कहा, "यह सब तो छुटपुट बातें हैं। असली बात तो वेतन बढ़ाने की है, पर उसपर कभी चर्चा ही नहीं होती। तीन-तीन साल पर वेतन बढ़ा देने की बात है, पर जरा हिसाब तो कर देखिये, कितने सालों से नहीं बढ़ा।"

रामकिंकरबाबू भागते-से चले आरहे थे। भौंहें चढ़ाकर बोले, "तनख्वा बढ़ाकर जैसे बड़ा ढेर-का-ढेर दे देते हैं। आप लोग भी ऐसे ही हैं। उस बार मेरी तनख्वा पन्द्रह आना बढ़ी थी।"

कालीबाबू ने सिर हिलाकर कहा, "उहुं, आने की बात तो नहीं है। शायद रामकिंकरबाबू गलत कह रहे हैं।"

"तनख्वा बीस रुपये थी। उसे ही इक्कीस कर दिया था। बीस रुपये की रसीद पर टिकट नहीं लगानी पड़ती थी। अब लगानी पड़ती है। टिकट की कीमत घटाकर हिसाब लगाइये, कितनी बढ़ी ?"

लाइब्रेरी के बरामदे में कई मास्टर आ जमे थे। खूब गप्पें हो रही थीं, महफिल जमी थी। सलिलबाबू कह रहे थे, "भई, मैं तो वेतन में वृद्धि नहीं चाहता। कहो तो पक्के कागज पर लिख सकता हूँ। चाहें तो वही दावा कर सकते हैं, क्योंकि हम लोगों पर स्कूल की छाप लग गई है। हम भारती इन्स्टीट्यूशन मार्कावाले हैं, जैसे उधरवाले प्राची शिक्षालय मार्कावाले हैं। मार्का देखकर ही तो लोग हमें ट्यूशन पर बुलाते हैं और उसीके अनुसार पैसे भी देते हैं। मास्टरी छोड़ दीजिये, फिर कोई नहीं बुलायेगा। सुबह-शाम मुन्ना को गोद में लेकर खिलाने के अलावा और कोई काम नहीं रह जायगा।"

हृदयभूषण ने सांस छोड़ी। वह इतनी देर से साथ-साथ थे, पर उन्होंने मुंह नहीं खोला था। सांस छोड़कर जैसे अपने से ही बोले, "आंख मूंदने के पहले ही भारती इन्स्टीट्यूशन का पूरा मास्टर बन जाऊंगा, यही सोचकर शहर के बाहर के स्कूल की हैडमास्टरी छोड़कर आया था, पर वह शायद होनेवाला नहीं है।"

करालीबाबू हताश होकर महिम से बोले, "बैठक तो नहीं होगी। मैं तो बरबाद हो गया, भई। आपको बताया था न ? उसके बाद सदस्यों के

घर दौड़ते-दौड़ते एक जोड़ी नये जूते का तल्ला घिस गया। पता नहीं, अब कब बैठक होगी, तबतक कोई याद थोड़े ही रखेगा। फिर एक ओर से सबके हाथ-पैर जोड़ने होंगे।"

एकाएक चित्तबाबू बाहर आकर बोले, "आप लोग क्या कर रहे हैं? लड़के इधर-उधर घूम रहे हैं। जो बोलना हो, कमरे में जाकर बोलें।"

वह महिम को एकान्त में ले जाकर बोले, "मैं आपको खुशखबरी सुना रहा हूं। हैडमास्टर साहब खुद जाकर सभापति से आपके बारे में कह आये हैं। मैंने उनसे कह दिया था कि हिसाब, अंग्रेजी और बंगला, तीनों विषयों में आप माहिर हैं। व्यवस्था के रजिस्टर में आपका नाम आंख मूंदकर डाला जा सकता है। ज़रा भी सोचने-विचारने की जरूरत नहीं है। ऐसा मास्टर मिलने पर कौन छोड़ेगा, भला आप ही कहिये। और भारती इन्स्टीट्यूशन को तो आप देख ही रहे हैं। अथाह समुद्र है। छात्रों और अध्यापकों दोनों से भरा है। समुद्र से एक लोटा पानी निकाल लें या उसमें डाल दें तो क्या फर्क पड़ता है? एक मास्टर की कमी-बेशी होने से कुछ नहीं आता-जाता। अब आपका काम होगया, नौकरी चलती रहेगी। आप सभापति के आदमी हैं, तरक्की होकर ही रहेगी। इन लोगों के बखेड़े में मत पड़िये।"

महिम भी यह नहीं चाहता। पर वह स्वयं न बोले, लेकिन कान से तो हमेशा सुनना ही पड़ता है। खाली घण्टों में कानों में रुई डालकर तो नहीं बैठ सकता!

पूजा की छुट्टी होनेवाली है। हर कक्षा में सूचना भेज दी गई है कि बाईस तारीख के अन्दर दो महीने की तनख्वा मिल जायगी। स्कूल खुलते ही परीक्षा शुरू होगी। हैडमास्टर ने सारे मास्टरों को बुलाकर बैठक की, पूछा, "किस किताब से कितनी परीक्षा ली जायगी, यह लिखकर आप लोग इसी हफ्ते के अन्दर चित्तबाबू को दे दीजिये। पिछले साल के साथ उसे मिलाकर ही रजिस्टर में चढ़ाया जायगा। देखिये, पिछले साल से कम न हो, कम-से-कम सवाया हो। पिछले साल इसी बात को लेकर मंत्री से नाहक की बातें सुननी पड़ी थीं और कमेटी में भी यह सवाल उठा था। कालीपदबाबू, इसे सुन लीजिये।"

बाहर आकर गगनविहारीबाबू भभककर बोले, "मंत्री को मरीज देखने से तो समय ही नहीं बचता, पढ़ाई का हिसाब मिलाने कहां से बैठ गया ! वह समझता भी खाक है। मंत्री के घर कौन-कौन जाता है, ज़रा पता लगाओ, फिर सब समझ में आजायगा। यह तो सभी मास्टरों पर बीतेगी, इसलिए मास्टर कौन जायगा ! सारी करतूत अमूल्य की है। जिन्दगी में कभी कलम उठाकर दुर्गा का नाम भी नहीं लिखा होगा। और कुछ काम नहीं है तो जाकर मंत्री से चुग़ली ही खा आता होगा।"

भूदेव ने कहा, "चुगली खाकर क्या करेगा। यह तो पढ़ाने की बात है। पढ़ाई कम हुई है, तो ठीक है, पन्द्रह दिन में शुरू से आखीर तक पढ़ा दूंगा। हम डरते थोड़े हैं।"

पढ़ाई शुरू होगई। जनवरी से अबतक अगर आधी पढ़ाई हुई हो तो बाकी को इन थोड़े-से दिनों में खतम करना होगा। एक बार अगर कोई पढ़ता ही चला जाय तो भी खत्म न हो। गगनविहारी बोले, "जैसी मालिक की खुशी। हम लोगों का क्या बिगड़ेगा ! बस, पंजाब मेल छोड़ दिया !"

घण्टी बजते ही मास्टर अपनी-अपनी कक्षा में चले गये। फर्राटे से पढ़ाई शुरू होगई। मुश्किल तो यह है कि कक्षा में दो-एक लड़के भी अच्छे नहीं हैं। एक अशोक है। पट्ठा हरदम जैसे सोया-सा रहता है। कहता है—"यह समझ में नहीं आया, सर !"

"घर जाकर समझना।"

"घर पर मास्टर नहीं आते, सर। बाबूजी मास्टर नहीं रखेंगे। उनके जमाने में नहीं रखे जाते थे, पर वे लोग अच्छी तरह पास हो जाते थे।"

"तो फिर तुम्हारे बाबूजी ही पढ़ायंगे। सब तो समझ रहे हैं। खाली एक तुम न समझो तो मैं क्या कर सकता हूं ?"

प्रमाण के लिए दो-एक बच्चों से पूछ भी लिया जाता है। एकदम पीछेवाली बेंच पर बैठकर दो लड़के शायद कोई खेल खेल रहे हैं। तजुर्बेकार मास्टर दूर से ही ताड़ लेते हैं। उनके सामनेवाला लड़का भी जरूर डेस्क

के नीचे कहानी की किताब चुराकर पढ़ रहा है, नहीं तो उसके लिए इतनी एकाग्रता सम्भव नहीं है। गगनविहारी उन्हीं बच्चों की ओर देखकर बोले, "क्योंजी, तुम भी नहीं समझे ?"

एकाग्रता में बाधा पड़ जाने से वह चौंककर बोले, "हां, सर।"

"तब ? तुम्हारे अकेले के लिए पढ़ाई तो नहीं रोकी जा सकती, खासकर इन आखिरी दिनों में तो बिल्कुल नहीं।"

इस पूछ-ताछ में भी थोड़ा समय बीत ही जाता है। चाहते तो इतनी देर में अशोक को समझा देते, पर नहीं, बढ़ावा पाने से बच्चे सिर खाने लगेंगे।

कक्षा-अध्यापक की बड़ी जिम्मेदारी होती है। पताकीचरण तीसरी बी के कक्षा-अध्यापक हैं। वह कक्षा में जाकर बोले, "क्यों, छुट्टी के दिन कैसे बिताओगे तुम लोग ? चन्दा कितना इकट्ठा किया ? सुनते हैं, डी सेक्शन में खूब जोरदार तैयारी चल रही है। हर लड़का एक-एक रुपया दे रहा है, इससे एक भी नहीं चूकता। मतलब यह कि चालीस रुपया—इससे कहीं ज्यादा ही होगा, कम नहीं। वे कह रहे हैं, अनन्तबाबू को रेशमी चद्दर देंगे।"

और तीसरी डी के कक्षा-अध्यापक अनन्तबाबू भी यही कह रहे हैं—बी सेक्शन तो खूब जोश में है। अबकी बार वे तुम लोगों को मात कर देंगे। इसी बात को लेकर आज पताकीबाबू के साथ बहस चल पड़ी—बैरिस्टर सिंह साहब का बेटा इस कक्षा में है। इस कक्षा को मात देना कोई आसान काम नहीं है।

शंकित होकर तीसरी डी के लड़के छुट्टी में सलाह करने बैठ गए। बी सेक्शन क्या कर रहा है, यह उसे फुसलाकर मालूम करना होगा। बैरिस्टर सिंह का लड़का बोला, "मैं दस रुपये चन्दा दूंगा। जरूरत पड़ने पर और भी दे दूंगा। उन्हें हराना ही होगा। और देखो, हम क्या करेंगे, यह उनमें से किसीको कानोंकान पता न हो। होशियार रहना।"

रामकिंकरबाबू नीचे की कक्षा के कक्षा-अध्यापक हैं—आठवीं ए के। उनकी कक्षा में बच्चे हैं। कौन पैसा देता है ? चंदा बहुत थोड़ा इकट्ठा हुआ—पूरे पांच रुपये भी नहीं। रामकिंकर मुंह बनाकर बोले, "छिः,

इतनी मेहनत के बाद बस इतना ही हुआ ? लोगों को बताने लायक भी तो यह नहीं है। ये उन्नीस चवन्नियां कैसे खर्चोगे, कुछ सोचा है ?"

अव्वल नम्वर पास होकर जो लड़का आठवीं में आया था, बोला, "सर, एक गजरा आयगा और मिठाई आयगी।"

रामकिंकरबाबू बोले, "दशहरा के शुरू में ही मुंह मीठा हो, यह तो बहुत अच्छी बात है। जो मन चाहे वही मिठाई लाना। संदेश, गुलाब-जामुन, चाकलेट, जो दोगे, वही खा लूंगा।"

फिर बोले, "पर गजरे की बात किसने सुझाई ? पैसे देकर बेकार की फूलपत्ती खरीद लाओगे। माला पहनकर क्या मैं नाचूंगा ? घंटे-भर तो माला टिकती ही है, फिर सूखकर बेकार हो जाती है। गांव-घर होता तो पालतू गाय-बकरी को ही खिला देता, पर कलकत्ता शहर में वे कहां !"

उसी लड़के ने कहा, "तो मिठाई से जो बचेगा, उससे किताब लायंगे। आपको जो किताब पसन्द हो..."

रामकिंकर बोले, "अहा, यह लो, इसीलिए तो इन्हें नादान या बच्चा कहते हैं। किताब का क्या होगा ! किताबों का ढेर पढ़कर ही तो मास्टर बना हूं। किताबें पढ़ते-पढ़ते जिन्दगी बीत गई। कौन-सी किताब मुझसे छूटी है ? किताब देने की बात छोड़ो, उससे कोई फायदा नहीं होगा।"

लड़के एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। बोले, "फिर क्या दें, सर ?"

"क्या दोगे ? मैं इतनी जल्दी क्या बता सकता हूं ! अच्छा एक काम करना। जो पैसे बचें, वे मेरे हाथ में रख देना, मैं खुद ही खरीद लूंगा। आखिर सोचना तो पड़ेगा कि मेरे काम का क्या है ?"

नकद रुपया ? यह कैसा लगेगा ? माला हो तो पहना दो, किताब हो तो फीता बांधकर नाम लिखकर मेज पर रख दो। रुपये दिये जायं, और सर जेब में रखलें तो ? कोई जान भी नहीं पायगा। फिर भी कक्षा-अध्यापक की बात को काटते नहीं बना। उदासी के साथ सिर हिलाकर 'हां' कह देना पड़ा।

६

दशहरे की छुट्टी में महिम आलतापोल आया। किसीसे सुना कि सूर्यकान्त अपनी छोटी लड़की को लेकर घोष माटी के घर आये हैं। लीला विधवा है। ओह, इतनी-सी उम्र में ही विधवा हो गई! अभागी। बाप भी अभागे हैं। इन दिनों वह लीला की ससुराल में ही रहते थे। समधिन यानी लीला की सास नाराज होती, पीठ-पीछे भला-बुरा भी कहती। फिर भी दोनों समय भात मिल जाता था। पर अब वह घोंसला छूट गया। दामाद ननीभूषण का देहान्त हो गया।

वह मरा भी तो फांसी लगाकर। खाते-पीते मध्यम वर्ग का लड़का था। दूरदर्शी बाप-दादा जमीन-जायदाद जोड़ गये थे। उसमें से कुछ तो सीर थी, बाकी बटाई पर। सीर से सालभर के खर्च का धान मिल जाता था और काश्तकारों से जो आमदनी होती, उससे लगान दिया जाता, कपड़े-लत्ते बनवाये जाते और ऊपरी खर्च चलता। लड़कों को कुछ न करना पड़े, इसका बाप-दादे अच्छा-खासा इन्तजाम कर गये थे, पर अब जमाना बदल गया। सारा हिसाब बिगड़ गया। खेत में अब धान भी उतना नहीं होता। मंहगाई बहुत बढ़ गई है। आमदनी से खर्च नहीं पूरा होता। नौकरी से कुछ कमाना जरूरी हो गया है।

पर खानदान की रीति-रिवाज कुछ ऐसी थीं कि ननीभूषण पढ़-लिख नहीं पाया था। सिफारिश भी तो नहीं थी, फिर नौकरी कहां मिलती! मां की जली-कटी के साथ-साथ लीला भी उल्टी-सीधी सुनाने लगी। एक दिन बात का बतंगड़ बन गया। कमरे की छत के शहतीर से रस्सी बांधकर ननीभूषण ने गले में फंदा लगाया और झूल गया। विधवा बेटी को लेकर सूर्यकान्त दूसरे ही दिन घोषमाटि के पुरखों की टूटी-फूटी झोंपड़ी पर लौट आये।

सूर्यबाबू के घर शानदार दुर्गापूजा होती है। इस इलाके में इस पूजा पर लोगों की बड़ी श्रद्धा है। जहां भी रहें, सूर्यबाबू कम-से-कम दशहरे पर घर जरूर आते हैं। अब तो यहीं जम ही गये। पहले तो दुर्गापूजा का खर्च

र के सभी हिस्सेदार बंटाते थे, पर सूर्यबाबू गरीब मास्टर थे। अपना हिस्सा नहीं जुटा सकते थे। ताऊ के पोते सब-के-सब खाते-पीते हैं। एक टेशन-मास्टर हैं, एक पुलिस दरोगा हैं, केदारनाथ किसी जमींदारी स्टेट के तहसीलदार हैं। उनकी आमदनी सबसे ज्यादा है। पुरखों का नाम ऊंचा हो, इसलिए लोगों को उठाने-बैठाने और खिलाने-पिलाने का उन्हें बहुत शौक था। गलती केदारनाथ की नहीं थी। उन्होंने तो कहा था, 'चाचाजी, बराबर का हिस्सा मैं नहीं मांग रहा हूं, पर कुछ दे दें।"

सूर्यबाबू की हैसियत इतना देने की भी नहीं थी। कहां से देते! मास्टरी की नौकरी से भला दुर्गापूजा-समारोह हो सकता था! इतने दिन निकल जाने के बाद उन्हें बेटी के भात पर जीना पड़ा।

अब दुर्गापूजा में घरवालों के नाम के साथ सूर्यकान्त का संकल्प नहीं होता। इससे सूर्यबाबू को कोई दुःख नहीं होता। कहते हैं, "मैं बुड्ढा आदमी, किनारे के पेड़-जैसा हूं। किसी तरह दिन बिताने हैं! भला, दुर्गा माता मेरी अब क्या भलाई करेंगी!"

मान-अपमान अब सूर्यबाबू को नहीं डिगा पाता। रानी अपना सिर पीटती थी—"बाबूजी, आप मत जाइये। सामने खड़े होकर अपमान सहन करने क्यों जाते हैं? पर जब कुम्हार यहां-वहां आकर पाट पर दुर्गा की प्रतिमा गढ़ने लगता तो घोषगांति के लिए दिल छटपटाने लगता। गांव चले जाते हैं, फिर पहले की तरह ही 'आइये, बैठिये' कहकर लोगों का स्वागत-सत्कार करते हैं। कमाऊ भतीजों पर रोब जमाते हैं, बहुओं और नाती-पोतों की खबरदारी रखते हैं। जैसे वे सब एक ही परिवार के सगे हों, ऐसा अपनापन जताते हैं। भतीजों को देखकर अच्छा लगता है। बारहों महीने वे अपने घर के मालिक होते हैं। कोई दो-चार दिन के लिए सूर्यबाबू अभिभावक बनकर उनको समझा-बुझा देते हैं, डरा-धमका देते हैं। इतने दिनों के लिए भतीजे भी कन्धे पर से घर-गृहस्थी का बोझ उतारकर हल्के हो लेते हैं। प्रबल प्रतापी दरोगाजी में भी कुछ बचपन और विनोद आजाता है। पुराने तालाब के बीच से कमल का फूल तोड़ने गये तो डोंगी कीचड़ में फंस गई। लौटना मुश्किल होगया। पानी भी तो नहीं था कि तैरकर आते। कीचड़ कमर तक है, इसलिए चलकर भी नहीं

आया जाता। चाचा सूर्यबाबू के कानों में बात पहुंची तो हल्ला करने लगे। दरोगा की पत्नी मनोरमा सात लड़कों की मां है। पति पर डांट पड़ते सुनकर मुस्करा उठती है।

ऐसे हैं सूर्यकान्त! उनकी मुसीबतों की खबर सुनकर महिम घोषगांति गया। घर के ठीक नीचे नदी है—सती घाट। सूर्यकान्त की परदादी वहीं पर सती हुई थीं। घाट अब तो है नहीं। खाली एक बरगद का पेड़ है। नदी भी अब दूर हट गई है। जो बचा है, उसे नदी कहना संभव नहीं है। बरसात के अलावा उसमें पानी नहीं रहता। जंगल ही है। होगला, सेवार और करेमा की बेलें ऊपर से नदी को ढंके रहती हैं। गाय, बकरियां चरते समय उसीके ऊपर-ऊपर बड़ी दूर तक चली जाती हैं। अब तो इसकी यह हालत है, पर किसी जमाने में उसे पार करते समय नाव पर बड़े-बड़े हिम्मतवालों का भी कलेजा दहल जाता था। हैलीडे साहब की लिखी किताब में सारी बातें मिलती हैं। हैलीडे साहब उन दिनों जिले में कलक्टर थे। आंखों-देखी बहुत-सी घटनाएं जोड़कर बंगाल के सम्बन्ध में वह किताब लिख गये हैं। सती की कहानी उसमें भी मिलती है।

बरगद के पास ही श्मशान था। लाख मुर्दे उसमें अबतक जल चुके थे, इसलिए उसे 'महा-श्मशान' कहा जाता है। शव-यात्रा करनेवाले मुर्दे को उतारकर उसी बरगद के नीचे विश्राम करते हैं। बरगद की जड़ और झाड़ियों के बीच जब-तब ज्वार का पानी खलबला उठता था। सूर्यकान्त के परदादा रामजीवन मर गये। पहली पत्नी का लड़का और उसके बहू-बेटे सभी थे, फिर भी आखिरी उम्र में उन्होंने नई शादी की थी। शास्त्र के अनुसार तो नई बहू को विधवा का वेश धारण करने की प्रथा थी, पर वह अड़ी रही—चूड़ी नहीं तोड़ेगी, सिन्दूर नहीं पोंछेगी, बिना किनारी की साड़ी नहीं पहनेगी, यानी विधवा का बाना नहीं धारेगी।

फिर असली बात खुल गई। नई बहू सती होगी। पति के साथ उसी चिता में जल जायगी। बहू-बेटे समझाने लगे—पिताजी जमाने तक संसार में धर्म-कर्म करके अपनी साधों को सोलहों आने पूरी करके स्वर्गवासी हुए, पर तुम इस उम्र में किस दुख से जलकर मरोगी, मां?"

नई बहू ने एक भी नहीं सुनी। खुश और निश्चिन्त रही। माथे पर

सिन्दूर, लाल किनारी की साड़ी पहने थी। दो-चार कोस से आदमी सती देखने के लिए इकट्ठे होने लगे। श्मशान तो क्या, जैसे मेला लगा हो। बहू-बेटियां डिब्बे में सिन्दूर भर-भरकर साथ लाई। सबने नई बहू के माथे से छुआकर डिब्बा संभालकर आंचल में बांध लिया।

ये सब हैलीडे साहब की लिखी बातें हैं। उन दिनों वह गांव के छोर पर एक मैदान में तम्बू खड़ा करके रह रहे थे। उस दिन सवेरे जल-पान के बाद कुछ साथियों को लेकर चिड़ियों का शिकार खेलने के लिए निकले। रास्ते में ही किसीने उन्हें सती के बारे में बता दिया। उन दिनों सती का कानून नहीं लागू था, फिर भी अनुष्ठान की बात कभी-कभी ही सुनाई पड़ती। शिकार छोड़कर साहब ने घाट की ओर घोड़े का मुंह फेर दिया। भीड़ ने सहमकर साहब के लिए रास्ता बना दिया। साहब चिता के पास नई बहू के सामने जा खड़े हुए। मुंशीजी की मारफत बातें होने लगीं। साहब की बातें मुंशीजी बंगला में बहू को बताते, फिर बहू की बात साहब को अंग्रेजी में सुनाते।

साहब ने पूछा, "तुम क्यों जलने जा रही हो ?"

नई बहू ने कहा, "मैं अपने पति के पास जा रही हूं। पति को छोड़कर नहीं रह सकती।"

"आग में चलकर मरने से कितना कष्ट होता है, यह शायद तुम्हें नहीं मालूम है।"

नई बहू हँसकर बोली, "बहुत कष्ट होता है क्या, देखूं, वह दीया मुझे पकड़ाइये।"

चिता पर घी डाला जा रहा था। एक बड़े-से घी के दीये में सात बत्तियां जल रही थीं। उसी दीये से चिता में आग लगाई जायगी। बहू के मांगने पर दीया उसके पास रख दिया गया। बांए हाथ के अंगूठे को बहू ने दीये की जलती बत्ती पर रख दिया।

हैलीडे ने लिखा है, "बड़ा आश्चर्यजनक दृश्य था। अंगूठा जलकर सिकुड़ गया, मांस जलने से बू आने लगी। बहू ने मुड़कर उसकी ओर देखा तक नहीं। वह हँसती हुई हमारे साथ बातें करती रही। मुझसे सहा नहीं गया तो मैं वहां से चला गया। लोगों से बाद में सुना कि जब चिता धू-

धूकर के जल रही थी, सवसे बिदा लेकर वह हँसते-हँसते आग की लपटों के भीतर घुसकर पति के शव का आलिंगन कर मानो आरामदेह विस्तर पर सो गई।"

कोई भी वर-वधू घोषगांति में आती है तो घाट पर उसकी पालकी उतारी जाती है। शादी के वाद जव कोई भी गांव की वेटी पहली वार ससुराल जाती है तो इसी वरगद के नीचे सिर झुकाकर आशीष मांगती है—"सती मां, हम दोनों के वीच कोई वाधा न आने पावे।" रानी जिस दिन जा रही थी, उसने भी यही प्रार्थना दुहराई थी और लीला ने भी।

सती घाट के रास्ते महिम सूर्यकान्त के घर पहुंचा। घर के वगल में ही सूर्यवावू अरण्डी की कुछ टहनियां, जो वढ़कर रास्ता रोकती थीं और आने-जाने में वाधा डालती थीं, काट रहे थे। महिम ने आकर उनके पांव छुये।

"कौन हो? अरे तू है, महिम? घर कव आया? चल, कमरे में वैठ।"

डगमगाती दीवारों की मरम्मत करके कमरे को किसी प्रकार रहने लायक वना लिया गया था। लीला वरामदे में दो मूढ़े रख गई, वोली कुछ नहीं। जैसी आई थी, चुपचाप वैसी ही चली गई। महिम ने वहुत दिनों वाद उसे देखा—कैसी हालत होगई है इसकी! देखकर आंखों में आंसू आ जाते हैं।

सूर्यवावू ने कहा, "मैं अव और कितने दिन जीऊंगा? मेरे वाद वेटी की क्या हालत होगी, यही चिन्ता लगी रहती है। कच्ची उम्र में है। अभी सारी जिन्दगी काटनी है। मेरी परदादी किसी जमाने में सती होगई थीं। अपनी वेटी है, फिर भी सोचता हूं—अगर वही रीति-रिवाज रहते, तो वहुत-सी परेशानियां खत्म हो जातीं।"

फिर महिम से वोले, "तू कलकत्ता रहता है, यह मुझे मालूम है। माछना का सातू घोष तुझे कलकत्ता ले गया है। सव ठीक है न?"

महिम वोला, "ठीक हूं, मास्टरसाहव। सातूदादा का काम छोड़कर अव मैं एक स्कूल में अध्यापक हो गया हूं।"

सूर्यकान्त की वुढ़ापे की धुंधली आंखें चमक उठीं। उन्होंने महिम की

ओर देखा। देर तक देखते रहे। महिम को लगा, जैसे उनकी दोनों आंखों से स्नेह और आशीर्वाद बरस रहा हो। सूर्यबाबू ने कहा, "अच्छा किया। इससे बढ़कर कोई और पेशा नहीं है।"

बातों-बातों में फिर बेटी का जिक्र आगया। बोले, "मेरा बड़ा भतीजा पुलिस दरोगा है न, उसका साला यहां आया है। वह कलकत्ते में पढ़ता है। वे कोशिश करके लीला को ट्रेनिंग स्कूल में भरती करवा सकते हैं। पास हो जायगी तो कार्पोरेशन के स्कूल में कहीं-न-कहीं मास्टर हो जायगी तू क्या कहता है, महिम ?"

महिम ने कहा, "अच्छा तो है। आप हमेशा तो उसकी देख-रेख कर नहीं सकेंगे। अच्छा होगा, एक सहारा मिल जायगा।"

"मैं भी यही सोच रहा हूं। तू किस स्कूल में है, यह तो नहीं बताया ?"

"भारती इन्स्टीट्यूशन में।"

"बाप रे, बड़ा भारी स्कूल है। हम लोगों का स्कूल तो उस हिमालय पहाड़ जैसे स्कूल के सामने मिट्टी का ढेर भर है। वहां के कितने ही छात्र बहुत मशहूर हुए हैं। अच्छे छात्रों को पढ़ाकर तुझे आनन्द मिलेगा, तेरा जीवन सार्थक हो जायगा।"

महिम ने कहा, "नाम तो इतना बड़ा है, पर वेतन बहुत थोड़ा देता है।"

५ "कितना ?" सूर्यकान्त ने पूछा।

"आनर्स ग्रेजुएट हूं। इसीलिए मुझे चालीस मिलते हैं। जो बी. ए. पास नहीं हैं, उन्हें और भी कम मिलता है।"

सूर्यकान्त ने कहा, "खाते में चालीस लिखते हो ! असल में देता कितना है ?"

"चालीस ही देता है।"

"कितनी दफे में देता है ? यानी हमारे स्कूलों में छात्रों से जैसे-जैसे फीस इकट्ठी होती रहती है, उसी हिसाब से किसी अध्यापक को दस, किसी को पांच देते रहते हैं। तुम्हारे यहां क्या नियम है ?"

"हम लोगों को तो इकट्ठा ही मिल जाता है, हर महीने की पहली तारीख को।"

धमकी-सी देते हुए सूर्यकान्त ने कहा, "ताज्जुब होता है, तू उस स्कूल

की बुराई कर रहा है। मास्टर को क्या लाटसाहब के बराबर वेतन मिलेगा ?"

"आप नहीं जानते, मास्टरसाहब ! आजकल चालीस रुपये में किसी दफ्तर के लिए दरवान भी नहीं मिलता।"

सूर्यकान्त बोले, "तेरा काम तो दरवान का काम नहीं है, बेटा, मास्टर का काम है। तनख्वा के अलावा और क्या मिलता है दरवान को ? तुझे तो और भी बहुत-कुछ मिल जायगा। खर्च पूरा पड़ जायगा।"

"हां, ट्यूशन मिल जाता है, यह तो ठीक है। कई तो सात-सात, आठ-आठ ट्यूशनें कर लेते हैं। वे अपना खर्चा इसी तरह पूरा कर लेते हैं, पर मुझसे यह नहीं होता, मास्टरसाहब। दो ट्यूशनें करने में ही मैं थक जाता हूं। छोड़ देने का मन करता है। ट्यूशनें करने की इच्छा ही नहीं होती।"

सूर्यकान्त ने कहा, "मैं खर्च पूरा करने के अर्थ में नहीं कह रहा था। इतने लड़कों के बीच बैठकर तिल-तिल करके उन्हें आदमी बना देने से आत्मा की बड़ी तृप्ति होगी। शिशु को बड़ा करने में जो आनन्द मां को मिलता है, वैसा ही यह भी है। यह आनन्द एक सर्जक या कलाकार को ही मिलता है। रुपया-पैसा, सुख-भोग से ही जिन्दगी में सब-कुछ नहीं मिल जाता। जो जीवन आदर्श नहीं होता, वह पशु जैसा होता है।"

सूर्यकांत जीवटवाले व्यक्ति हैं। अब तो ऐसे आदमी दुर्लभ होते जा रहे हैं। वह मूढ़े पर बैठे थे। महिम के लिए भी लीला एक मूढ़ा दे गई थी। महिम उसपर नहीं बैठा। ताड़ की चटाई पर जमीन पर ही बैठ गया। सूर्यकान्त जैसे व्यक्तियों के पैरों के पास बैठना तो भाग्य ही है।

सतीघाट के विशाल बरगद के ऊपर की कुछ टहनियां दिखाई पड़ रही थीं। सूर्यकान्त की निगाहें वहीं टिकी रहीं। कहने लगे, "चारु हमारा छात्र था। आदर्श के लिए उसने जान दे दी। मेरी परदादी उस जमाने की बहुत मामूली स्त्री थीं, पर वह जिसे आदर्श मानती थीं, उसके लिए उन्होंने हँसते-हँसते जान दे दी। विदेशी साहब मुग्ध होकर उनका वर्णन लिख गये हैं। वे दोनों एक ही जाति के हैं। मैं चारु और अपनी परदादी में कोई फर्क नहीं देखता। तुझसे एक बात कहूंगा, तूने इन्सान बनाने का काम लिया है, इस व्रत की अवहेलना मत करना। कक्षा तो मंदिर है, वहां नित्य बाल-गोपालों की सेवा होती है। जैसा मन लेकर लोग मंदिर में जाते हैं

वैसा ही मन लेकर कक्षा में जाया करना ।

देर तक बातें होती रहीं । घोषगांति में महिम ने आधा दिन बिता दिया । जब लौटने लगा तो उसे लगा कि वह अब एक बेहतर इन्सान बनकर लौट रहा है ।

बड़ी बहन सुधा एक दिन बातों-बातों में बोलीं, "खुशी की याद है, महिम ? सातू घोष की बहन, खुशी । अरे, ऐसे सिर हिला रहे हो, जैसे कुछ समझ ही नहीं रहे हो । खुशी की मां को तुम बहुत पसन्द आगये हो । एक दिन की बात तो सुनो..."

बेटी के मुंह से बात छीनकर सेन गृहणी स्वयं बताने लगी, "खुशी की मां एक दिन बैलगाड़ी में बेटी को लिये माछना से यहां आ पहुंची । गांव में लोग ऐसा नहीं करते । आकर कहने लगी, महिम की मां तुम्हारे हाथों में बेटी देने आई हूं । इसे घर में लावें या फेंके, यह तय कर लीजिये । चीउड़ा, दूध, बताशा, अमावट, सब खिला-पिलाकर बिदा किया । फिर सोचती रही, क्या कहूं ? इधर सुधा अड़ गई कि उस ऊंचे माथेवाली और चपटी नाकवाली लड़की को भाई की बगल में नहीं देखना चाहती ।"

सुधा बोली, "मैंने ही आखिर तरकीब निकाली, अगर सीधे-सीधे न कह सको तो बड़े मामा का नाम लेकर कह दो । मामा जन्मपत्री मिलाते हैं न । तुम भी लड़की की जन्मपत्री मंगा लो । फिर विचारने के बाद जैसा होगा, वैसा किया जायगा !" सुधा इतना कहकर हँसकर बोली, "बेटी-वालों से पीछा छुड़ाने की सबसे अच्छी तरकीब है, जन्मपत्री । पीछा छूट जाय तो हम ऊपर से अफसोस जाहिर कर दें, वे नाराज भी नहीं हो सकते । योग जो नहीं बैठा ।"

मां ने कहा, "सुन रही हूं, इतने दिनों बाद अब कहीं सम्बन्ध जोड़ रहे हैं । पश्चिम बाड़ी की छोटी बहू कह रही थी । बातचीत पक्की होगई है । अगहन में ब्याह होगा । लड़का दसवीं पास है । जज की अदालत में पेशकार है । दुलहिन की मां मुंह लटकाये फिर रही है । छोटी बहू कह रही थी कि न जाने किस नज़र से उन्होंने महिम देवर को देखा कि कोई और लड़का पसन्द ही नहीं आता । पर किया क्या जाय ? इतनी बदसूरत लड़की के

साथ कैसे व्याह होगा ! सुना, खर्च-वर्च भी नहीं कर सकते । सातू के कार-बार की हालत ठीक नहीं है ।"

महिम के लिए यह खवर विल्कुल नई थी, पर उसे आश्चर्य नहीं हुआ । "हालत और भी विगड़ेगी । उसका व्यापार एकदम खतम हो जायगा । इतनी वेईमानी से व्यापार नहीं चलता । मैंने क्या योंही उसे छोड़ दिया, मां !"

सुधा बोली, "शेखी तो वड़ी मारते हैं ! इसी वरामदे में वैठकर उस वार कितनी लम्वी-चौड़ी हांक रहे थे ।"

महिम ने कहा, "किसी दिन कहीं यह न सुनाई पड़े कि सातकौड़ी घोष जेल चले गए तो वड़ी वात है । उनका नमक खाया है । कुछ कहना नहीं चाहता, पर वह जिस रास्ते चल रहे हैं, उससे उनकी किस्मत में जेल ही वदी समझिये ।"

सेन गृहणी सिहरकर बोलीं, "तू चला आया, अच्छा ही किया, वेटा । ईमानदारी से रूखी-सूखी रोटी मिले तो वही भली है ।"

अभी डेढ़ महीने की छुट्टी वाकी है, फिर भी महिम विजयादशमी के दूसरे दिन टिन के वक्से में अपने कपड़े सम्भालने लगा ।

सेन गृहणी वोलीं, "यह क्या कर रहा है ? स्कूल तो जगद्धात्री पूजा के वाद खुलेगा । अभी से कहां जाने को तैयार हो रहे हो ?"

"यह छुट्टी तो स्कूल से मिली है, मां । स्कूल खुलते ही परीक्षा होगी । सालभर किताव को हाथ तक नहीं लगाया । एक महीने में साल-भर की पढ़ाई खतम करानी होगी । वच्चों से दुगुनी-तिगुनी मेहनत मास्टर को करनी पड़ेगी नहीं तो साल भर के पैसे क्यों दे रहे हैं ?"

सुधा हँसकर सिर हिलाती हुई वोली, "असली वातें ये सव नहीं हैं, मां । सातू घोष की वहन से भले ही शादी न हो, पर और लड़कियों की कमी थोड़े ही है । इधर-उधर वीसियों पड़ी हैं । आप कुछ जुगत करो तो मेरा भाई खूंटा तोड़ने की जल्दी न करे ।"

महिम ने कहा, "परीक्षा के पहले व्याह के वहाने छुट्टी नहीं मिल सकती । व्याह तो क्या, किसीके मर जाने पर भी कहेंगे कि पहले किताव

में खास सवालों पर निशान लगा दो, फिर गंगा-यात्रा करो। बड़ी मशक्कत का काम है।"

महिम के मुंह से गंगा-यात्रा की बात सुनकर मां को बुरा लगा। उन्होंने केवल इतना ही पूछा, "कितनी ट्यूशनें करते हो ?"

"एक सुबह, एक शाम। उतने ही से दम टूटने लगता है। स्कूल-मास्टरी के अलावा मैं बस दो ही ट्यूशनें करता हूं, इसीलिए दूसरे मास्टर मुझे बिल्कुल ही निकम्मा समझते हैं। पर मुझसे वे दो भी नहीं होते। नौकरी पक्की हो जाने पर खर्च-वर्च चलने-भर की तनख्वा मिलने लगेगी तो मैं ट्यूशनें एकदम छोड़ दूंगा। लड़कों को अच्छी शिक्षा देने के लिए मैं भी पढ़ूंगा और चिन्तन करूंगा। गर्मियों की सात हफ्ते की पूरी छुट्टी में घर रहकर आम-कटहल खाऊंगा। ट्यूटर बनकर घर-घर पढ़ाई का सौदा करते घूमते रहना अच्छा नहीं लगता। इसमें मर्यादा नहीं रहती। लड़के भी श्रद्धा नहीं करते।

७

दशहरे की छुट्टी बीत गई। स्कूल खुल गया। सालाना परीक्षा होने ही वाली है। दुखीराम नोटिस लेकर दौड़-धूप करता रहा कि छुट्टी होने पर मास्टर लोग घर न जायं, सब लाइब्रेरी में इकट्ठे हों, काम है। हैडमास्टर का चेहरा गम्भीर है। छुट्टी होने से पहले ही कमरे से निकलकर खड़े हैं। दुखीराम लाइब्रेरी के कमरे से एक मास्टर को बुलाकर पीछे के दरवाजे से हैडमास्टर के कमरे में भेज रहा है। एक के चले जाने पर दूसरे आते हैं। हैडमास्टर के हाथ में डायरी है। यह उनकी निजी डायरी है। उसे कोई और नहीं देख सकता, चित्तबाबू भी नहीं। हाथ की डायरी देखकर धीरे-धीरे हर मास्टर को बताते जाते हैं कि उन्हें किस कक्षा का प्रश्न-पत्र बनाना है और किस कक्षा की कापी देखनी हैं। ये बातें एकदम गुप्त हैं, कोई किसी दूसरे से न कहे। किसके पास किस कक्षा की कापी और प्रश्न-पत्र हैं, किसीको न मालूम होने पावे।

दरवाजे के वाहर खड़े-खड़े चित्तवाबू मुस्करा रहे हैं और धीमे स्वर में कह रहे हैं कि हैडमास्टरसाहव तो बेकार इतना परेशान हो रहे हैं। कहीं ऐसी वातें छिपी रहती हैं। सव अध्यापक अपने-आप एक-दूसरे के कानों में फुसफुसायंगे। पूछना भी नहीं पड़ेगा। पर महिम शायद ऐसा नहीं करेगा। उसके पास केवल दो ही ट्यूशन हैं—एक लड़की को पढ़ाता है, जिसके वारे में किसीसे कुछ कहता ही नहीं है। एक लड़का है, जो इसी स्कूल का है। पर कायदे के वाहर वह एक नम्वर भी नहीं वढ़ायगा, यह तो पक्की वात है। इसीलिए उससे भी किसीने कुछ नहीं पूछा, पर ताज्जुव की वात है कि विना पूछे ही दूसरों को सारा भेद लग गया।

करालीकान्त महिम के पास आकर वोले, "भई, हमारे पास तीन चैक हैं, ज्यादा नहीं, केवल तीन। नोटवुक है ?

"कैसा चेक ? क्या वात है ?"

महिम कुछ समझा नहीं था। नोटवुक की क्या जरूरत है ?

कराली हँसकर वोले, "आप नये-नये आये हैं, अभी वहुत-कुछ सीखना है। मैं पूछता हूं, क्या सिर्फ पढ़ायंगे ही ? वच्चों के पास होने की जिम्मेदारी क्या आपकी नहीं है ?"

महिम ने कहा, "पास कराने की जिम्मेदारी है या नहीं, यह तो नहीं कह सकता, पर वे पास हो जायं, यह जरूर चाहता हूं। अगर पास नहीं होंगे तो इतने दिन मैंने पढ़ाया क्या ?"

"सिर्फ पढ़ाने से ही कहीं लड़के पास होते हैं ? आप नये आये हैं, इसलिए आपको कुछ पता नहीं। चेक इसीलिए है। चेक का मतलव है एक कागज के टुकड़े पर लिखा हुआ लड़के का नाम, कक्षा और रोल नम्वर। साफ-साफ रोल नम्वर सुनने में वुरा लगता है। वाहरी लोगों के कान तक वात पहुंच सकती है। इसीलिए हम लोग चेक कहते हैं। ऐसे ही वहुत से चेक आयंगे। हम उन्हें तुरन्त नोट वुक में नोट कर लेते हैं—फलाने वावू के छात्रों के ये नम्वर.... फलाने वावू के छात्रों के वे नम्वर। कापी जांचते समय इन नम्वरों के साथ खास रियायत करनी पड़ती है। सोचना-समझना कुछ नहीं, उन्हें पास करना है और अच्छे नम्वर देना है। अगर ऐसा न करें तो ट्यूशनें छूट जायं। फिर आप भी जो चेक देंगे, दूसरे मास्टर

उनके साथ भी ऐसी ही रियायत करेंगे । बस, अदला-बदली है ।"

महिम ने रुखाई के साथ कहा, "मैं कभी किसीके पास चेक नहीं भेजूंगा ।"

"हां-ऽऽ, सिर पर बोझ नहीं है न, इसीलिए आज इतनी लम्बी-चौड़ी बात बोल रहे हो, पर जब इस लाइन में आगये हैं, तब भाई मेरे, यह सब करना ही पड़ेगा । आज नहीं, तो कल, कल नहीं तो परसों ! खैर छोड़ो, बाद की बाद में देखी जायगी, पर अभी ? आप चेक न दें, पर मैं तो तीन चेक आपको दिये जा रहा हूं । सम्भालकर रखलें ।"

महिम ने देखा, सब तीसरी के हैं । उसे तीसरी की ही हिसाब की कापी देखनी थी । उसने आश्चर्य से करालीबाबू की ओर देखकर पूछा, "आपको कैसे मालूम हुआ ?"

"ज्योतिष से ।"

"नहीं-नहीं, सच बताइये । हैडमास्टर ने मना किया था, इसलिए यह बात मैंने किसीको नहीं बताई । फिर भी आप कैसे जान गये ?"

कराली हँसकर बोले, "बस, हिसाब से ही जान गया हूं, भाई । सिर्फ जोड़-बाकी का हिसाब । आप गणित में आनर्स हैं । आपके पास ऊंचे कक्षा की हिसाब की कापियां ही आयंगी । दूसरी कक्षाओं का तो पता लग गया, पर तीसरी कक्षा की हिसाब की कापी किसके पास जायगी, यह पता नहीं लगा, तो जान गया कि आप ही के पास होगी ।"

गंगापदबाबू से बातें हो रही थीं । यही आदमी बस महिम को जंचा था । वह भी महिम का हाल-चाल पूछ लिया करते हैं । एक दिन कहने लगे, "कैसा लग रहा है, भैया !"

महिम ने कहा, "लड़के अच्छे हैं, पर आपके सामने साफ कह दूं । अध्यापक अशिक्षित हैं । इतना महान व्रत लिया है उन्होंने, पर रहते हैं बहुत छोटे दायरे में । बात-चीत हल्की करते हैं । मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता । बड़ा घिनौना जान पड़ता है । देखिये, मैं तो अच्छी तनख्वा की नौकरी छोड़कर यहां आया था । मन होता है कि यहां से भी छोड़ जाऊं । पर जब कक्षा में जाकर लड़कों के बीच बैठता हूं, तो यह सब बातें भूल-सी जाती हैं । उस समय बहुत अच्छा लगता है ।"

गंगापदबाबू पुराने मास्टर हैं। नये-पुराने, दोनों जमानों का उन्हें तजुर्बा है। धीरे-से बोले, "तुम्हें क्या चुभता है, यह मैं समझ रहा हूं, पर मास्टरों की निगाह से भी तो सोचकर देखो। ट्यूशन करते-करते उनके मगज में बच क्या रहता है? स्कूल उनके लिए आरामघर जैसा है। हाथ-पांव फैलाकर कुछ आराम कर लेते हैं। मौका पाने पर थोड़ा सो भी लेते हैं। हँसी-मजाक भी कर लेते हैं। क्लास में तो कोई देखनेवाला है नहीं, पर घर जाकर पढ़ाने में यह घपला नहीं चलता और न बिना ट्यूशनों के ही काम बनता है। दर-दर भटकने की साध किसे होती है? इतना बड़ा स्कूल है। ग्रेजुएट को तीस रुपये तनख्वा देते हैं और इतने में भी घमंड से जमीन पर पैर नहीं रखते। मास्टर भी इन तीस रुपयों को मुफ्त की कमाई समझते हैं, असली काम और कमाई तो स्कूल के बाहर ही है।"

ट्यूशनों को लेकर ही तरह-तरह की बातें होती रहीं। मोतीबाबू बहुत बड़े अमीर घर में गृह-शिक्षक हैं। वहीं खाते और रहते हैं। बेहिसाब आराम; गद्देदार बिस्तर, सिर पर नाचता हुआ पंखा, सुबह-सुबह बिस्तर में ही चाय पीते हैं। अगर चाय में जरा भी देर हो जाय तो उनका सिर दर्द करने लगता है। घंटी बजाते ही दो नौकर दौड़े आते हैं। मोटर स्कूल पहुंचा जाती है, फिर भी चार बजते ही स्कूल के फाटक के पास गाड़ी इन्तजार करती रहती है। किस्मत है साहब, किस्मत। पूर्वजन्म के सत्कर्म के बिना ऐसे घर में पैठ कैसे हो सकती है!"

जगदीश्वरबाबू कहने लगे, "मैं एक लड़की को पढ़ाता हूं। जरा उस घर की भी सुनिये! जभी पढ़ाने जाता हूं, सभी नाराज होने लगते हैं। लड़की नहीं, उसके मां-बाप। पढ़ने के कमरे में बैठकर मजे में अखबार पढ़ता हूं। लड़की की मां आकर कहती हैं—इतनी जल्दी आगये? स्कूल से आने के बाद लड़की को थोड़ा आराम भी नहीं करने देते? जरा सुनिये तो घड़ी में साढ़े सात बज रहे होते हैं। चार बजे स्कूल से लौटकर साढ़े तीन घंटे में भी लड़की को सुस्ताने का मौका नहीं मिलता। समझ गये? आठ बजते ही फिर उसकी मां आकर कहती है—बहुत हुआ, पाली को नींद आरही है। अब उसकी छुट्टी कीजिये। दूसरे दिन बाप आकर कहता है—आज पाली नहीं पढ़ेगी। उसकी मौसी, मौसेरी बहन सब आये हैं।

अगले दिन फिर कहते हैं—आज रहने दीजिये। आज सिनेमा जा रहे हैं। लौटने लगता हूं तो कहते हैं—थोड़ा रुक जाइये ! फिर महीने का पेशगी वेतन देकर कहते हैं—पाली की मौसी आई है दिल्ली से। महीने में जो वाकी दिन हैं, उतने दिन न आवें तो ठीक रहेगा। अगले महीने जाने पर मालकिन कहती हैं—पाली रोज-रोज नहीं पढ़ेगी। आप हफ्ते में तीन दिन आया कीजिये। ज्यादा पढ़ने से उसकी सेहत खराव हो जायगी ! सो अब वैसा ही चल रहा है। तीन दिन जाता हूं तो एक दिन पढ़ती है। पर ठीक पहली तारीख को पूरा वेतन मिल जाता है।

भूदेववावू दुखी होकर वोले, "मेरी भी सुनिये—मेरा पाला ऐसे से पड़ा है कि कुछ न पूछो। कहता है—सर, परीक्षा के समय इतवार को भी आया कीजिये। चलने लगता हूं तो कहता है—रेखागणित का यह प्रमेय समझाकर जाइये। रास्ते में भी कुछ दूर तक साथ-साथ आकर अंग्रेजी के मुहावरे पूछता रहता है। पढ़ाई की जाने कितनी चाह है, जैसे वेटा विद्यासागर वनकर रहेगा। समझता कुछ नहीं, वस शैतानी-ही-शैतानी है। एकाव ऐसे भी होते हैं, जो मास्टरों को सिर्फ तंग करते हैं। उन्हीं-में से वह भी है। मैं ब्राह्मण का वेटा हूं। मुझे तंग करके जान खा लेता है। देख लेना, परीक्षा के वाद कापी में गोल रसगुल्ले ही मिलेंगे। ओह, पूर्व-जन्म में जाने क्या पाप किया था, जो इस जन्म में नरक भोग रहा हूं। वहुत अच्छा नहीं, पर मामूली-सा भी कोई ट्यूशन मिल जाता, तो उस घर की ओर मुंह न करता।

महिम और भूदेववावू मेस लौट रहे हैं। स्कूल के सामने ही नई सड़क के मोड़ पर एक मकान वन रहा है। संगमरमर का फर्श, काले मोजेइक के वड़े-वड़े खम्वे। सीढ़ी के सामने शीशे की नक्काशी। वड़ा शानदार मकान है। भूदेववावू ने अन्दर जाकर दरवान से पूछा, "मालिक कहां के रहने-वाले हैं, दरवानजी ?

"जलपाई गुड़ी के चाय वगानों के मालिक वहुत पैसेवाले हैं।"

खुशी से डगमगाते हुए भूदेववावू लौट आये। वोले, "जलपाई गुड़ी जितनी दूर से कोई अपने साथ प्राइवेट मास्टर तो नहीं लायगा। आप क्या कहते हैं, महिमवावू ! दरवाजे पर कलश रखकर गृह-प्रवेश करेंगे, उस

दिन के लिए ज़रा ध्यान रखना होगा।"

फिर महिम को चेतावनी देते हुए बोले, "आप नहीं चाहते, यह तो मालूम है। इसीलिए आपसे यह बात कह दी, पर दूसरों के कान में न पड़े।"

८

महिम कक्षा में गार्ड की ड्यूटी पर है। पताक़ीचरण भी साथ में हैं। पताकीवाबू बड़े मेहनती हैं। घूम-घूमकर देख रहे हैं। ऐ यह, पेट क्यों फूला है? क्या कोई किताब-विताब छिपा रखी है? कमीज ऊपर उठाओ, दिखाओ...ओ लड़को, ब्लाटिंग पेपर की छीना-झपटी, अदला-बदली मत करो। क्या हम मूर्ख हैं? हमें कुछ मालूम नहीं है! स्याही पर ब्लाटिंग दवाते हो तो अक्षर उभर आते हैं।...ऐ काशी, बांई हथेली पर क्या लिखा है? देखिये महिमवाबू, ज़रा देख लीजिये, हथेली पर कापिंग पेन्सिल से जाने क्या लिख लाया है।...

महिम जितना-जितना देखता जा रहा है, उसे उतना ही अचरज हो रहा है—आखिर हम भी तो पढ़े थे, पर ये बातें तो कभी सोच भी नहीं पाते थे।

पताकीचरण हँसकर वोले, "आपको फिक्र करने के लिए किसने कहा। मैं अकेला ही कर लूंगा। आप लोग कस्बे के स्कूल में पढ़े हैं। कलकत्ते के शरारती लड़कों के वारे में आप कैसे जान सकते हैं! आपको कुछ नहीं करना है। मैं जब बाहर जाऊं, उस समय ज़रा देखियेगा।"

सचमुच ही दोनों आंखें फैला-फैलाकर पताकीवाबू कमरे में घूम रहे हैं। क्या मज़ाल कि उनकी आंखें बचाकर एक मक्खी भी उड़ जाय। महिम के रहने या न रहने से कुछ नहीं आता-जाता।

पताकीचरण बोले, "अगर कोई काम न हो तो बैठे-बैठे कुछ पढ़िये ही। यहां मैं अकेला ही देख लूंगा।"

यह वात महिम को जंच गई। एनसाइक्लोपीडिया की जिल्द सामने अलमारी में दिखाई पड़ रही थी। पढ़ने का मन हो रहा था। देखें शिक्षा के सम्बन्ध में उसमें क्या लिखा है ? पुराना संस्करण है तो क्या हुआ, पुराने मनीषियों के मनन-चिन्तन से तो परिचय होगा ही। बोला, "अच्छा, मैं एक किताव ले आता हूं।"

महिम करालीवावू को ढूंढ़ने लगा। स्कूल के व्यवस्थापक होने के नाते पता नहीं, कव क्या जरूरत पड़ जाय। कौन-सा काम आजाय, इसीलिए उनके ऊपर गार्ड का वोझ नहीं लादा गया। चित्तवावू वोले, "क्या यहां वैठे होंगे ? किसी काम के वहाने निकल गये होंगे, या घर जाकर सोते होंगे। इस वीच एकाव ट्यूशन ही पढ़ा आते हों तो भी आश्चर्य नहीं। ढूंढ़िये, शायद मिल जायं।"

दुखीराम ने कहा, "तम्बाकूवाले कमरे में देखिये। उसी ओर मैंने उन्हें जाते देखा था।"

करालीवाबू तम्वाकूवाले कमरे में ही मिल गये। सो रहे थे। अंधेरा कमरा, एक भी खिड़की नहीं। केवल एक दरवाजा भर था, उसे भी वंद कर दिया था।

"करालीवावू !"

"आं-ऽ-ऽ, क्या है ?" वह हड़वड़ाकर उठ वैठे। आंखें मलते हुए वोले, "महिमवावू, आप वुला रहे हैं ?"

"ज़रा ऊपर चलिये, मुझे एक किताव दीजिये।"

"किताव ? वह तो विनोद देगा। उससे कहिये।"

महिम वोला, "विनोद की किताव नहीं।"

खड़िया, झाड़न, फुटा, नक्शा और स्कूल में पढ़ाई जानेवाली कितावें विनोद के जिम्मे रहती हैं। कक्षा में जाते समय सव मास्टर अपनी जरूरत की चीजें उसीसे लेते हैं। इसपर विनोद घमंड से कहा करता है—"अगर एक दिन मैं स्कूल न आऊं तो सारा काम रुक जाय, खाली हाथ कक्षा में जाकर मास्टर पढ़ायेंगे क्या ?"

कोई मज़ाक कर उठता है, "विनोद, तुम मर जाओ तो ?"

विनोद तुरन्त जवाव देते हैं, "स्कूल ही खतम हो जायगा।"

महिम ने कहा, "करालीबाबू मैं टेस्ट बुक नहीं मांग रहा हूं। लाइब्रेरी से 'एनसाइक्लोपीडिया' लूंगा।"

"लाइब्रेरी की किताब ?" करालीबाबू चौंककर उसकी ओर ऐसे घूरने लगे, जैसे आसमान का कोई टुकड़ा कड़ाक से टूट पड़ा हो। बोले, "लाइब्रेरी की किताबों की अलमारी में तो ताला बन्द है।"

महिम उनका पीछा छोड़नेवाला नहीं था। बोला, "ज़रा कष्ट करके ताला खोलकर किताब दीजिये।"

"ताला तो खोल दूंगा, पर चाबी कहां है ?"

महिम समझ गया कि वह नाराज हो गये हैं। वह अध्यक्ष का आदमी है। इसीलिए मुंह पर कुछ नहीं कहते। चाबी के खोने का बहाना बना दिया।

फिर भी आहिस्ते-आहिस्ते वह महिम के साथ दो मंजिले पर गये, विनोद से पूछा, "लाइब्रेरी की अलमारी की चाबी क्या तुम्हारे पास है ?"

विनोद ने कहा, "आपने मुझे कब दी थी ?"

"हां-हां, याद आया। बहुत दिन होगये, इसीलिए तुम भूल रहे हो, विनोद। जिस साल जयंती मनाई गई थी, चारों ओर सफाई हो रही थी, उस समय अल्मारियां खोली गई थीं। फिर बन्द करके चाबी का गुच्छा तुम्हें दिया गया था। तुमने एक डिब्बे में रख दिया था, ढूंढ़ो तो !"

विनोद बोला, "डिब्बे में रखी थीं तो उसीमें होंगी !"

इतना कहकर बिस्कुटवाला एक छोटा-सा डिब्बा लाकर विनोद ने जमीन पर उलट दिया। जंग लगा हुआ ढेर चाबियों का एक बड़ा-सा गुच्छा उठाकर करालीबाबू बोले, "यह देखो, तुम्हारे पास है। यही तो है और तुम कहते हो कि कब दिया ?"

अलमारी के ताले में एक के बाद एक कई चाबियां घुसाकर उसे खोलने की करालीबाबू ने बड़ी कोशिश की, पर हारकर बोले, "खुल नहीं रहा है ?"

"फिर क्या हो ?"

करालीबाबू कुछ रुखाई से बोले, "आपकी फरमाईश भी कंस-वध की फरमाइश से कम नहीं है। जो नहीं होने का उसीके लिए कह रहे हैं।

ताला खुल भी गया तो भी पल्ले नहीं खुलेंगे। कब्जे में जंग लग गया है? ज्यादा जोर-जबरदस्ती करने से अल्मारी भी टूट जायगी।"

महिम ने परेशानी से पूछा, "ताज्जुब है, लाइब्रेरियन कभी किसीको पढ़ने के लिए किताब ही नहीं देता?"

"जैसा दाम वैसा काम, पांच रुपये का लाइब्रेरियन किताबें देने-लेने का झंझट क्यों उठावेगा?"

इतना कहकर तुरन्त ही मुलायम पड़कर कहने लगे, "किताब पढ़नी है, तो घर से लेते आइएगा। क्या फायदा होगा यहां की किताबें लेने से। हाथ लगाते ही पन्ना-पन्ना अलग हो जायगा। ये किताबें खरीदनेवाले तो जाने कबके सिधार गए। फिर किताबें ही कबतक रहेंगी।"

एक दिन पताकीचरण दूसरी कक्षा का एक प्रश्नपत्र लाकर महिम से बोले, "देखिये साहब, प्रश्न का तरीका तो देखिये। यह तो आई. सी. एस. की परीक्षा के लिए शायद ठीक होता। ये दो इक्वेशन हैं। सोचा जरा निकालकर देखूं। एक कागज भर गया, फिर भी कोई नतीजा नहीं निकला। स्कूल के लड़कों को ऐसे सवाल दिये गए हैं। इनकी अक्ल तो देखिये।"

महिम ने उनका निकाला हिसाब देखा, फिर बोले, "पताकीबाबू, आपने जिस तरह शुरू किया है, उससे काम नहीं बनेगा। ५ ब है, उसे तोड़कर ३ ब जमा २ ब कर लीजिये। फिर फार्मूले में खप जायगा।

पैन्सिल और कागज लेकर महिम ने ज़रा-सी देर में हिसाब निकाल दिया। पहला खतम करके दूसरा भी निकाल दिया—"देखिये, यह रहा।"

पताकीबाबू की आंखें फटी रह गईं। बोले, "आपकी पढ़ाई-लिखाई के क्या कहने, साहब। आपकी तरक्की कौन रोक सकता है। आपकी होशियारी की बात एक बार लड़कों के बीच फैल जाय, तो ट्यूशनों की भरमार हो जाय, इतनी कि आप कर भी न पायें।"

आखिरी घंटी हो रही थी। कापी जमा करने का समय हो रहा था। लड़के बाहर जाने के लिए उतावले हो रहे थे।

नये साल की पाठ्य पुस्तकें चुनने का समय आ गया। कई कम्पनियों के एजेन्ट आरहे थे। हैडमास्टर के कमरे के बाहर भीड़ लगाकर पांच-सात

एजेन्ट खड़े थे। उनमें से पी० के० पब्लिशिंग हाउस का प्राणकृष्ण पाल का बुलावा सबसे पहले आया। यह तो जानी हुई बात थी कि दि. घ. दा. की लिखी किताब माडल ट्रान्सलेशन प्रकाशित करने की बात उनसे पक्की हो गई थी।

प्राणकृष्ण के भीतर आने पर हैडमास्टर ने कहा, "बैठ जाइये। दस बजे से ही आप लोग का हमला शुरू हो गया। अभी तक एक भी काम नहीं हो पाया।"

प्राणकृष्ण ने कहा—"बस इसी महीने की बात है। प्राची शिक्षालय के हैडमास्टर बड़े खिसिया रहे थे। अगल-बगल के दो स्कूल हैं। एक के हैडमास्टर आप हैं। आपकी किताब हम छाप रहे हैं। समझ लीजिये, इसीलिए वह जलते हैं। मैंने भी उन्हें नहीं बख्शा। कह दिया कि देखिये साल-भर में बस एक महीना आकर हम आपको सलाम बजाते हैं। इसके बाद फिर इधर फटकने भी नहीं आयंगे। दूकान पर आप आयंगे तो बैठने के लिए स्टूल बढ़ा देंगे।"

हैडमास्टर ने कहा, "अबकी हमारी किताब का क्या करेंगे? पिछली बार तो कुल सत्तावन रुपये पकड़ा दिये थे।

"कोशिश तो हो रही है, साहब, कस्बे के स्कूलों में हैडमास्टरों के नाम साढ़े चार सौ चिट्ठियां भेजी जा चुकी हैं। छपी हुई नहीं, क्योंकि उन्हें तो कोई पढ़ता ही नहीं। हाथ से लिखी गई आपकी चिट्ठियां भेजी गई है।"

हैडमास्टर आश्चर्यचकित होकर बोले, "क्या कह रहे हैं आप? मैंने किसे चिट्ठी लिखी है?"

प्राणकृष्ण ने हंसते हुए कहा, "लिखा तो हमारे आदमी ही ने, पर है आपके लेटर-पैड पर। आपकी लिखावट भला किसने पहचान रखी है! जिसे-जिसे चिट्ठी मिलेगी, वही कृत्य-कृत्य हो जायगा कि इतने बड़े स्कूल के हैडमास्टर ने अपनी किताब स्कूल में लगवाने के लिए अपने हाथ से चिट्ठी लिखी है। लगता है, काम बन जायगा। इसके अलावा भी आपको कुछ करना पड़ेगा, साहब। इसीलिए मैं आया हूं।"

"कहिये, क्या करना पड़ेगा?"

बैग में से दस-बारह किताबें निकालकर प्राणकृष्ण ने मेज पर रख

दीं और बोला, "अपने स्कूल में इन किताबों को लगाना पड़ेगा आपको।"

"यह कैसे हो सकता है ? मास्टर स्वयं किताबें चुनते हैं। इस स्कूल में यही नियम है।"

"बहुत अच्छा नियम है। मुझे छोटे मुंह बड़ी बात नहीं कहनी चाहिए। जो पढ़ाते हैं, किताबें चुनना तो उन्हींका काम होना चाहिए। हम तो किताबें तैयार करने में हाल-बेहाल हो जाते हैं। पर वोट के जोर पर मेम्बर बनकर लोग टांग अड़ाते हैं। यह क्या है ? हां, तो मास्टर इन किताबों को पसन्द ही करलें, ऐसा इन्तजाम कर दीजिये। हमारी ओर से मास्टरों को कैलेण्डर और जेबी-गीता भी भेजी जायगी। और ज्यादा दाम की किताब लगा दें, तो नये साल की एक-एक डायरी भी भेजेंगे।"

कुछ किताबों के दो-दो, चार-चार पन्ने उलट-पुलटकर दिखाते हुए फिर कहना शुरू किया, "आप देख ही रहे हैं, किताबें ऐसी-वैसी नहीं हैं। इनके लेखक भी हैडमास्टर या असिस्टेंट हैडमास्टर हैं। आप इनकी किताबें लगाइये, वे भी आपकी किताब लगा लेंगे। पक्की बात कर आया हूं। काम बन जाने पर छपी हुई सूची आपको दिखा जाऊंगा।"

पर हैडमास्टर ने कहा, "मैं अभी कुछ नहीं कह सकता। मास्टर हैं, फिर कमेटी है। उसमें हरेक का सिफारिशी होता है।"

प्राणकृष्ण का मुंह लटक गया। बोला, "उन स्कूलों में क्या कमेटियां नहीं हैं ? नाराज मत होइये, साहब। किताब किसी और ने लिख दी। आपको उसमें क्या करना पड़ा। छपकर आ गई तब तो आपने उसे देखा। फिर अगर उसकी खपत के लिए इतना भी नहीं कर सकते, तो मुनाफे का हिस्सा कम होने की बात क्यों उठे ?"

हैडमास्टर ने प्राणकृष्ण की ओर देखा, यह आदमी कोई और ही है। यह भारती इन्स्टीट्यूशन का मास्टर नहीं है। छात्र भी नहीं है। हर साल घर आकर नगद पैसा पकड़ा देता है। उन्होंने मुलायम आवाज में कहा, "अच्छा रख दीजिये, देखूंगा।"

प्राणकृष्ण बोला, "सब नहीं तो कम-से-कम आठ किताबें तो लगा ही दीजिये। हां, एक बात और है। सुनिये, कम-से-कम आठ किताबें लगा दें, तो हम आपके यहां की किताबों की लिस्ट मुफ्त में छाप देंगे।"

हैडमास्टर ने सिर हिलाया। बोले, "यहां उसकी जरूरत नहीं है। भारती इन्स्टीट्यूशन को पैसे की क्या कमी है ? हम मुफ्त काम क्यों लें ?"

प्राणकृष्ण ने कहा, "हम छाप देंगे। आठ नहीं, तो कम-से-कम छः तो लगवा ही दीजिये। सूची का बिल जैसा कहेंगे वैसा ही बना देंगे और पैसा एक भी नहीं लेंगे। आपको दे जाऊंगा। फिर आपका जो मन हो, वह कीजियेगा। मास्टरों का कोई कोष हो तो उसे भी जमा कर दीजियेगा।"

हैडमास्टर ऊबे हुए स्वर में बोले, "वह बाद को देखा जायगा। आप फिर किसी दिन आइये। बाहर और भी कई लोग इन्तजार कर रहे हैं। घण्टी भी बजने वाली है। लड़के भी मिलने आयेंगे।"

प्राणकृष्ण खड़ा हो गया। हैडमास्टर साहब ने आवाज लगाई, "बारी-बारी से एक-एक करके आइये।"

पर दूसरे एजेन्ट के अन्दर आने के पहले ही दाशूबाबू एक लड़के का हाथ पकड़कर खींचते हुए आये। बोले, "यह कागज उसके पास मिला है, सर ! पानी के कमरे में जाकर इसने इसे जेब से निकाला था। वहींपर मेरी ड्यूटी थी। टंकी की आड़ से मैंने देखा। टुकड़े-टुकड़े करके नाली में फेंकने के पहले ही मैंने इसे पकड़ लिया।"

हैडमास्टर आग-बबूला हो गये। चिल्लाकर बोले, "नाम काटकर स्कूल से निकाल दूंगा इसे। पढ़ाई अच्छी तरह न करे तो उसके लिए माफी मिल सकती है। पर चोरी की बीमारी इस स्कूल के पास नहीं फटकने पायगी। सच बता, यह कागज कहां मिला ?"

लड़का चुप।

इतने में चित्तबाबू दौड़े-दौड़े आगये। इधर-उधर से दो-एक और लोग भी आगये।

"कागज किसने दिया, बता ? उड़कर तो जेब में आ नहीं सकता था।"

लड़के ने कहा, "हिसाब कर लिया है, उसे ही उतारकर घर लेजा रहा हूं। बाबूजी को दिखाऊंगा।"

"यह तुम्हारी लिखावट है ? झूठ बोलने के लिए और कोई जगह नहीं मिली ? मैंने कह दिया है, झूठ बोलनेवाले के लिए स्कूल में जगह नहीं है।

चित्तबाबू, जाकर देखिये तो, किस कमरे में यह बैठा था। उस कमरे की कापी रुकवा दीजिये। जांचनेवाले के पास नहीं भेजी जायगी।"

छुट्टी की घंटी बजने में देर नहीं थी। दुखीराम दौड़ता हुआ आया और महिम के हाथ में चित्तबाबू की चिट पकड़ा दी। काशीनाथ सरकार की कापी हैडमास्टर ने मंगवाई थी।

काशीनाथ? महिम चारों ओर देखने लगा, बोला, "काशीनाथ किसका नाम है? खड़े हो जाओ, तुम्हारी कापी हैडमास्टर के पास भेजी जायगी।"

पताकीबाबू बोले, "काशीनाथ बाहर गया है। उसने कुछ गड़बड़ की होगी! नम्बरी शैतान है।"

घंटी बजी। छुट्टी हो गई। काशीनाथ खड़ा ही रह गया। हैडमास्टर ने पताकीबाबू को बताकर कहा, "पताकीबाबू, किस तरह देख-रेख करते हैं! हिसाब बनाकर बाहर से लड़के के हाथ में दे दिया जाता है, और आप लोगों की नज़र नहीं पड़ती!"

पताकीबाबू काशीनाथ को पीटने के लिए तैयार हो गये, बोले, "मैं क्षण-भर के लिए भी कुर्सी पर नहीं बैठता, घूम-घूमकर देखता रहता हूं सर। आप ज़रा महिमबाबू से पूछ देखिये। यह लड़का बार-बार बाहर जाता है। उसी समय कहीं से ले आया होगा। इसकी तो अच्छी तरह से खबर ली जाय तब बतायगा कि कागज कहां मिला।"

पताकीबाबू ने महिम को ही अपना गवाह बना लिया, पर महिम ने यह सुना तो अवाक रह गया। यह हिसाब तो उसीके हाथ का निकाला हुआ था, वही दो समीकरण थे, जिन्हें थोड़ी देर पहले पताकीचरण ने उससे तैयार कराया था। गनीमत थी कि हैडमास्टर या चित्तबाबू उसकी लिखावट नहीं पहचानते थे, नहीं तो उसे ही पकड़ा जाता। काशीनाथ भी कितना चंट है। पताकीबाबू इतना डांट-फटकार रहे हैं, पर वह चूं तक नहीं कर रहा।

दूसरे दिन भी महिम और पताकीचरण उसी कमरे में गार्ड रहे। पहली घंटी हो गई, अब प्रश्न-पत्र आयगा। काशीनाथ नियम के अनुसार

अपनी जगह पर जा बैठा। उसकी सिर्फ कल शाम की कापी रोक दी गई थी। लड़कों ने काशीनाथ को घेर लिया। पूछने लगे, "तुझे हिसाब निकालकर किसने दिया था ?"

काशीनाथ भेदभरी हँसी हँसकर बोला, "मुझे सचमुच ही नहीं मालूम। हॉल की बगल से जा रहा था, तभी हवा में उड़कर वह कागज मेरे हाथ आ पड़ा। मैंने उसे मुट्ठी में ले लिया।"

"अब मामला तो खतम होगया। फिर क्यों छिपा रहा है। बता क्यों नहीं देता ?"

निडर होकर वे लड़के जोर-जोर से बातें कर रहे थे।

पताकीचरण ने महिम की ओर प्रशंसाभरी निगाह से देखकर इशारा किया, फिर फुसफुसाते हुए बोले, "सुन रहे हैं, साहब ? काशीनाथ सोना है, सोना। अपनी क्लास के लड़कों को भी भेद नहीं बताता। कल तो हैडमास्टर के सामने आपने खुद देखा था। उसमें जितनी हिम्मत है, उतनी ही सच्चाई भी है। मेरे सामने वादा किया था कि गला कट जाने पर भी भेद नहीं खोलेगा, वैसा ही हुआ। काशीनाथ के पेट से बात निकाल ले, ऐसा कोई नहीं जन्मा है आजतक।"

महिम अनमना-सा हो गया। उसे हैडमास्टर कृष्णकिशोर नाग की बातें याद आईं। सूर्यकान्त उन्हींके छात्र थे। बड़े प्रभावशाली हैडमास्टर थे। कमेटी-वमेटी उनके सामने सब योंही रह जाती थीं। कमेटी तो दरकिनार, उस क्रान्तिकारी युग में ललमुंहा पुलिस सुपरिन्टेडेन्ट अपना गिरोह लेकर एक बार स्कूल के सामने खड़ा था। किसी लड़के को गिरफ्तार करना था, पर अन्दर आने की हिम्मत नहीं थी। कृष्णकिशोर बाहर आये, बोले, "यहां क्यों खड़े हैं ? जाइये। लड़के डर गये हैं। उनकी पढ़ाई का नुकसान हो रहा है।"

पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट अपना-सा मुंह लेकर गिरोह के साथ चला गया।

कृष्णकिशोर कबके चल बसे हैं, पर आज भी सारे देश में उनका नाम अमर है। सूर्यबाबू से महिम ने उनके बारे में बहुत-सी बातें सुन रखी हैं। स्कूल क्या था, जैसे बड़ा-सा परिवार था और उस परिवार के मुखिया

थे वृद्ध कृष्णकिशोर। छात्रों या शिक्षकों को अगर बाहर के किसी आदमी ने कुछ कह दिया तो उसकी खैर नहीं। अगर कुछ कहना हो तो हैडमास्टर कृष्णकिशोर से कहो, उनपर भरोसा रखो। जो कुछ करने की जरूरत होगी, वह खुद करेंगे।

एक बार जाड़े में इन्सपेक्टर मुआइना करने आये थे। गांव में इन्सपेक्टर आते थे तो अन्य स्कूलों में बड़ी भारी तैयारी होती थी। इन्सपेक्टर मुआइना करके रजिस्टर में अपनी राय लिखकर चले न जाते, तब तक आफत रहती। मास्टर, छात्र, कमेटी, सब उनके जाने पर चैन की सांस लेते। इस आफत से बचने के लिए कितने दिनों से तैयारियां होती रहती थीं। दिन-रात मेहनत करके सब रजिस्टरों को ठीक करो, जितने बेकार लड़के है, उन्हें बुला-बुलाकर दो-एक दिन कक्षा में बैठाकर सिखाओ-पढ़ाओ। स्कूल के आंगन का जंगल साफ करो। भीतर-बाहर झाड़ू लगाओ। लड़के-बच्चे, मास्टर, सब कोई कपड़े धोकर साफ करो। बीसियों बखेड़े।

पर कृष्णकिशोर के स्कूल में यह बात नहीं थी। चिट्ठी से इंसपेक्टर के आने की खबर जरूर मिली थी। पर वह सरकारी नौकर हैं, अपना काम करने आ रहे हैं। आकर जो देखना है, देखें, बाहरवालों को इससे क्या? रोज के काम-काज में इन्सपेक्टर की वजह से कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

इन्सपेक्टर आया। आफिस में बैठकर रजिस्टर देखा, फिर उठ खड़ा हुआ। क्लास देखेगा। उस समय सब मास्टर विश्राम-कक्ष में विश्राम कर रहे थे। जाड़े के दिन थे, एकाध धूप में भी बैठे थे। इन्सपेक्टर ने कृष्णकिशोर से पूछा, "वे क्लास में क्यों नहीं गये?"

"वार्षिक परीक्षा हो रही है। क्लास में आजकल पढ़ाया नहीं जाता। इसीलिए उनकी छुट्टी है।"

इंसपेक्टर चकित रह गये, बोले, "आप क्या कह रहे हैं? परीक्षा के हॉल में कोई नहीं है? लड़के डटकर नकल कर रहे होंगे।"

कृष्णकिशोर की मुख-मुद्रा कठोर हो उठी और वह बोले, "अध्यापक पढ़ाने के लिए होते हैं। वे पुलिस या पहरेवाले नहीं हैं। उनका हॉल में क्या काम? लड़के भी यहां पढ़ाई-लिखाई करने आते हैं। स्कूल चोर-बदमाशों का अड्डा नहीं है। वे नकल क्यों करने लगे?"

इन्सपेक्टर को अवाक् देखकर कृष्णकिशोर ने फिर कहा, "मैं आपके साथ नहीं चलता। जिस कक्षा में चाहें, अकेले जाकर देख लीजिये। लड़कों के बारे में आपके मन में गलतफहमी रह जाय, यह मैं नहीं चाहता। स्वयं देखकर आप अपने मन का संदेह मिटा लीजिये।"

इंसपेक्टर अकेले ही कक्षा देखने चले गये। आड़ से देखा तो सब लड़के चुपचाप अपनी कापी लिख रहे थे। कोई किसीकी ओर नहीं देख रहा था। पानी के घड़े के पास दो चपरासी बैठे थे। अगर कोई पानी मांगे तो मिट्टी के कुल्हड़ में पानी पिलाते थे। फिर कुल्हड़ फेंक देते थे। उन चपरासियों के अलावा और कोई कहीं नहीं था।

इन्सपेक्टर कम उम्र के थे। आफिस में लौट कृष्णकिशोर से बोले, "मुझे अब और कुछ नहीं देखना। जा रहा हूं।..."

महिम को लगा, ऐसे लोग अब दुर्लभ हो गये हैं।

६

नीचे की कक्षावालों की परीक्षा मौखिक होती है। वे बच्चे बड़ों की तरह लिखकर उत्तर नहीं दे पाते। लिखित परीक्षा पहले हो जाती है। मास्टर कापियां घर लेजाकर जांचते हैं और स्कूल में आकर मौखिक परीक्षा लेते हैं। इस कार्यक्रम से परीक्षा में कम समय खर्च होता है। मौखिक परीक्षा में ऐसे प्रश्न होते हैं—हर्षवर्धन कौन थे? उनके दान-यज्ञ के बारे में बताओ। उत्तर मिलता है। हर्षवर्धन सर, एक राजा... । इतनी देर में ही नम्बर दे दिये जाते हैं और दूसरा प्रश्न पूछा जाता है—हज़रत मुहम्मद ने क्या किया था? चार बजे तक परीक्षा ली जा सकती है, पर उससे बहुत पहले ही, यानी दो-डेढ़ बजे ही काम खत्म करके नम्बरों की सूची चित्तबाबू को देकर मास्टर चले जाते हैं।

आठवीं की इतिहास-परीक्षा महिम ले रहा था। दाशू आकर बोले, "कुछ गुप्त बात करनी है, महिमबाबू। ज़रा उठेंगे?"

महिम ने पूछा, "क्यों, कोई छात्र है, यही बात न ? पिछले दो हफ्ते से यही चल रहा है। सभी छिपे-छिपे यही कहते हैं, पर मुझे मालूम नहीं होता कि छिपा किससे रहे हैं ? चेक-वेक की जरूरत नहीं है, रोल नम्बर बता दें। मार्कशीट में ही निशान लगा लेता हूं।"

दाशू के छात्र के रोल नम्बर के सामने निशान लगाकर महिम ने परीक्षार्थी की ओर देखकर पूछा, "हां, क्या कह रहे थे ? चुप क्यों हो गये ? बोलते जाओ।"

दाशू खड़े ही रहे।

"अच्छा, आप जा सकते हैं। जब सभीके लिए कर रहा हूं, तब आपके लिए ही क्यों न करूंगा।"

लड़के से एकाध प्रश्न और पूछकर महिम ने उसे छोड़ दिया, फिर रुखाई से बोला, "बहुत थोड़े दिन हुए, हम दोनों ही स्कूल में आये हैं। आपकी उम्र शायद मुझसे दो-एक साल कम ही होगी, इसीलिए कह रहा हूं कि परीक्षा क्या है, एकदम खिलवाड़ है। मैं सोच रहा हूं, गिनती की जाय कि कितने लड़कों ने स्कूल के मास्टरों को ट्यूटर रख छोड़ा है ? उन्हें तो पास करना ही है। लड़कों की परीक्षा न ली जाय ? तो मेहनत भी कम पड़ेगी।"

दाशू हकलाकर बोले, "बात तो ठीक है, पर यह सब गलत है, जानते हुए भी मजबूरी है, नहीं तो ट्यूशनें ही छूट जायंगी।"

महिम ने कहा, "कल हिसाब लगाकर देखा, पचासी कापियां मेरे पास आई हैं और पचास के ऊपर चेक आ गये हैं। और भी आयेंगे। जिन अभागे लड़कों की मास्टर लगाने की हैसियत नहीं है, या सस्ते में बाहरी मास्टर रखा है, उन्हींकी ज्यादा-से-ज्यादा सिर्फ पन्द्रह-बीस कापियां बचेंगी। बात साफ है। पढ़ाई-लिखाई के साथ पास होने का कोई खास सम्बन्ध नहीं है। मैं देख रहा हूं कि छात्रों में दो गुट हैं—एक तो वह, जिन्होंने पैसे देकर मास्टर रखे हैं और जिनकी सिफारिश में मास्टर मजबूरी की दुहाई देते हैं। दूसरा गुट वह है, जो ट्यूटर नहीं रख सका। उनके साथ जो चाहे, किया जा सकता है, कोई कहने-सुननेवाला नहीं है।"

दाशू बोले, "आप नाराज हो रहे हैं। आपकी बात ठीक है। पर इसमें

सारा दोष क्या हम लोगों का ही है, स्कूल के मालिकों का नहीं ? तीस रुपये में बी. ए. पास मास्टर रखते हैं और उसपर भी डींग हांकते हैं ! बी. ए. पास से जो कम हैं, उनकी तनख्वा बीस रुपये है। मास्टरों की तनख्वा में उचित वृद्धि करने पर या स्कूल के हित में विचार करने के लिए कमेटी की बैठक बुलाने का भी समय उन्हें नहीं मिलता। पढ़-लिखकर लोग पहले-पहल जब यहां आते हैं, उनके सामने बड़े-बड़े आदर्श होते हैं। पर दो ही दिन में वे सब गायब हो जाते हैं। बच्चों के अभिभावकों की भी गलती है, जो ज्यादा पैसे देकर स्कूल-मास्टरों को ट्यूटर रखते हैं। लड़का क्या कर रहा है, क्या नहीं, इसकी जानकारी नहीं रखते। परीक्षा का नतीजा निकलने पर वे लड़के से नहीं, उसके मास्टर से कैफियत तलब करते हैं। लड़के के सामने ही मास्टर पर नाराज होते हैं।"

एक ही सांस में दाशू जाने क्या-क्या कह गये। महिम चुपचाप सुनता रहा। फिर बोला, "अच्छा, अब आप जाइये। सब ठीक हो जायगा। आपका छात्र कुछ बोले चाहे न बोले, उसे अच्छे नम्बर दे दूंगा।"

अस्त-व्यस्त होकर दाशू सिर हिलाते हुए बोले, "नहीं नहीं, महिमबाबू, छात्र धड़ा-धड़ जवाब देगा और खूब अच्छी तरह, पर नम्बर पास लायक ही दीजियेगा। तीस नम्बर में पास हो जायगा तो इकत्तीस-बत्तीस दीजियेगा, उससे ज्यादा नहीं।"

महिम नाराज होकर बोला, "छिः-छिः, निरीह बच्चे को सही नम्बर से वंचित करना, यह काम मुझसे नहीं होगा। नम्बर बढ़ाने की कहें, वह और बात है, पर नम्बर घटाकर दुश्मनी निकालना, यह तो बड़ा पाप है।"

दाशू बोले, "दुश्मनी किससे, साहब ? मैं ही तो उस लड़के को पढ़ाता हूं। पहले नहीं समझा था, पर अब तो होम करते हाथ जले, यह हाल है। आप अगर न बचायें तो बिना मौत मर जाऊंगा।" कहते-कहते उन्होंने महिम का हाथ पकड़ लिया।

"अरे बैठिये तो ! इतना घबड़ा क्यों रहे हैं ? क्या बात है, साफ-साफ बताइये।"

महिम को सारी बातें मालूम हुईं। गणेश नाम का एक लड़का इसी स्कूल की आठवीं कक्षा में पढ़ते समय मर गया था। मां-बाप का

लड़का था। वे गणेश के नाम से छात्रवृत्ति देते हैं—'गणेश-स्मृति छात्र-वृत्ति।' आठवीं कक्षा में जो अव्वल आता है उसे एक साल तक बारह रुपये महीना छात्रवृत्ति मिलती है। अबकी बार एक बहुत अच्छा लड़का है, इसी स्कूल के भूतपूर्व छात्र सुखमय जज का लड़का। पर दाशू में इतनी समझ नहीं थी। उन्होंने अपने छात्र के लिए जरूरत से ज्यादा तदबीर कर डाली। अब अगर गणेश छात्रवृत्ति इसी लड़के को मिलने लगी, तो बहुत खोज-बीन होगी।

दाशू बोलते गए, "सभी मास्टरों के साथ अपनापन है। सभी इज्जत करते हैं। जिन-जिन लोगों ने आठवीं कक्षा के प्रश्न-पत्र बनाये हैं, उन्होंने जरूरी-जरूरी बातें बता दी हैं। इस साल यह नया-नया ट्यूशन था। मैंने बड़ी मेहनत से हर सवाल का उत्तर लिखवाकर याद करवा दिया है। हिसाब निकालकर उसे बता दिये हैं। सबकुछ उसने घोट लिया है। परीक्षा में कैसा किया है, यह पता लगाने गया तो चकित रह गया। जो अव्वल आने वाला है, उससे भी पचास नम्बर ज्यादा मिले हैं। और सब विषयों की परीक्षा तो खत्म हो गई। बाकी है आपका इतिहास और कल जगदीश्वर-बाबू का हिसाब। उनसे कह दिया है कि सारे हिसाब सही होने पर भी तीस से ज्यादा नम्बर न दें। आप कृपा करें तो किसी तरह यह गणेश छात्र-वृत्ति पाने से रह जायगा।"

दाशू का छात्र और कोई नहीं, वही मलय चौधरी है। लड़के का चेहरा और भी निखर आया है। ऐसी मीठी आवाज है, मानो देव-बालक हो। प्रश्न सुनते ही फटाफट जवाब देने लगता है। पर होने-जाने का कुछ नहीं। हाथ बंधे हैं। पास होने लायक नम्बर ही मिलेंगे।

महिम के सारे शरीर में आग लग गई। सातू घोष तो इनसे कहीं अच्छे हैं। वह तो तगड़े लोगों को ठगते हैं। निष्पाप, अबोध बच्चों को लेकर खिलवाड़ नहीं करते। नहीं, यह नौकरी अब नहीं चलेगी। नदी के किनारे किसी पेड़ की शीतल छांह में आश्रम जैसा एक छोटा-सा स्कूल मिल जाता। वहां कृष्णकिशोर अगर न भी होते तो सूर्यकान्तबाबू जैसा ही कोई मिल जाता। शहर के इन बड़े-बड़े स्कूलों से पीछा छुड़ा लेंगे। ऊपर से नीचे तक सब जगह जहर भरा है। यहां आदमी जिंदा कैसे रह सकता है!

हैडमास्टर ने एक नया नोटिस निकाला है कि केवल नम्बर ही नहीं, कापियां भी लड़कों को देखने के लिए लौटानी पड़ेंगी, जिससे छात्र उन्हें देखकर अपनी गलतियां समझें और आगे से सावधान रहें। परीक्षा-फल सुनाने के एक हफ्ते पहले का दिन तय हुआ। उस दिन क्लास लगेगी और छात्रों को कापियां दिखा-दिखाकर गलतियां समझा दी जायंगी। यह नोटिस क्या, जैसे वर्र के छत्ते में ढेला लगा हो। जहां मास्टर मिलते हैं, यही बात छिड़ जाती है। दिनोंदिन कैसे-कैसे अजीब कायदेकानून बन रहे हैं? कापियों की गलतियां देखकर जैसे लड़के रातों-रात विद्यावाचस्पति बन जायंगे! यह सब कहने-भर को है। बेकार मास्टरों को तंग करने की तरकीब सोची गई है। कक्षाओं की परीक्षाएं खत्म हो गईं। टैस्ट और फाइनल की की परीक्षाएं तो अभी होने को हैं। ऊंची कक्षा के मास्टर ट्यूशन के बोझ से मरे जा रहे हैं। जो छात्र दस मिनट भी नहीं पढ़ना चाहता था, अब उससे डेढ़ घन्टे में भी पार नहीं मिलता। हैडमास्टर को शक है कि कापियां बिना अच्छी तरह से जांचे ही नम्बर दिये जा रहे हैं। इसीलिए छात्रों को कापियां दिखाकर मास्टरों की परीक्षा लेने के लिए नया कानून जारी किया जा रहा है।

ट्यूशनों के बादशाह तो सलिलबाबू हैं, पर वह एकदम निर्विकार हैं। नौजवान मास्टर ट्यूशनों का घमंड करते हैं—मेरे पास तीन हैं... मेरे पास पांच हैं। सलिलबाबू सुनकर मुस्करा देते हैं। झगड़े-बखेड़े से बचनेवाले अल्पभाषी सलिलबाबू महिम को अच्छे लगते हैं। एक दिन महिम ने पूछा, "लोग कहते हैं, आपके पास पूरे दर्जन-भर ट्यूशनें हैं ?"

सलिल हँसकर बोले, "ऐसा भी कोई कर सकता है ?"

"तब कितने हैं ? मुझे बताने में क्या हर्ज है ? छीनने थोड़े ही जा रहा हूं !"

"यह सब नहीं पूछना चाहिए, महिमबाबू ! मैं नहीं बता सकूंगा, गुरु का निषेध है।"

फिर हँसकर बोले, "सुनकर कितने ही मित्रों की रात को नींद खराब होगी। इससे क्या फायदा ?"

सलिलबाबू की कोई शिकायत नहीं है। यथारीति मौलिक परीक्षा

लेते हैं। परीक्षा न हो तो लाइब्रेरी की लम्बी मेज पर आराम करते हैं, और फिर क्षण-भर में एकदम उठकर चित्तबाबू की ओर आंखों से इशारा करके खिसक जाते हैं, यानी ट्यूशन करने। अब आधी रात तक यही चलेगा।

महिम ने कहा, "सोमवार को तय है, सारी कापियां उसी दिन देनी पड़ेंगी।"

सलिलबाबू ने केवल सिर हिला दिया—"हूँ।"

"आपके पास कितनी कापियां हैं, सलिलबाबू ?"

"बंडल पर शायद लिखा हो, अभी तक देखा नहीं।"

"यह क्या कह रहे हैं ? बंडल ही नहीं खोला अभी तक ? फिर क्या करेंगे ?"

सलिलबाबू मुस्कराते हुए बोले, "बीच में रविवार है, किसी तरह देख ही लूंगा।"

सोमवार को स्कूल आते ही महिम ने सलिलबाबू को खोजा। वह अपने स्वभाव के अनुसार हँस रहे थे। सामने बड़ा-सा कापियों का बंडल था।

महिम ने पूछा, "एक ही दिन में इतनी कापियां जांच लीं ?"

सलिलबाबू बोले "पूरा एक दिन भी कहां मिला ? जनवरी के शुरू में टैस्ट है। सिर पर आफत है। अब रविवार भी कहां ? रविवार को भी बाहर जाना पड़ा। दोपहर को केवल तीन घण्टे का ही समय मिल पाया था।"

"अब तो बड़ी परेशानी होगी, सलिलबाबू। कापियां छात्रों के हाथ में आने दीजिये, फिर देखिये आपका कैसा सिर खाते हैं !"

सहज भाव से सलिलबाबू बोले, "अरे, यही करते-करते तो सिर के बाल पक गये हैं। ऐसा-वैसा कुछ नहीं होगा, देख लीजियेगा।"

सलिलबाबू कक्षा में गये। दूसरे दिनों की अपेक्षा आज कुछ ज्यादा गंभीर हैं। सबकी कापियां बांट दीं, बोले, "देख लो, खूब अच्छी तरह से देख लो। मार्कशीट अभी तक मेरे पास ही है। एकाध गलती रह सकती है, इसीलिए अभी तक जमा नहीं की है।"

लड़कों ने कापियां खोलीं। मामूली तौर पर सभी खुश हुए। जितने नम्बरों की उम्मीद थी, उनसे कहीं ज्यादा मिल गये थे। सलिलबाबू अच्छे

मास्टर हैं। उनके मन में कुछ दया-धर्म भी है।

एक लड़का उठ खड़ा हुआ।

सलिलबाबू ने पूछा, "क्या, कुछ गलती रह गई ?"

"जीहां, सर ! पांचवें प्रश्न में नम्बर नहीं मिले।"

"हो सकता है। इसीलिए तो मैंने मार्कशीट जमा नहीं की। लाओ, देखूं।"

पास आकर लड़के ने कापी सामने कर दी, "यह देखिये, सर। व्याकरण के इस प्रश्न में कम-से-कम तीन नम्बर तो मिलेंगे ही।"

"तीन क्यों ?" अच्छी तरह देखकर सलिलबाबू ने कहा, "चार मिलेंगे। लाओ, नम्बर दे दूं।"

सलिलबाबू ने चार नम्बर दे दिये। फिर कापी के पन्ने उलटने लगे। बोले, "सचमुच ही यह कापी ध्यान से नहीं देखी। और भी गलतियां हैं। यह जो व्याख्या लिखी है, इसमें सात तो मिल ही नहीं सकते। पांच से ज्यादा नहीं।" इतना कहकर सात काटकर पांच बना दिये।

"पिकनिक पर निबन्ध लिखा है ? अरे, सत्यानाश हो गया ! यह मैंने क्या किया ? बीस में से सोलह दे दिये। इसमें तो सात-आठ से ज्यादा देने ही नहीं थे। अच्छा, लो नौ किये देता हूं।"

लड़का रुंआंसा होकर बोला, "एक बार जब नम्बर..."

सलिलबाबू हँसते हुए बोले, "यह क्या कह रहा है ? गलती की है तो सुधारूंगा नहीं ? व्याकरण के प्रश्न में नम्बर देना भूल गया था। चार दे दिये।"

सलिलबाबू बोलते जा रहे थे और एक के बाद दूसरा पन्ना उलटते हुए नम्बर सुधार रहे थे। हर बार नम्बर कम ही हो रहे थे। लड़का पढ़ने में खराब नहीं है। उसे पहले सड़सठ नम्बर मिले थे। कापी सुधरने पर पैंतालीस-भर रह गये।

कापी लौटाकर मार्कशीट में भी उन्होंने मुस्कराते हुए सड़सठ काटकर पैंतालीस लिख दिये। फिर सबकी ओर देखकर बोले, "जल्दी-जल्दी देख लो, शायद गलतियां रह गई हों। जो भूल-चूक हो, ठीक करा लो।"

इतने में सब लड़कों ने मोड़कर कापियां जेब में डाल लीं। कक्षा के

दूसरे लड़कों को भी नहीं दिखाई। सबने एक साथ कहा, "कोई गलती नहीं है, सर'। सब ठीक है।"

"अच्छी तरह देख लीं न ? बस, अब कोई चिन्ता नहीं।"

आधी छुट्टी में भी छात्र भीड़ लगाये मास्टरों को घेरे रहे—"यह रह गया," "वह छूट गया," "जोड़ने में गलती है।" मास्टर परेशान हो गये। महिम ने दो हफ्ते तक मेहनत से सोच-विचारकर कापियां देखी थीं। उसके पास भी झुंड-के-झुंड लड़के कापियां लेकर आने लगे।

१०

तीन जनवरी। परीक्षा-फल सुनाने के बाद स्कूल बन्द हो गया था, कल खुला है। नया साल, नये-नये लड़के। पुराने लड़कों में से बहुतेरे ऊपर की कक्षा में चढ़ गये, कुछ नाम कटाकर दूसरी जगह चले गए। नये लड़के भरती हो रहे हैं। फिलहाल तो पुराने ढर्रे पर ही काम चल रहा है। नया ढांचा बनेगा, पर देर इसीलिए हो रही है कि जाने किस कक्षा के कितने विभाग बनें। इसी बीच मास्टरों ने चित्तबाबू के पास आना-जाना शुरू कर दिया है, जिससे नये साल में कोई ऊंची कक्षा पढ़ाने को मिल जाय।

एक बड़ी-सी गाड़ी आकर स्कूल के सामने रुकी। लाइब्रेरी के कमरे की खिड़की से गगनबिहारीबाबू टकटकी लगाये देख रहे थे। गाड़ी से एक मोटे-तगड़े अधेड़ सज्जन उतरे। उनके पीछे-पीछे कोड के नेकर और क्रीम रंग की कमीजें पहने दो बच्चे आये। दोनों भाई हैं, कोई भी समझ सकता है।

पहली कक्षा में पढ़ाई शुरू होने में कुछ दिन की देर लगेगी। तीन विभागों में लड़कों के भर्ती करने का इन्तजाम किया गया है। एक कमरे में अभिभावक और बच्चे बैठे हैं। एक दूसरे कमरे में भर्ती करने के लिए परीक्षा ली जायगी। परीक्षा १ बजे से होगी। एक कमरे में भर्ती करने के फार्म भरे जा रहे हैं, फीस ली जा रही है और किताबों की सूची मिल रही

ारे बिस्तर में पड़ा है। कब अच्छा होकर पढ़ाई करेगा, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं। चौथा बाप के बक्स का ताला तोड़कर जाने कहां भाग या। चार-चार के बदले अभी तक एक भी शिकार हाथ नहीं लगा।

वह काला चांदबाबू के पास गये। बोले, " बाप रे बाप, आपके यहां ो मेला लगा है।"

काला चांदबाबू मुस्कराये। सैकड़ों आदमी आ रहे हैं। उन्हें इस समय ाप मारने की फुरसत नहीं है। तीन-तीन कमरों में दाखिले का काम हो रहा है। तीनों कमरों में वह लगातार चक्कर लगा रहे हैं।

"एक बात पूछने आया हूं।"

"कहिये।"

"अबकी साल कैसा चल रहा है ? यों भीड़ तो खूब दीख रही है ?"

काला चांदबाबू मुंह बनाकर बोले, "राम कहो, मेहनत इतनी कि खून-पसीना एक हो रहा है, पर काम कुछ नहीं बन रहा है। बेकार की भीड़ है। सब किरानी दूकानदार हैं। दाखिल होते ही पूछते हैं, "फीस माफी का फार्म कहां मिलेगा ? ये क्या खाक रखेंगे मास्टर !"

असहाय से गगनविहारीबाबू बोले, "फिर क्या होगा, काला चांदबाबू, हम सब तो आपका आसरा देख रहे हैं। भर्ती के समय अगर एक-दो ट्यूशनें नहीं लगवा देंगे तो साल भर खाऊंगा क्या ?"

"अरे साहब, मुझे क्या एतराज है ? पहले भी तो कर देता था ? आप ही बताइये, दिन-ब-दिन बाजार खराब होता जा रहा है। फिर ऊपर से इस बगलवाले प्राची शिक्षालय ने पढ़ाई-लिखाई की बहुत अच्छी व्यवस्था कर दी है। नये-नये साज-सामान। बात-बात में युनिवर्सिटी तक कोशिश-पैरवी के लिए पहुंच जाते हैं और हम लोगों को देखिये, पुरानी रईसी में ही मरे जा रहे हैं—होगा, हो रहा है—यही चलता है। मोटरवालों को तो वे जैसे जाल फेंककर मोड़ से ही पकड़ लेते हैं। कल आधी छुट्टी के समय घूमते-घूमते उस स्कूल के सामने तक चला गया था। वहां मोटरों की भीड़ देखकर मैं तो दंग रह गया।"

गगनविहारीबाबू बोले, "फिर भी हाथ-पर-हाथ धरकर बैठे रहने से तो काम नहीं चलेगा। बड़े शिकार न मिलें तो छोटे ही सही। न हो तो

कल से आप मुझे भी साथ ले लें। एक वार खुद कोशिश करके देखूं। अव तक ले-देकर एक ही ट्यूशन बचा है। इतने बाल-बच्चे, मैं तो बहुत घबड़ा रहा हूं, साहब।"

काला चांदवाबू नाराज होकर बोले, "सलिलवाबू, महिमवाबू और वनवारीवावू, ये तीन हैं। फिर ऊपर से आप आकर क्या करेंगे ? जब कोई है ही नहीं तो बड़े, छोटे शिकार की क्या बात है ?"

कहीं एकान्त में बैठकर काला चांदवाबू को और अच्छी तरह पटाना पड़ेगा। वनवारीवाबू तो घाघ हैं। अपने से कुछ बचे तब तो दूसरों के लिए सोचें। वहां के हाल-चाल देखने के लिए गगनविहारीवाबू परीक्षा के हाल में जा पहुंचे। वनवारीबाबू ने देखते ही बुलाया, "आइये।"

जो लोग उस बड़ी मोटर में आये थे, उन्हीं सज्जन से बात-चीत हो रही थी। चिन्तित होकर सिर हिलाते हुए वनवारीबाबू कह रहे थे, "मुश्किल तो यह है, साहब, कि आपका बच्चा अंग्रेजी में बिल्कुल कमजोर है। आप ही कहिये, कैसे भर्ती करें।"

"यह क्या कह रहे हैं, मास्टर साहब ? उसे तो अंग्रेजी ही आती है। रथतला अकादमी में अंग्रेजी में लगातार दूसरे नम्बर पर आता रहा है।"

"उन सब सड़े-गले स्कूलों का नाम न लें, साहब। शेर-बाघ भी जानवर हैं और चूहे-मेंढक भी। आपने तो खुद ही देख लिया न कि इतना छोटा-सा डिक्टेशन दिया और उसमें भी पांच-पांच गलतियां !"

वह सज्जन बोले, "छोटा-सा तो था, पर उसमें जाने क्या ऊटपटांग घुसा दिया था। लड़का तेज है, इसीलिए पांच ही गलतियां हैं। उसका बाप होता तो पांच चौके बीस गलतियां करता। दाखिल कर लीजिये, साहब, बेकार परेशान न कीजिये। प्राची शिक्षालय में एक भी सीट खाली नहीं है, नहीं तो वे लोग तो इस लड़के को बड़ी खुशी से ले लेते।"

फिर दबी ज़बान से बोले, "ईस्टर्न प्रोडेक्ट्स कम्पनी मेरी ही है। जानते हैं न, हम माल्टेड मिल्क बना रहे हैं। हारलिक्स को बाजार से निकालकर ही मानूंगा। छुट्टी के बाद एक दिन घूमते-घामते आइये न ! बात-चीत होगी, दो बड़ी शीशी दूंगा, खाकर देखियेगा।"

वनवारीबाबू नरम पड़े, बोले, "वह तो बाद में देखा जायगा। दाखिले

का यह झमेला जबतक न निबटे, कहीं आना-जाना मुश्किल है। पर जैसा मैंने कहा, "अंग्रेजी के लिए अच्छा मास्टर रखना पड़ेगा। छोटे लड़के की बात तो नहीं करता। उसका काम तो आपके यही मास्टर चला देंगे। पर बड़े को लेना मुश्किल है। और विषयों के लिए चिन्ता नहीं, पर अंग्रेजी..."

"अच्छा तो अंग्रेजी का मास्टर रख दूंगा। आप दाखिल तो कर लीजिये।"

बनवारीबाबू ने कच्ची गोली नहीं खेली है। ट्यूशनों के शिकार करते-करते ही तो बाल पके हैं। पूछने लगे, "आप किसे रखेंगे? अभी तय कर लें। मतलब यह कि उन्हें यह जिम्मेदारी लेनी पड़ेगी कि छमाही परीक्षा में अंग्रेजी में कम-से-कम पचास नम्बर मिल जायंगे। बाहरी आदमी की बात की क्या कीमत? हमारे हैडमास्टर साहब इस बारे में बहुत कड़े हैं। दस-पांच रुपये की बचत के लिए आप लोग बाहरी मास्टर ढूंढ़ते हैं, पर यह काम क्या उनके बश का है? हमने तो पढ़ाने के काम में जिन्दगी बिता दी है।"

साथ के प्राइवेट मास्टर के सामने ही ये बातें हो रही थीं। वह बेचारे बलि के बकरे की तरह आकुल दृष्टि से देख रहे थे।

वह सज्जन बोले, "बाहर के किसीको नहीं, आपमें से ही किसीको रखूंगा। आपके पास ही अगर समय हो तो बताइये।"

"मेरे पास? नहीं मेरे पास तो..." पुलकित होकर बनवारीबाबू कहने लगे, "हां, अगर सुबह के किसी ट्यूशन को छुट्टी के बाद ढकेल सकूं तो..."

वह सज्जन जल्दी-जल्दी बोले, "जैसे भी हो, आप ही इसकी जिम्मेदारी ले लीजिये, मास्टरसाहब। मैं निश्चिन्त हो जाऊंगा। बाहर के आदमियों पर भरोसा करना ठीक नहीं।"

बनवारीबाबू ने चेहरे को गंभीर बनाते हुए कहा, "सचमुच, बड़ी भारी जिम्मेदारी का काम है। सोचिये, अभी पढ़ाई-लिखाई की नींव पड़ेगी, और नींव के लिए चाहिए सबसे अच्छा मिस्त्री। हां, ऊपर जाने पर तो मामूली लोगों से भी काम चल सकता है।"

वह सज्जन जिद्द करते हुए बोले, "नहीं-नहीं, ऊपर भी आप ही मदद करें। यह कोई पराया नहीं है, आपका ही बच्चा है। बड़ी उम्मीद से भरती कराने के लिए आया हूं। इसकी पढ़ाई में कोई कसर नहीं उठा रखूंगा।"

"यह तो है ही, पर कितने मां-बाप यह समझते हैं। आप जैसे हैं ही कितने ? पान लीजिये !"—वनवारीवावू ने जेब से पान का डिब्बा निकाला। खट से दवाते ही डिब्बे का वटन खुल गया। उन्होंने दो पान आगे कर दिये, फिर पान के डंठल से चूना भी वढ़ा दिया, बोले, "चलिये, उधर चलते हैं। वात-चीत तय हो जाय।"

गगनविहारी के दिल में जलन-सी होती है, देखते-ही-देखते एक शिकार और मार लिया। वरामदे में वातें हो रही हैं। उनके हँसने के ढंग से यह साफ जाहिर है कि आसामी सचमुच मालदार है। कुर्सी खींचकर वह खिड़की के पास वैठ गये—शायद उनकी वातचीत सुनाई पड़ जाय।

वनवारीवावू कह रहे थे, "पच्चीस से कम में तो मैं नहीं पढ़ाता। सस्ते मास्टर भी हैं, पर वे वनवारी रक्षित नहीं हैं। पढ़ाने का तरीका देखकर ही लोग ज़्यादा पैसे पर भी मुझे ही रखते हैं।"

गगनविहारी मन-ही-मन वोले, "ओह, बड़े विद्वान हैं ! खाक पढ़ाते हैं। खाली वेईमानी और फरेववाजी !"

वह सज्जन कह रहे थे, "कुछ सोचिये मास्टरसाहव, पांच घंटा दीजिये, रुपया वीस।"

"मोल-भाव मत कीजिये। मेरे पास तो समय ही नहीं था ! अच्छा, छोड़िये, आप कहते हैं तो पढ़ाने का समय वढ़ा दूंगा, कोई दो घंटे। अव तो आप खुश हैं ? आप रहते कहां हैं ?"

उन सज्जन ने अपना पता वता दिया।

"पर आने-जाने का समय भी उसीमें शामिल होगा।" वनवारीवावू ने खुलासा किया।

वह सज्जन अवाक् देखते रह गये। मतलव कुछ समझ में नहीं आया तो वनवारीवावू समझाने लगे, "आपके घर पढ़ाने जाऊंगा। फिर पढ़ाकर लौटूंगा। ट्राम पर जाने से भी कितना समय लगेगा, सोचिये तो। हम इस जगह मेहनत करते हैं, वहुत कम समय वच पाता है। आप लोग मकान वनाते हैं—कोई मदागास्कर में तो कोई हेनोलूलू में। आने-जाने का समय मैं तो पढ़ाई के समय में ही लगा लूंगा।"

वह सज्जन बनवारीबाबू का हाथ पकड़कर बोले, "आने-जाने और किताब खोलने में ही तो सारा समय बीत जायगा। पढ़ाई कब होगी? ऐसा नहीं हो सकता।"

आखिर झमेला निपट गया। जाने-आने के समय में एक ओर का मास्टर का, दूसरी ओर का बच्चे का। बातचीत खतम करके और लड़के को दाखिल करके वे लोग विदा हो गये। काला चांदबाबू इतनी देर से सब देख रहे थे। अब हँसकर बोले, "बात पक्की हो गई न?"

बनवारीबाबू कहा, "ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। कारोबारी है; गाहक चराता है। घाघ है। वादा तो कर गया है, पर टालने में कितनी देर लगती है! शायद आकर कहने लगे—लड़कों की मां कह रही हैं कि पुराना मास्टर तो है ही..."

"चाभी तो अपने ही हाथ में है। सवाल पूछ-पूछकर अगर घंटों बेंच पर ही खड़ा कराये रहे तो क्या मजाल कि मास्टर न बुलावें।"

यह सब देखकर महिम तो एकदम अवाक् रह गया। कुछ सदय होकर काला चांदबाबू ने पूछा, "आप कुछ नहीं बना पाये? नये आदमी हैं न! निशाना लगाना सीख लेना कोई दो-चार दिन की बात नहीं है। आप घबड़ाइये नहीं। मैं तो हूं ही। आपके लिए एक मैं लगा दूंगा। हां, मोती-बाबू जैसा ट्यूशन न भी हो, फिर भी एकदम छोटे घर का नहीं। ताक लगाये बैठा हूं। आ-आकर भी शिकार निकल जाते हैं। आपके लिए तो ऐसा नहीं है। आप तो चौकस मास्टर हैं—अंग्रेजी, बंगला, हिसाब—सभी के लायक। ऐसे मास्टर ही कितने मिलते हैं। फिर बी. ए. पास हैं, सो ऊपर से। एम. ए. होने पर जरूर कुछ मुश्किल होता।"

महिम ने सरल भाव से पूछा, "एम. ए. वाले को ज्यादा पैसे देने पड़ेंगे, इसीलिए?"

"उहुं, यों एम. ए. वाले को तो कोई रखना ही नहीं चाहता, फिर पैसे क्या देगा! बात यह है कि अगर अंग्रेजी में एम. ए. हो तो मां-बाप सोचेंगे कि खाली अंग्रेजी जानता है, और कुछ नहीं पढ़ायेगा। इसी तरह हिसाब में एम.ए. केवल हिसाब ही पढ़ायेगा। पर आपकी बात और है।"

पहले-पहल आने पर महिम सातू घोष के साथ जिस मेस में ठहरा था, अभी वहींपर है। सातू घोष ने नया मकान लेकर अच्छा-सा दफ्तर वना लिया है। भूदेववावू और जगदीश्वरवावू भी यहींपर रहते हैं। प्राची शिक्षालय के भी दो जने रहते हैं। कलकत्ता शहर की गली-गली में स्कूल हैं—सरकारी और अर्द्ध-सरकारी स्कूल। इसके अलावा हजारों स्कूल कमाई के लिए खुले हैं। कोई भी चालाक आदमी एक मकान किराए पर लेकर कालेज से ताजे नौजवानों को मास्टर वनाकर स्कूल चलाता है। शादी-ब्याह में जरूरत पड़ने पर स्कूल को वन्द करके मकान को किराये पर उठा देता है। स्कूल के व्यापार में अच्छी-खासी आमदनी है। ऐसे कमाऊ स्कूलों के दस-वारह मास्टर भी इस मेस में रहते हैं। मेस के वारह आना सदस्य तो मास्टर ही हैं। शनिवार को स्कूल से निकलकर रास्ते में एक-दो ट्यूशनों को निपटाकर मास्टर अपने-अपने गांव चले जाते हैं। रविवार को शाम से लौटने लगते हैं। सोमवार को सवेरे ट्यूशन करना पड़ता है। केवल महिम इनसे अलग है। उसका घर भी कलकत्ता के पास नहीं है।

जगदीश्वरवावू ने हँसकर कहा, "ठीक तो है। घर को पास वनाने का इन्तजाम भी तो आपकी माताजी नहीं कर रही हैं। हमारी तरह गाड़ी से उतरकर दौड़ते हुए आप किस प्रलोभन से जायंगे ?"

उस दिन स्कूल में दाखिले का काम निपटाकर स्कूल से निकलते-निकलते एकदम अंधेरा होगया। महिम छात्रा के घर गया। मेस जाने का मौका नहीं मिला। लौटते-लौटते साढ़े नौ वज गये। मास्टरों के लिए साढ़े नौ वजे कोई रात नहीं होती। औरों को तो ट्यूशन खतम करके लौटने में वड़ी देर हो जाती है।

रसोइये ने कहा, "दो वावू आपसे मिलने कई वार आ चुके हैं। आप नहीं लौटे तो वे भी चले गए थे। फिर आये हैं। सतीशवावू वगैरा ताश खेल रहे हैं। वहीं पर वे भी वैठे हैं।"

"ठहरो, जरा कपड़े वदल लूं, फिर उन्हें वुलाना। अच्छा, मैं वहीं चला जाऊंगा।"

महिम ने अनुमान लगाया कि कोई ट्यूशन के लिए वात करने आये होंगे। दाखिले की परीक्षा में महिम ने जिन लड़कों को फेल किया है, उन्हीं-

में से शायद किसीके अभिभावक होंगे। अगर एक ट्यूशन और मिल जाय तो बुरा नहीं होगा। सचमुच, मां को कुछ ज्यादा पैसे भेजे जा सकेंगे। मां ने लिखा है कि मंहगाई बढ़ गई है। फिर भी ट्यूशन की रिश्वत लेकर आज के फेल किये हुए लड़के को भर्ती किया जाय, यह तो नहीं हो सकता। महिम बनवारी रक्षित नहीं है। वह साफ इन्कार कर देगा। हां, दूसरे लड़कों का हो सकता है। ऐसे भी तो एकाध आ ही जाते हैं। भूदेववावू ने एक चाल चली है—मेस में अधिक मास्टर हो जाने से इम्पीरियल लाज नाम बदलकर टीचर्स लाज कर दिया है। एक टीन की पट्टी पर मेस का नया नाम लिखकर दरवाजे पर कील से जड़ दिया है। मतलब यह कि सब लोग जान जायं कि यह मास्टरों का मेस है। जैसे रसोइया की जरूरत पड़ने पर लोग द्वारिका सरकार लैन की बस्ती में जाते हैं, ठीक वैसे ही मास्टर की जरूरत होने पर लोग यहां आयंगे। नौकरी करनेवाले मां-बाप का दफ्तर के समय स्कूल जाना मुश्किल होता है। वे सुबह-शाम यहां आकर मास्टर का पता लगा सकते हैं। यहां मास्टर भी हर किस्म के मिल जायंगे—नार्मल ट्रेनिंग वालों से लेकर एम. ए. तक के, पांच से पच्चीस रुपये तक के। प्राची शिक्षालय के भी मास्टर रहते हैं, जहां के दो-तीन छात्र हर साल वजीफा पाते हैं। विंदेश्वरी हाई स्कूल के मास्टर भी यहीं रहते हैं, जहां के अस्सी लड़कों में से उन्यासी लड़के फाइनल में फेल होकर लौट भी आते हैं। यहां जैसा भी चाहें, वैसा सौदा कर लें।

धोती बहुत मैली थी। महिम ने जल्दी-जल्दी उसे बदल दिया। सर्दी के दिन थे, इसलिए बन्द गले का कोट पहने था, जो मैला होने पर भी मालूम नहीं होता था। बालों को पानी से मुलायम करके कंघी कर ली। जैसा भेस, वैसी भीख। अगर वैसे ही उजड्ड-सा आगे जा खड़ा हो तो बीस-पच्चीस तो क्या देंगे, एक नजर देखते ही लोग कह देंगे, "दस।"

पर सज-धजकर जब महिम सतीश के कमरे में आया तो चौंक पड़ा, "अरे, ये तो ट्यूशनवाले नहीं, उसके सहपाठी हिरण्य राय हैं।" हिरण्य ने अपने साथवाले अधेड़ आदमी का परिचय कराया, "यह मेरे मामाजी हैं। महिम, तुमने अपना कमरा खोला? चलो, वहीं चलकर बातें करें।"

महिम ने हिरण्य के मामा को प्रणाम किया। हिरण्य खाते-पीते अच्छे

घर का लड़का है। हरदम सजा-धजा रहता है। दोनों ने साथ-साथ बी. ए. किया था। महिम की गंवारू चाल-ढाल के कारण हिरण्य उससे मिलता-जुलता नहीं था। वही हिरण्य कहां से पता लगाकर अपने मामा के साथ मेस में कैसे आ गया, यह महिम की समझ में नहीं आ रहा था।

मामाजी ने कमरे में इधर-उधर निगाह दौड़ाई और पूछा, "इस एक कमरे में शायद दो जने रहते हो? साथी छुट्टी लेकर गांव गया है। ठीक है न? तुम्हारी बहन के जेठ तारकबाबू हैं न, वह हमारे दफ्तर के रोकड़िया हैं। उन्हींसे तुम्हारा पता मिला। हिरण्य से बात की तो मालूम हो गया कि यह तुम्हारा सहपाठी था। 'तब तारकबाबू को खींच लाने की क्या जरूरत थी।' मैंने हिरण्य से कहा, 'तू ही साथ चल।' हिरण्य तो तुम्हारी तारीफ करते नहीं थकता। तुम अच्छे लड़के हो, हिसाब में तुम्हें आनर्स मिला है।"

हिरण्य बोला, "महिम तो हद से ज्यादा भला है। खेल-कूद नहीं, गप-शप नहीं। छोटा शहर होने पर भी वहां सिनेमा हॉल था, लेकिन मामाजी, महिम तो कभी उस रास्ते भी नहीं जाता था।"

मामाजी हँस पड़े। बोले, "हां, लड़का सचमुच भला है। पर मेरी बेबी एकदम इसकी उलटी है। शनिवार या इतवार को एक बार सिनेमा गये बिना नहीं मानती। उसमें यह आदत उसकी मां ने डाली है। उन्हें जाना है, इसलिए बेटी को भी ले जाती हैं। मुझे भी अपने साथ खींचना चाहती हैं, पर मैं मना कर देता हूं। नहीं, यह बड़ा खराब नशा है। कहीं इसकी लत मुझे भी न लग जाय। बेबी की मां कहती हैं कि यही तो चाहती हूं कि तुम भी इसके चक्कर में आ जाओ। तभी खुद जाकर टिकट लाओगे और मेरी खुशामद करोगे। नशा चाहे जैसा हो भी, उसमें अकेले मजा नहीं आता। उसके लिए साथी जरूर चाहिए। तुम्हारी मामी का भी यही हाल है। भगवान की कृपा से अगर यह नाता जुड़ जाय तो मैं घर जाकर कहूं..."

वह हो-हो करके जोर से हँस पड़े। महिम अवाक् रह गया। ...

नहीं, दामाद ढूंढ़ने आये हैं। नौकर भेजकर थोड़ी मिठाई मंगाई...

मामाजी ने पूछा, "काम-धाम क्या करते हो, बेटा?"

मास्टर होने से ही जैसे आदमी बूढ़ा हो जाता है। ...

लेना-देना ! महिम अभी बहुत कम उम्र का था । बोला, "यही, कुछ इधर-उधर का काम है। एक लड़के को भी पढ़ाता हूं।"

"प्राइवेट ट्यूशन ? अरे, वह तो सभी करते हैं । मिले तो, शायद लाट साहब भी एकाध ट्यूशन कर लें।"

"पत्र-पत्रिकाओं में थोड़ा-बहुत लिखता भी हूं। कुछ कहानियां छपी भी हैं।"

"हां, यह तो हिरण्य बता रहा था। इस उम्र में किसी-किसीको लिखने का शौक होता है ही । पर वह स्थायी काम नहीं है। उसे तो शौकिया करते हो। काम तो वही है, जिससे दो पैसा आये।"

मजबूर होकर महिम बोला, "थोड़े दिन हुए, एक स्कूल में..."

हिरण्य ठहाका मारकर हँस पड़ा । बोला, "कालेज से निकलकर स्कूल में ?"

मामाजी का भी चेहरा कुछ उतर गया पूछा, "तो तुम स्कूल-मास्टर हो ? तारकबाबू तो कह रहे थे कि कार्पोरेशन के लाइसेन्स-इन्सपेक्टर हो।"

महिम एकाएक कुछ सकुचा-सा गया । फिर बोला, "वह नौकरी मिलनेवाली थी । बहुत दिनों तक दौड़-धूप की थी । शायद इसीलिए तारकबाबू ने सोचा होगा कि मिल गई। वैसे मैंने अभी आशा नहीं छोड़ी है। प्रभात पालितबाबू ने कहा है—जबतक वह न हो तबतक स्कूल में ही कर लो। जो कुछ मिल जाय, ठीक है। खुद उन्होंने ही मेरे लिए सिफारिश की है।"

हिरण्य ने चौंककर पूछा, "कौन प्रभात पालित ?"

"वही, रायबहादुर..."

"अरे, वह चाहें तो लाइसेन्स इन्सपेक्टर क्या, कार्पोरेशन का चीफ एक्जीक्यूटिव आफिसर तक बनवा दें।"

महिम बोला, "इसीलिए तो उम्मीद कर रहा हूं कि कोई अच्छा-सा काम मिल जायगा। वह मेरे पिताजी से पढ़े थे। बड़ी श्रद्धा के साथ उन-को याद करते हैं।"

मामाजी ने पूछा, "हां, तो तुम्हारे पिताजी भी मास्टरी करते थे ?

यानी दो पीढ़ियों से मास्टर हो ? अच्छा काम है। इसमें चालबाजी नहीं है। बच्चों के साथ काम करना पड़ता है। मन सच्चा रहता है। जियो बेटा, अब तो रात हो रही है। हम चले।" उठते-उठते बोले, "कहां काम करते हो ? स्कूल का क्या नाम है ?"

महिम ने बता दिया। मामा जी सौ-सौ आशीष देकर चले गए। हिरण्य उनके पीछे-पीछे चल पड़ा। महिम मन-ही-मन अपनेको धिक्कारने लगा—अपनेको सीधे-सीधे मास्टर बताने में संकोच क्यों हुआ ? मामाजी की जिरह से घबड़ाकर ही उसने यह बात स्वीकार की थी। क्या मास्टरी कोई बुरा काम है ? कितने ही महान व्यक्ति यही काम कर गये हैं। विद्यासागर क्या थे ? वह भी तो संस्कृत कालेज के मास्टर ही थे। महामान्य गोखले क्या थे ? कृष्णकिशोर नाग क्या थे ? सूर्यबाबू भी तो मास्टर हैं।

मामाजी मैकीनन कम्पनी में दस से पांच बजे तक कलम घिसकर बहीखाता लिखनेवाले हैं। वह विद्या-दान की महिमा या उसकी च र्चा क्या जानें !

स्कूल में सालाना खेलकूद हैं। पास के ही एक बड़े से पार्क में उसका जलसा होगा। अध्यक्ष खुद अपने हाथों से इनाम बांटेंगे। उसके पहले स्कूल के पीछेवाले अहाते में दो दिनों से चुनाव हो रहा है, यानी ज्यादातर लड़के यहीं से फेल हो जाते हैं और फाइनल के लिए सिर्फ चुनिंदा लड़के ही रह जाते हैं।

चित्तबाबू ने छोटी-सी मोटीवाली कापी में सब मास्टरों की ड्यूटी लिख दी है। कौन खेल शुरू करायेंगे, कौन उसके निर्णायक होंगे और कौन बच्चों को अनुशासन में रखेंगे ? उन्हें उसीके अनुसार सूचना भी दे दी गई है। कार्यक्रम शुरू हो गया तो देखते क्या हैं कि नौजवान शिक्षकों में से ही कुछ रह गये हैं और बड़े-बूढ़ों में से कुछ या तो घर चले गये या तम्बाकूवाले

कमरे में वैठकर धूम्रपान कर रहे हैं और गप्पें लड़ा रहे हैं। कोई-कोई लाइ-व्रेरी में पंखे के नीचे खर्राटे ले रहे हैं। खुद हैडमास्टर भी तो खिसक गये हैं। ऐसे मौके पर हैडमास्टर का हाव-भाव और वातचीत का ढंग विल्कुल वदल गया है। वह दाशू को मुरव्वी वनाकर कह रहे हैं, "मुझे क्यों छोड़े दे रहे हो? चित्तवावू ने मेरे वारे में कुछ नहीं लिखा है। कहो, मैं कौन-सा काम करूं। मैं भी कमर कसकर जुट जाऊं।"

उसी तरह जवाव भी मिल गया। दाशू कृतार्थ होकर कहते हैं, "नहीं सर, इस धूप में आपको नहीं रहने दूंगा। इनाम के लिए जो चीजें खरीदनी हैं, उनकी एक फेहरिस्त करालीवावू ने वनाई है, एक वार आप उसपर गौर कर लीजिये। आपको फाइनल के दिन ही आना पड़ेगा। उस दिन सुवह धूप ज्यादा नहीं रहेगी। वच्चों के मां-वाप और कुछ वाहरी मेहमान आयंगे। अध्यक्ष भाषण देंगे। उसी दिन आपका काम है।"

हैडमास्टर ने कहा, "जान वची भाई, अभी रोकड़िया आयेगा। तीन महीने की जांच करनी है। मैं अभी उसके साथ काम में लग जाऊंगा।"

पताकीचरण महिम के साथ सीढ़ी उतरते-उतरते वोले, "दाशू की चालाकी देखो! हम सव हैं तो उसे वोलने जाने की क्या जरूरत थी? जैसे वही मालिक है। हैडमास्टर तनख्वा तो चौगुनी लेते हैं, धूप क्यों नहीं सहेंगे? अगर हम एक घण्टा सहें तो उन्हें चार घण्टे सहनी चाहिए। अहाते के वीचोंवीच खड़ा कर दो ताकि गंजी खोपड़ी फट जाय। पर ऐसा नहीं होने पायगा। वे पिट्ठू जो वैठे हैं। सौ गज की लम्वी दौड़ के लिए वावन लड़कों के नाम लिखे हैं। ज़रा सोचिये तो कम-से-कम चार दल वनाने पड़ेंगे।"

एकाएक उनकी आवाज दव गई। महिम ने मुड़कर देखा, पीछे-पीछे दाशू आ रहे हैं। पहली मंजिल तक सीढ़ी उतरने पर पताकीचरण ने उनको देखा।

हैडमास्टर के तीन लड़के स्कूल में पढ़ते हैं। वड़ा लड़का पहली क्लास में है। उसे खेलकूद का शौक नहीं है। मौका हाथ लगते ही दो-चार साथियों को जुटाकर वह सिनेमा चला गया है। वाकी दोनों यहां खेल-कूद में हैं।

कंगारू दौड़ में मंझला लड़का सजल भी शामिल है। दोनों पैर रूमाल से वांध दिये जायंगे, फिर कूदते हुए दौड़ना पड़ेगा। निर्णायकों में एक पताकीचरण भी हैं। चूने से मोटी लाइन वना दी गई है। वहीं तक दौड़ना है। रुकते समय लड़के गिर न पड़ें, इसलिए निर्णायक लोग वहीं खड़े होकर वच्चों को पकड़ लेते हैं। पताकीचरण पांच-सात हाथ पहले से ही सजल को पकड़कर खींच लाये। साथ ही चिल्लाने भी लगे, "सेकेण्ड ! सेकेण्ड।" यानी प्रतियोगिता में लड़का द्वितीय आया। लड़के चिल्लाने लगे—"नहीं सर, उससे आगे तीन और थे। यह सेकेन्ड नहीं है।" पताकी हुंकारकर वोले, "सेकेन्ड नहीं है तो क्या मैं झूठ वोल रहा हूं ?"

महिम कापी में नतीजा लिख रहा था। पताकी वोले, "सजल का नाम लिख दीजिये। उससे आगे जो लड़के थे, उनके पैरों का रूमाल ढीला हो गया था। उनके नाम कट जायंगे। मैं अच्छी तरह देखकर ही वोल रहा हूं।"

निर्णायक जो कहेंगे, उसपर कोई कुछ नहीं कह सकता, महिम को लिखना ही पड़ा, पर मन-ही-मन वह दुखी हो रहा था। यह खेल खत्म हुआ तो किसी और दौड़ की तैयारी होने लगी। पताकीचरण को एक ओर वुलाकर महिम ने कहा, "आपने जो निर्णय किया, उसमें मुझे भी कुछ शक है। आप निर्णायक हैं, आपसे कुछ कहने का हक तो नहीं है, फिर भी आपने ठीक से देख लिया था न ? सचमुच क्या उसके आगे के तीनों लड़कों की गांठ ढीली पड़ गई थी ?"

पताकीचरण नाराज होकर वोले, "क्यों नहीं देखा है। न देखूं तो काम कैसे चलेगा ? आगे होनेवाली वैठक में तनख्वा वढ़ने की वात है न ?"

थोड़ी दूर पर व्यस्त दाशू की ओर तिरछी नज़र से देखकर पताकीचरण वोले, "एक वात कहे देता हूं महिमवावू, दाशू नम्वरी चुगलखोर है। सव वातें हैडमास्टर के कानों में पहुंचा देता है। उसके सामने खूव सम्भलकर वातचीत किया कीजिये। मैं तो जो दिल में आता है वही वोल देता हूं। मुझे छिपाकर वोलने की आदत नहीं है। अभी सवेरे की जो वातें सुनी हैं, सव जाकर वतायगा। अरे, तो वताकर कर ही क्या लेगा ? सजल भी तो घर जाकर मेरी वात कहेगा ही ? वह ठहरा अपना लड़का, दाशू की वात का मूल्य उससे वढ़कर नहीं है।"

इसके बाद दूसरी दौड़ हुई—तीन पैरों की। हैडमास्टर का छोटा लड़का काजल भी दौड़ रहा है। काजल के वाएं पांव में कुछ खरावी है, पर हैडमास्टर का लड़का है। इसलिए उसे लंगड़ा नहीं कह सकते। दाशू उसके कक्षा-अध्यापक है, इसीलिए काजल का नाम दौड़ के लिए लिख लिया। हैडमास्टर ने कहा, "नहीं-नहीं, दाशू, इसका नाम काट दो। काजल कैसे दौड़ेगा ? गिर पड़ेगा तो एक और मुसीवत खड़ी हो जायगी।"

दाशू उन्हें तसल्ली देते हुए वोले, "सर, इसीलिए तो काजल का नाम तीन पैर की दौड़ में रखा गया है। जोड़ी में दौड़ेगा, उसका जो पैर कुछ-कुछ खराव है, वही दूसरे लड़के के पैर के साथ वांधा जायगा। अच्छा दौड़ता है, देख लीजियेगा। काजल हवा की तरह उड़ेगा। सब लड़के दौड़ेंगे, वह वेचारा अकेला मुंह लटकाये वैठा रहे, यह भी तो अच्छा नहीं है।"

पर लंगड़े पैर को दूसरे के ठीक पैर के साथ वांधकर भी काजल कामयाव नहीं होगा।

जो हो, दौड़ शुरू हुई तो दाशू भी काजल के साथ-साथ दौड़ रहे हैं—शावाश वाह ! वहुत अच्छे ! फिर जोर से चिल्लाकर वोले, "और तेज ! और तेज !" पर जव काजल तेज नहीं चला तो उसकी कोहनी पकड़कर तेजी से आगे वढ़ाया और उस जोड़े को अव्वल कर दिया।

नवीन पंडित दोमंजिले से उतरे। कई अध्यापक उनके भक्त हैं। पंडितजी रोज-मर्रा की तरह अखवार पढ़कर अध्यापकों को कुछ देर से समझा रहे थे। कभी-कभी हैडमास्टर भी खड़े-खड़े सुना करते थे। अखवार में जो कुछ छपता है, वह कुछ भी नहीं है। असली चीज को तो अक्षरों में से निचोड़ना पड़ता है। खाली पढ़ लेने से कुछ नहीं होता। अखवार मोड़कर वगल में दवाये नवीन पंडित अव घर की ओर चल पड़े और जव चल ही रहे हैं तो अहाते के चारों ओर घूमकर, इधर-उधर देखकर, अपनी जिम्मेदारी भी खत्म करते जा रहे थे। उन्होंने दाशू को बुलाकर कहा, "शावाश वेटा दाशू, जरा इधर तो सुनो। तुम तो वेटा साक्षात भगवान हो। पंगु लंघयते गिरिम्। तुमने तो विल्कुल यही कर दिखाया।"

वेवकूफ वनकर दाशू कैफियत देने लगे, "यह तो आपने देख लिया, पर पताकीवावू की करतूत नहीं देखी ? वीच के तीन-चार लड़के एकदम

गायव हो गये, जैसे वे थे ही नहीं और सजल सेकेन्ड आ गया। पताकीवाबू मुझसे पहले से यहां काम कर रहे हैं, ज्यादा तजुर्बेकार हैं, तो मैं तो उन्हीं-की लीक पर चल रहा हूं। सुन रहा है, तनख्वा बढ़ाने के लिए बैठक होगी। हैडमास्टर की गुप्त रिपोर्ट जायगी। अव आप ही कहिये, मैं यह सव न करूं तो क्या करूं ?

खेल के परिणामों की कापी महिम के पास थी। उसे हैडमास्टर को देना होगा। सांझ होनेवाली है। मास्टर-छात्र अब कोई भी नहीं है। जमादार कमरों में झाड़ू लगा रहा है। धूल से एकदम अंधेरा हो गया है। केवल हैडमास्टर अपने कमरे में बैठे हैं। रोकड़िये के आने की बात थी, पर वह तो नहीं आया। हां, प्राणकृष्ण आया है। पी. के. पब्लिशिंग हाउस का प्राणकृष्ण पाल। महीने-भर से बुलाने पर अव उसे फुरसत मिली है। प्राणकृष्ण जैसे तैयार होकर आया था। आते ही बोला, "माडल ट्रान्सलेशन खतम हो गया, सर ! दो-चार कापियां पड़ी हैं। आप उसमें कहीं-कहीं संशोधन करने के लिए कह रहे थे। अगर तैयार हो तो दीजिये। प्रेस में देना है, अव देर करने से काम नहीं चलेगा।"

प्राणकृष्ण को देखते ही हैडमास्टर आग-बबूला हो गये थे, पर उसकी इस वात से ठंडे पड़ गये। एक संस्करण खत्म होने के वाद दूसरा संस्करण होने का मतलब था कुछ पैसे मिलना। बोले, "वह वात वाद में होगी। किताव की सूची छापने में यह क्या कर दिया ? तुम्हारी यह मजाल ? फिर उसके वाद बुलाने से आये भी नहीं ?"

प्राणकृष्ण निरीह-सा मुंह लटकाकर बोला, "मैंने क्या किया, सर ?"

"मास्टरों ने आपस में परामर्श करके जो पुस्तकें चुन दी थीं, तुमने बदलकर उनकी जगह दूसरी किताबों के नाम छाप दिये ?"

"जी नहीं, वैसा ही है। छपाई में थोड़ी-बहुत भूल-चूक होगई होगी।"

"थोड़ी-बहुत ? पांच-पांच किताबें बदल गई हैं।"

प्राणकृष्ण ने बेशर्मों की तरह दांत निपोर दिये और बोला, "ऐसा हो ही जाता है, सर, कम्पोजिटरों के मगज में कुछ नहीं रहता। क की मात्रा ख पर लगा देते हैं।"

"साहित्य पाठ की जगह नीति बोध हो गया। यह छपाई की गलती है ? जिन पांच किताबों का नाम छाप दिया है, वे सारी ही तुम्हारी कम्पनी की हैं।"

"निकम्मे कम्पोजिटरों को प्रेस से निकाल दूंगा। फिर कभी ऐसा नहीं होगा।"

हैडमास्टर ने कहा, "खूब किया! मैं फिर कभी तुम्हारे चक्कर में नहीं पड़ने का। मास्टर लोग कह रहे थे कि ये किताबें तो हमने नहीं चुनी हैं। तब मंत्री का नाम लेकर मैंने छुटकारा पाया। मैंने कहा कि उन्होंने ही इन किताबों की सिफारिश की है। मंत्री की आदत भी कुछ ऐसी ही है। सूची से अच्छी किताबों का नाम काटकर सिफारिशी किताबों का नाम डाल देते हैं। यह सब कहकर फिलहाल तो बच गया, फिर भी कुछ कहा नहीं जा सकता। अगर कभी कमेटी में यह बात चल पड़ी तब... । खबर पहुंचानेवाले भी तो हैं।"

हैडमास्टर उन आदमियों को जानते हैं। सामने तो भीगी बिल्ली की तरह रहते हैं, पर मन-ही-मन जलेबी की तरह पेंच लगाते रहते हैं। नम्बर एक—कालीपद कोनार। वह कमेटी में है। मैम्बरों के साथ जान-पहचान है, अगर शक होगया तो किसी-न-किसीसे कह देंगे और वह दाशू ? केवल हैडमास्टर के ही नहीं, मंत्री के यहां भी आता-जाता है। वह मंत्री के पुरोहित घराने का है। शादी-ब्याह, काम-क्रिया, अन्नप्राशन, लक्ष्मी-पूजा, सरस्वती-पूजा, सभी में दाशू के बाप का बुलावा आता है। उसी सिलसिले में दाशू भी आता है। उसकी पहुंच तो घर के अन्दर तक है। कालाचांद चाटुर्ज्या मंत्री के लड़के को पढ़ाने जाते हैं। छोड़नेवाले नहीं हैं। लड़का तो प्राची शिक्षालय का छात्र है। वहां का मास्टर भी पढ़ाने जाता है, फिर भी काला चांद शाम के बाद किताब लेकर उसे पढ़ाने बैठ जाते हैं। स्कूल में आकर लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं—खुद मंत्री ने बुलाकर कहा है कि आप जैसी अंग्रेजी किसी और को नहीं आती। बीच-बीच में आकर बच्चे को जरा अंग्रेजी व्याकरण समझा दीजियेगा। महीना खत्म होने पर साथ ही-साथ कहते हैं कि लिफाफे में तीन नोट बंद करके मंत्री स्वयं मेज पर रख जायंगे। यह सब झूठ बात है। मंत्री कहीं पैसा देनेवाले हैं! वह तो

धोबी से कपड़ा धुलाकर भी पैसे नहीं देते। कह देते हैं कि उसके लड़के की फीस माफ कर देंगे। वी. टी. पास करने के वाद मंत्री के लड़के को विना पैसा लिये पढ़ाकर खुशामद करके काम निकालने की यह तरकीव है। इसी आड़ में मजाक भी कहते हैं—काला व्राह्मण और गोरा शूद्र, दोनों ही बड़े भयानक होते हैं। सुपरिन्टेन्डेन्ट गंगापदवावू बूढ़े होकर काम लायक नहीं रह गये हैं। उस काम को भी काला चांद हथियाना चाहते हैं। हो सकता है और भी ऊपर, यानी हैडमास्टरी पर भी नज़र हो। इसीलिए ज़रा उसकी खातिर भी करनी पड़ती है। महिम से भी सम्भलकर रहना होगा। वह प्रेसीडेंट का आदमी है। इन प्राइवेट स्कूलों की हैडमास्टरी का क्या कहें! स्कूल के मालिकों को खुश रखने में ही प्राण सूखते रहते हैं।

बाहर से महिम की आवाज सुनाई पड़ी—"अन्दर आ सकता हूं?"

"कौन है? महिमवावू? आज का काम हो गया? देखिये, मैं आपके ही लिए बैठा हूं। इतनी देर तक हिसाव-किताव से जूझ रहा था। नीचे जाकर एक वार देख आने की भी फुरसत नहीं मिली। आप लोग तो दिन-भर धूप में तपते रहे हैं। दुखीराम कहां गया? तीन प्याला चाय लावे। प्राणकृष्ण क्या तुम जा रहे हो? अच्छा, तव दो प्याला ही सही। महिमवावू, दुखीराम को वुलाकर ज़रा कह दीजिये।"

महिम के अन्दर आते ही प्राणकृष्ण खड़ा हो गया। तीसरे व्यक्ति के आने से उसकी जान वच गई थी। बोला, "ट्रान्सलेशन कितना छपना चाहिए, एक दिन दूकान में ही पधारकर सलाह दे दें।"

महिम ने कहा, "आज के खेलों का नतीजा देख लीजिये, सर!"

हैडमास्टर थकी-थकी आवाज में वोले, "वह ठीक ही होगा, आप लोग देख चुके हैं तो फिर मुझे देखने की जरूरत क्या है! वैठिये, आप-से एक सलाह लेनी है। खेल-कूद का जलसा अगर इसके वादवाले इतवार के दिन किया जाय तो कैसा रहेगा? आप तो प्रेसीडेंट के घर जाते हैं। ज़रा पता लगाइयेगा कि अट्ठाईस तारीख को सवेरे उन्हें खास काम तो नहीं है? वाद में तो मैं खुद ही हो आऊंगा। निमंत्रण-पत्र छपवाना, लोगों के पास उसे भेजना, इनाम की चीजें खरीदना, कई वखेड़े हैं। पहले से तारीख मालूम होनी जरूरी है।"

चाय आगई। चाय पीते-पीते फिर बोले, "सुनिये, थोड़ी देर पहले की बात है। एक सज्जन आये थे, आपके बारे में बहुत-कुछ पूछ रहे थे कि आप कितने दिन से स्कूल में हैं ? वेतन कितना मिलता है ? चरित्र कैसा है ? घर-बार कैसा है ? मैं आपके बारे में क्या जानता हूं—यही सब उस आदमी की जिरह का ढंग मुझे अच्छा नहीं लगा। जरूरी-जरूरी दो चार बातें बताकर मैंने उन्हें विदा कर दिया। आप राजनीति में भी दिलचस्पी रखते हैं क्या ? आप किसी गुप्त दल में तो नहीं हैं ? अगर हों तो छोड़-छाड़कर अब शादी कर लीजिये। लड़कों को शिक्षा देने का व्रत लिया है तो जी-जान से इसीमें लग जाइये। मुझे लगता है कि वह खुफिया पुलिस का आदमी है, आपका पीछा कर रहा है।"

महिम मेस लौटते हुए यही बातें सोचता रहा। बचपन में आलत पोल हाई स्कूल में पढ़ता था। गांव के लड़के थे। बाहर का कोई हाल नहीं मालूम था। बड़े हुए तो कुछ और भी जानकारी हुई। फिर पास होकर महिम ऊपर की कक्षा में पहुंचा, जिसमें सूर्यकान्तबाबू पढ़ाते थे।

छुट्टी में कई लोग गांव आ जाते थे। वे सब कालेज के छात्र थे। गांव आकर आत्मोन्नति संघ बनाते। खाने-पीने के बाद दोपहर को सब इकट्ठे होते थे। अच्छे-अच्छे विषयों पर बातें होतीं। स्वामी विवेकानन्द और सखाराम गणेश देवस्कर की किताबें पढ़ी जातीं। टाडसाहब का राजस्थान का इतिहास, मैजिनी और गैरिबाल्डी की जीवनियां और चण्डीचरण सेन और योगेन्द्र विद्याभूषण की किताबें पढ़ी जातीं। शहर के उन लड़कों को तो शायद विद्याभूषण का नाम भी नहीं मालूम है। आत्मा के साथ शरीर का भी सम्बन्ध है, इसलिए आत्मा की उन्नति के लिए शरीर की उन्नति जरूरी थी। शरीरमाद्यम् खलु धर्मसाधनम्। कुश्ती लड़ते थे, डम्बेल, गदा आदि घुमाते थे। चारुदादा ने जाने कहां से एक रिवाल्वर की भी व्यवस्था कर ली थी। एक दिन पोखरे के किनारे कसाढ़-भांत के जंगल में चुपके-से रिवाल्वर को दिखाया था। एक बार उसे छूने भी दिया था। घोड़ा दबाने पर गोली का चेम्बर खुट्-खुट् घूम जाता है। जेब से गोलियां भी निकालकर दिखाई थीं। गोल-गोल लम्बी-लम्बी गोलियां। एक दिन चारुदादा ने कहा था—घर-गृहस्थी हम लोगों के लिए नहीं

है, सारा देश ही हमारा घर है। हजारों-लाखों आदमियों को मिलाकर देश की आत्मा बनती है। हमें उन आदमियों को गढ़ना है। आत्मोन्नति का अर्थ ही यही है। जरूरत पड़ने पर उनकी सेवा करते-करते ही जान दे दूंगा—गांव के स्कल के शान्त वातावरण में सूर्यबाबू पढ़ाया करते थे। बाद में भारती इन्स्टीट्यूशन की चमक-दमक में होनेवाली पढ़ाई देखी, जैसे स्कूल नहीं, कारखाना हो और मास्टर नहीं, मिस्त्री हों। हो-हल्ला, शोर-गुल। डेढ़-दोसौ लड़के हर साल फाइनल परीक्षा में बैठते हैं। यह नौकरी महिम को अच्छी नहीं लगती। यह भी करीब-करीब सातू घोष की नौकरी-जैसी ही है। महिम इसे छोड़ देगा, जरूर छोड़ देगा।

१२

दो-चार दिन बाद महिम को बुलाकर हैडमास्टर ने कहा, "यह क्या साहब ! आपने कहा कि २८ तारीख को अध्यक्ष को कोई काम नहीं है ? मैं तो आज सवेरे वहां गया था। सुना कि चन्दननगर में किसी मुवक्किल के घर उसी दिन न्यौता है। आप कैसी खबर लाये ?"

महिम अध्यक्ष के घर गया ही नहीं था। जाने का मतलब था कि बरामदे की बेंच या कुर्सी पर बैठे रहना। साहबी ठाठ-बाट के उस मकान में जाने का किसका मन होगा ? वहांपर सांस ही रुकने लगती है। सांस लेते में भी डर लगता है कि कहीं अदब-कायदे का पलस्तर न टूट जाय।

पर अपने इस विचार को महिम ने किसीके सामने प्रकट नहीं होने दिया। यह सीख उसे करालीबाबू से मिली है। उन्होंने कहा था—"अपना रोब जमाये रहिए।" अगर रोब चला गया तो तंग कर-करके जान ले लेंगे। उस छोटी-सी मोटीवाली कापी में आपके खाली घण्टों को काट-काटकर कचूमर निकाल देंगे। आप अध्यक्ष के यहां जायं या न जायं, पर वहां की बात यहांपर खूब कीजियेगा—आज अध्यक्ष से ये बातें हुईं। स्कूल के बारे में पूछ रहे थे। ऐसी ही बातें सुनाते रहियेगा। देखियेगा, है—

से लेकर दुखीराम तक आपकी खातिर करेंगे।

इसीलिए अध्यक्ष के यहां गए विना ही महिम ने हैडमास्टर से कह दिया था। पर एक वार जव झूठ बोल ही चुका है तो अव छोड़ते नहीं बनता। हैडमास्टर की वात सुनकर महिम ने कहा, "चन्दननगर? उनके स्टेनो सतीशबाबू ने तो मुझे वताया था कि वह अट्ठाईस को खाली ही रहेंगे। फिर भी मैंने पूछा था कि अच्छी तरह देखकर वताइये। जिम्मेदारी का काम है। ऐसे-वैसे कह देने से काम नहीं वनेगा। चलिये, मैं खुद ही एक वार देख आऊं। सर, मैंने खुद डायरी देखी थी। २८ तारीख को विल्कुल खाली थी।"

हैडमास्टर ने कहा, "मुझे जाने में दो दिन की देर हो गई। इसी बीच शायद उनका वुलावा आगया। उसके वाद के हफ्ते में ४ फरवरी के पहले वह समय नहीं दे सकते थे। क्या करता! चार तारीख ही पक्की कर आया।

महिम वोला, "सात दिन देर हो गई। खैर, कोई नुकसान नहीं है। अगर गर्मी ज्यादा हो जाती तो जरूर मुश्किल था।"

हैडमास्टर ने कहा, "सात दिन देर होने की वात नहीं है। उससे पहले ३ तारीख को मेरी वेटी की शादी है। उसका सारा वन्दोवस्त अकेले मेरे ही जिम्मे है। ढाई कमरे के किराए के मकान में तो व्याह नहीं हो सकता। इसलिए सव घरवालों को कोन्नगर में अपने घर भेज दिया है। वहीं आना-जाना पड़ता है। अगर यह खेल-कूल का जलसा २८ तारीख को निवट जाता तो सोचा था कि शादी के समय चार-पांच दिन की छुट्टी लूंगा। पर अव जो हाल देख रहा हूं, इससे लगता है कि व्याह के दिन तीसरी फरवरी को भी शायद स्कूल आना पड़े।"

महिम ने कहा, "ऐसी भी क्या वात है? हम सव लोग तो हैं ही आप इतना परेशान क्यों होते हैं?"

हैडमास्टर गद्‌गद् स्वर में वोले, "आप ही लोगों का तो भरोसा है। आप लोग मेरे छोटे भाई जैसे हैं, नहीं तो यह कोई नौकरी है? गनीमत है कि अध्यक्ष महोदय ने तीसरी फरवरी की तारीख नहीं तय की, नहीं तो वेटी की शादी में भी न पहुंच पाता। नौकरी तो वेटी की शादी से भी

बढ़कर है।"

फिर कोई जरूरी बात याद आगई। बोले, "हां, मैं क्या कह रहा था, महिमबाबू ?... अध्यक्ष का भाषण भी तैयार करके देना है। उन्होंने कहा है कि कितने ही मास्टर हैं। किसीसे भी तैयार करने के लिए कह दीजिये। अध्यक्ष का भाषण है। उसे किसी ऐरे-गैरे से कैसे लिखवा सकता हूं। आपकी वह कहानी मैंने पढ़ी थी। बहुत अच्छी भाषा लिखते हैं आप। अंग्रेजी में होता तो मैं ही लिख डालता। पर अध्यक्ष ने कहा कि उस दिन धोती-कुर्ता में आकर भाषण देंगे। जनता भी यही चाहती है। अंग्रेजी बोलें तो शायद लोग शोर मचा दें—'बंगला में बोलिये, बंगला में बोलिये।' मूर्खों से पाला पड़ता है न ! अब सभा-समिति की कोई इज्जत नहीं रह गई है।"

इसी बीच करालीबाबू आगये। उन्होंने टिप्पणी की, "देश का क्या हाल हो रहा है, सर ! अब विवाह के मन्त्र भी बंगला में ही बुलवायंगे, जिससे जनता की समझ में आवें।"

दिन-ब-दिन सभी क्षेत्रों में बंगला आती जा रही है, यही लेकर कुछ देर हँसी-मजाक चलता रहा। खेद की बात तो है ही। काम-काज कुछ हो ही नहीं पाता। दूर क्या, स्कूल कमेटी की मीटिंग को ही लीजिये न ! इससे पहले जो अध्यक्ष थे, वह बहुत ही कड़े मिजाज के थे। अपने घर में क्या करते थे, क्या नहीं करते थे, सो कोई क्या जाने, पर बाहर तो अंग्रेजी छोड़ बंगला का एक अक्षर भी नहीं बोलते थे। मीटिंग में भी यही नियम था कि सब बात-चीत अंग्रेजी में हो। आधे घण्टे में ही दस विषय निपट जाते थे। कहीं ऐसा न हो कि बोलने में अंग्रेजी व्याकरण में गलती हो जाय, इसीलिए बहुत जरूरत के बिना लोग बात नहीं करते थे। अब बंगला हो गई तो सबकी हिचक मिट गई। जो मर्जी हो कह दो, जरूरत न होने पर भी यश लूटने के लिए ही बोल दो। अब तो एक-एक विषय निपटाने में दो-दो घण्टे लगते हैं। काम पूरा होने का नाम ही नहीं लेता।

यह बातचीत चल रही थी कि हैडक्लर्क अमूल्य कमरे में आया। अपनी उपस्थिति जताने के लिए उसने चादर गले में से निकालकर कुर्सी पर रख दी, फिर नीचे कमरे में चला गया। पैदल चलकर आया है, तो थक गया है।

एक चिलम भरकर मजे से दम लगायगा, फिर काम में जुटेगा। काम क्या है, खाक है। ज़रा छोटेवावू फकीरचन्द से जाकर सुन लीजिये, अमूल्य खाली हुकम चलाता रहता है—यह वताओ, वह वताओ। मोटी आवाज में पूछेगा—यह क्या किया? वह ऐसे क्यों किया? और वात-वात में मंत्री का नाम लेकर रोव जमाता है। जव मर्जी हुई आया, जव मर्जी हुई गया। ऊपर हैडमास्टर हैं, पर उनसे पूछने तक की भद्रता भी उसमें नहीं है।

मास्टरों में से कई चाय के शौकीन हैं। फकीरचन्द के काउन्टर के पीछे खड़े-खड़े कई चाय पीते हैं। फकीरचन्द के पास पहले ही से पैसा जमा रहता है। घंटी वजने के ठीक पहले ही वह चाय मंगवा लेता है और ज्यों-ज्यों मास्टर आते जाते हैं, वह गिलास में उंडेलकर देता जाता है। फकीरचन्द इन लोगों से अपना रोना रोता है—अमूल्यवावू तो कुछ भी काम नहीं करते, सारा काम मेरे सिर मढ़ देते हैं।

भूदेववावू ने कहा, "खूंटे के वल पर उछलता है। अमूल्य रोज स्कूल आ जाता है। उसके लिए इतना ही वहुत है।"

काला चांदवावू वोले,"उहुं,ऐसा न कहिये कि अमूल्य काम नहीं करता। उसे तो तुमसे कहीं ज्यादा काम करना पड़ता है। मैं देखता हूं, सुवह-शाम मंत्री के घर हाजिरी वजानी पड़ती है। स्कूल का टाइप राइटर मंत्री के घर रख छोड़ा है। यह सव क्या यों ही हो जाता है? चिट्ठी-पत्री, मंत्री जाने क्या ढेर सारी थीसिस तैयार कर रहे हैं, उसे टाइप करना; फिर वाजार से सामान लाना—सब्जी, मछली। और जव मंत्री महोदय मकान वनवा रहे थे, तवकी याद है, अरे वाप रे..."

काला चांद खूव चढ़ा-वढ़ाकर एक कहानी सुनाते हैं—मंत्री का नया मकान वन रहा था। उन दिनों काला चांद खुद भी स्कूल की नौकरी के उम्मीदवार थे। दिन-रात मंत्री के यहां हाजिरी वजानी पड़ती थी। जव भी जाते, अमूल्य वहीं दिखाई देता। एक दिन कालाचांद ने पूछा, "आप तो यहीं पड़े रहते हैं। कभी स्कूल भी जाते हैं?"

अमूल्य ने कहा था, "हां, जाना तो पड़ता ही है। पहली को तनख्वा मिलती है, उस दिन जाता हूं।"

उसकी आवाज में वड़ी वेवसी थी, मानों तनख्वा उसके घर न पहुंचा

देना बहुत बड़ी ज्यादती है। मंत्री जो भी कहना चाहते हैं; सब बातें अमूल्य की मारफत स्कूल पहुंचती हैं। उसकी खातिर करने के सिवा और कोई चारा नहीं है। हैडमास्टर खुद जाकर चार फरवरी की बात लिखकर मंत्री की मेज पर छोड़ आये हैं। अमूल्य से पता लगाना है कि अध्यक्ष ने तारीख तय कर दी है। अब अगर मंत्री को कोई एतराज न हो तो जोर-शोर से तैयारी शुरू कर दी जाय। निमंत्रण-पत्र छपने का आर्डर आज ही देना पड़ेगा। करालीबाबू ने तमगों का जिक्र किया—"चांदी के बनवाने से हरेक में आठ-दस रुपये लग जायंगे, पर आठ आने तक के भी तमगे मिलते हैं। हुक्म दे दीजिये, कितने और कैसे तमगे आयेंगे ?"

हैडमास्टर ने कहा, "बड़े, बीच के, छोटे उस दिन स्कूल के सभी मालिक आयंगे। शायद घूम-घामकर वे लोग स्कूल देखें। करालीबाबू, आप सब जगह सफाई करवा दीजिये। आम के पेड़ के नीचे कूड़े का ढेर है, वह वहां से हट जाना चाहिए। कुछ टहनियां नीचे लटक गई हैं, उन्हें कटवा दीजिये। दीवारों पर और गुसलखाने में लड़के अंट-शंट, लिख देते हैं, उसपर सफेदी करवा दीजिये। फूल-माला और गुलदस्ता, इन सबकी जिम्मेदारी महिमबाबू पर रही। वह कवि हैं, ढंग की चीज खरीदेंगे। महिमबाबू, एक और भी काम है, फाइनल परीक्षा के छात्रों को पहले से बता दीजिये कि उस दिन वे ज़रा जल्दी स्कूल आ जायं। स्कूल के सब लड़कों को बाग में इकट्ठा कर लीजिये। अगर वे लोग कुछ इधर, कुछ उधर रह जायंगे तो झंझट ही बढ़ेगा। यह सब काम आप, दाशू और पताकीबाबू के जिम्मे रहा। अगर जरूरत पड़े तो किसी और को भी साथ ले लीजिये।"

इतनी देर में तम्बाकू पीकर अमूल्य लौट आया। हैडमास्टर ने उसे पास बुलाकर पूछा, "मन्त्री ने मेरी चिट्ठी देखी ? क्या कहा ?"

अमूल्य ने कहा, "वह तो कुछ नाराज-से दिखाई पड़े। कह रहे थे, 'चिट्ठी-पत्री से काम नहीं चलेगा। और भी कुछ सलाह-मशविरा करना है।' उन्होंने आज शाम को आपको बुलाया है।" इतना कहकर अमूल्य अपनी कुर्सी पर जा बैठा।

हैडमास्टर निमंत्रण-पत्र का मसविदा बना रहे थे। कलम रोककर

थोड़ी देर गुम-सुम बैठे रहे, फिर धीरे-से बोले, "वह नाराज हैं तो मैं क्या कर सकता हूं। कल जाकर डेढ़ घण्टा बैठा रहा, तब पता चला कि वह मरीज देखकर लौटे हैं। जब खबर भेजी तो सुना कि खाना खा रहे हैं। फिर खबर भेजी, तो पता चला कि नया रिकार्ड खरीदकर लाये हैं, खाने-पीने से छुट्टी पाकर सब गाना सुन रहे हैं। मेरी गाड़ी छूटने का समय हो रहा था क्या करता, लिखकर चला आया। इतनी बड़ी सरकार का काम तो लिखाई-पढ़ाई से ही चल रहा है, पर हम लोगों का काम नहीं चलेगा..."

महिम ने सहानुभूतिभरे स्वर में कहा, "घर में काम-काज है। ऐसे समय में रोज-रोज जाकर बैठे रहना..."

"कल वर-पक्षवाले कन्या को आशीर्वाद देने आयंगे। घर से कहा गया है, जरा जल्दी लौटना और यह कह रहे थे कि चिट्ठी-पत्री से काम नहीं चलेगा, खुद मिलना पड़ेगा। क्या करूंगा, जाऊंगा ही! धरना देकर बैठा रहूंगा। बेटी का ब्याह-आशीर्वाद जैसा होगा, वैसा होगा।"

महिम कुछ देर पहले ही चला गया था। काम-काज समझकर करालीबाबू भी जाने के लिए उठ रहे थे, तभी हैडमास्टर ने कहा, "थोड़ी देर बैठ जाइये न! बहुत-से बिल इकट्ठे हो गये हैं। अभी हल्ला-गुल्ला नहीं है। आइये, दोनों मिलकर देख लेते हैं।"

करालीबाबू तुरन्त बात काटते हुए बोले, "मैंने तो बिलों को पहले ही रेट से मिलाकर रख दिया है। कुछ और देखना हो तो देख लीजिये, सर।"

फिर बोले, "मंत्री तो आठ से पहले घर लौटते नहीं, इतनी देर तक आप अकेले कहां बैठे रहेंगे? मुसीबत ही है। मास्टर लोग ट्यूशनों पर जायंगे। वे तो उस समय किसी तरह मिल ही नहीं सकते। मैं तो ठहर जाता, पर आपने अभी कहा है कि सफेदी करानी है। मुझे राज-मिस्त्री का पता लगाना पड़ेगा। केठूकुठी लेन में अगर मिस्त्री न मिले तो पार्क सर्कस तक दौड़ना पड़ेगा।"

•

साढ़े सात बजे हैं। कलकत्ता मैदान में शाम को देर तक घूमने के बाद हैडमास्टर ने कालीबाड़ी जाकर देवी का दर्शन किया, फिर पैदल ही मंत्री के घर गये। समय काटे नहीं कटता, घड़ी के कांटे जैसे बहुत धीरे-

धीरे चल रहे हैं। ठीक साढ़े सात वजे वह आकर अवनीश की वैठक में नहीं, सीढ़ी के पास दरवान के स्टूल पर वैठ गये।

फाटक के वाहर गाड़ी की आवाज़ सुनते ही वह उठ खड़े हुए, पर वे तो रास्ते की गाड़ियों की आवाजें थीं। शायद किसी वजह से रुक गई थीं। आठ वजने के वाद किस्मत खुली। मंत्री आये और हैडमास्टर को देखकर बोले, "क्या वात है, मास्टरसाहव ? यहां क्यों ? चलिये, अन्दर बैठिये, मैं अभी आता हूं।"

इतना कहकर वह अन्दर चले गये। फिर सुनाई पड़ा कि खाना खाने वैठ गये हैं। डाक्टर हैं, इसलिए स्वास्थ्य के नियमों को सोलहों आने मानते हैं। चाहे जो काम हो, साढ़े आठ वजे तक खाना-पीना हो जाना चाहिए।

हैडमास्टर अभी वैठे हैं। जव अपनी आंखों से देखकर गये हैं तो शायद खाने के वाद रेकार्ड सुनने नहीं वैठेंगे। कमरे में विजली का लट्टू जल रहा था। भीतर से नौकर आकर स्विच दवाकर पांच वत्तियोंवाला झाड़ जलाकर चला गया। अवनीश आये, हैडमास्टर ने नमस्कार किया, पर वह वहुत गम्भीर दीख रहे थे। अलमारी से ढूंढ़-ढांढ़कर एक डाक्टरी किताव निकालकर वैठ गये, पन्ने उलटते-उलटते एक जगह रुक गये और पढ़ने लगे तो फिर पढ़ते ही रहे।

दीवार-घड़ी का पैन्डुलम टिक्-टिक हिल रहा था। हैडमास्टर एक कुर्सी पर जड़ की तरह वैठे थे। उनकी आंखों के सामने घड़ी का कांटा रह-रहकर आगे खिसकता जा रहा था। फिर भी वह वार-वार अपने वांए हाथ में बंधी घड़ी देख लेते थे।

किताव वन्द करके अवनीश उठ खड़े हुए। अव हिम्मत करके हैडमास्टर ने कहा, "खेलकूद के वारे में सर..."

"हूँ !" कहकर अवनीश फिर अलमारी के पास चले गये। हाथ की किताव रखकर फिर एक मोटी-सी किताव निकालकर वैठ गये।"

थोड़ा-सा मौका पाकर हैडमास्टर कई वातें कह गये—चार तारीख को खेल-कूद का फाइनल है। अध्यक्ष ने तारीख तय कर दी है, सर ! आपने इसी विषय पर कुछ वातें करने के लिए मुझे वुलाया था।

"करूंगा !" कहकर वह उस मोटी किताव को खोलकर उसमें तल्लीन

होगये । एकदम चुपचाप ।

मजबूर होकर हैडमास्टर ने कहा, "सर, मुझे कोन्नगर जाना पड़ेगा। वहीं से आना-जाना पड़ता है । यहां का घर छोड़ दिया है ।"

"हूं । मालूम है !" कहकर अवनीश ने जीभ छूकर अंगुली गीली की, फिर जल्दी-जल्दी चार-पांच पन्ने उलट गये ।

थोड़ा समय और वीत गया । हैडमास्टर वोले—"आखिरी लोकल चली गई है, अगर और देर होगी तो वस भी नहीं मिलेगी ।"

अवनीश दत्तचित्त होकर पढ़ रहे हैं । हैडमास्टर को लगा कि अध्ययन में वार-वार वाधा पड़ने के कारण जैसे उनकी भौंहें कुछ सिकुड़ती-सी जा रही हैं । पर निरुपाय होकर उन्हें फिर कहना पड़ा, "कल सवेरे मेरी बेटी का आशीर्वाद है । ट्रेन तो अव नहीं मिलेगी, अगर पांच-सात मिनट में नहीं पहुंचते तो. . ."

पर अवनीश ऐसे ही वैठे रहे, मानों हैडमास्टर के शब्द उनके कानों में पहुंचे ही न हों । वेवस होकर वेचारे हैडमास्टर को भी वैठे ही रहना पड़ा । वह मन-ही-मन भारती इन्स्टीट्यूशन की नौकरी को कोसते रहे ।

घड़ी में जव ठीक सवा नौ वज गये, तव अवनीश ने आंखें उठाकर घड़ी की ओर देखते हुए कहा—"क्या मुसीवत है ! इतनी रात हो गई ? मुझे तो विल्कुल ख्याल ही नहीं रहा । आपको तो वहुत दूर जाना पड़ेगा । आप चले जाइये । अव आज नहीं हो सकेगा कल आइये ।"

हैडमास्टर ने आहत कंठ से कहा, "अव तो हावड़ा जाने पर भी वस नहीं मिलेगी । जव इतना देर रुका ही हूं तो आज ही खेलकूद के कार्यक्रम की वातें निपट जायं तो अच्छा रहेगा । अव तो काम में जुट जाना पड़ेगा ।

अपनी वात कटते देखकर अवनीश नाराज होगये, वोले, "दो हफ्ते का समय है । फिर इतनी जल्दी क्यों ? एक भयंकर केस लेकर परेशान हूं। मरीज का रोग ठीक-ठीक पकड़ में नहीं आ रहा है । जिन्दगी और मौत का सवाल है । आज कुछ नहीं होगा । आप कल आइये, मास्टर साहव ।

यहां से निकलने के वाद माघ के कटाकटी के जाड़े में हैडमास्टर साहव पर क्या वीतेगी, यह वही जानते हैं या उनका अन्तर्यामी ।

दूसरे दिन स्कूल जाने पर यह साफ मालूम हो गया कि कल की वात

स्कूल-भर में फैल गई है, सवको मालूम होगई है। अमूल्य आज ठीक साढ़े दस वजे ही स्कूल हाजिर हो गया है, यह उसीका काम है। दाशू ने फुस-फुसाकर वताया कि यह वात सुनाकर अमूल्य मास्टरों के साथ खूव मज़ाक कर रहा था। कह रहा था कि आज भी हैडमास्टर को वहां जाना पड़ेगा। अभी देखिये, कितनी वार जाना पड़ता है। असली वात तो यह है कि इतने बड़े स्कूल के हैडमास्टर की जरूरत दिन-रात में जाने किस समय पड़ जाय, इसीलिए कोन्नगर से आकर काम करना मंत्री को नापसन्द है। हैडमास्टर को फिर इसी मुहल्ले में घर लेना पड़ेगा। किराया चाहे जो लगे।

आज मंत्री के घर जाते समय हैडमास्टर ने मन-ही-मन तय कर लिया है कि उनसे कहेंगे, आज जो भी वात हो, दूसरों को नहीं मालूम होनी चाहिए। इसी तरह होता रहा तो फिर हैडमास्टर की कोई नहीं सुनेगा। इतने मास्टरों और छात्रों को अनुशासन में रखना असम्भव हो जायगा।

पर यह कहने की जरूरत नहीं पड़ी। मंत्री ने एक ही वात में सवकुछ कह दिया—"सुना है कि वाग में खेल-कूद का इन्तजाम कर रहे हैं? खुली जगह है, छांह के लिए कुछ इन्तजाम होना चाहिए। आजकल धूप वहुत तेज होती है।"

वस इतनी-सी वात कहने-भर के लिए हैडमास्टर को पूरे तीन दिन हैरान किया गया। अवनीश चाटुर्ज्या की आदत ही कुछ ऐसी है कि वह अपनी सत्ता को दूसरों को अनुभव कराने का ज़रा-सा भी मौका नहीं छोड़ते।

१२

महिम ने एक भाषण तैयार कर लिया है। शीर्षक है—'शरीर-चर्चा।' कोई ऐसा-वैसा भाषण नहीं है। उसे खुद प्रेसीडेंट साहव पढ़ेंगे। खूव मेहनत करके लिखा गया है। स्वदेशी क्रान्तिकारी दादाओं से प्राप्त ...

ढ़ाई और आलोचना अब काम में आई। लेख अच्छा बन पड़ा है। देखें, ड्रमास्टर क्या कहते हैं। महिम ने भाषण पकड़ाते हुए कहा, "ज़रा पढ़कर खिये, कैसा है?"

"मेरे देखने से क्या लाभ? देखना तो असली आदमी को है। बिना क बार देखे प्रेसीडेंट थोड़े ही पढ़ेंगे।"

महिम ने कहा, "इतने बड़े आदमी के पास जाने के पहले अगर एक ार आप भी देख दें तो मैं निश्चिंत हो जाऊं।"

"देख तो रहे हैं, मैं कितना व्यस्त हूं। बाद को देखा जायगा।"

हैडमास्टर ने लेख लेकर जेब में डाल लिया। करालीबाबू के साथ ठकर वह कोई सूची तैयार कर रहे थे। गंभीर आवाज़ में करालीबाबू कहा, "सोच-समझकर धीरे-धीरे पढ़ना पड़ेगा। यह जल्दबाजी का काम हीं है। सर ने उसे रख लिया है, मौका मिलने पर पढ़ लेंगे।"

थोड़ी देर बाद काम-काज खतम करके करालीकान्तबाबू बाहर निकल ाये। महिम अभी तक वहीं इधर-उधर चक्कर काट रहा था। ऐसा बढ़िया ख अगर हैडमास्टर को पढ़कर सुना पाता तो उसे खुशी होती। वह ल्पना कर रहा था कि लेख सुनकर हैडमास्टर की आंखें चमक उठेंगी। ह उच्छ्वसित होकर कहेंगे, "क्या खूब लिखा है! आप तो बड़े प्रतिभा-ाली हैं।"

कराली को देखकर महिम ने कहा, "अब अन्दर जाऊं? क्या राय ?"

करालीबाबू कुछ समझ नहीं पाये, पूछने लगे, "कहां?" फिर हिम को थोड़ी दूर लेजाकर दबी आवाज में बोले, "राम कहो, वह क्या ुनेंगे? समझ भी क्या पायंगे? उन्हें तो कुछ भी नहीं आता। पांच लाइन ंग्रेज़ी लिखते हैं तो तीन गलतियां रह जाती हैं। देशबन्धु का देहान्त हुआ ा, तब छुट्टी के नोटिस में देशबन्धु के नाम के साथ क्या विशेषण दिया जा कता है, यह नहीं सूझा, तो तिलक के देहान्त के समय जो नोटिस लिखा था, से खोजने लगे। फिर आपका निबन्ध तो बंगला में है। उन्होंने सारी जन्दगी में शायद एकाध ही पन्ना बंगला का पढ़ा होगा। कमेटी भी तो सा ही हैडमास्टर चाहती है। विद्वान हैडमास्टर तो पढ़ाई-लिखाई से ही

जूझता रहेगा। इतना बड़ा स्कूल संभालना उसके वश की बात नहीं होगी। इसलिए यहां के लिए तो दरोगा हैडमास्टर चाहिए। अच्छे-से-अच्छे अध्यापक हैं। पढ़ायंगे तो वे। हैडमास्टर का काम तो केवल यह निगरानी करना है कि कहीं मास्टर लोग लापरवाही न करें, लड़के हल्ला न करें। फिर रोज शाम को जाकर मंत्री का तलवा सहलाना। अगर ऐसा न हो तों वह विगड़ जायंगे। विद्वान हैडमास्टर ये सब नहीं करेंगे। उनके आत्मसम्मान को चोट लगेगी।"

व्यवस्था के अनुसार खेलकूदवाले लड़के स्कूल में जल्दी ही इकट्ठे हो गये हैं। महिम उन्हें स्कूल के हाल में बैठा रहा है। इन्हींमें मलय चौधरी भी है, देवबालक जैसा भोला चेहरा, काले, घुंघराले बालों के गुच्छे, निश्छल, सरल दृष्टि। इस कोमल देह से दौड़-धूप का क्या संबंध, सो मलय खेल में शामिल नहीं है। महिम ने मलय को अध्यक्ष के गले में माला पहनाने के लिए बुलाया है।

मलय कहीं बाहर चला गया था। रामकिंकरबाबू उसे घसीटकर अन्दर ले आये।

महिम ने पूछा, "क्या हो गया, रामकिंकरबाबू ?"

"हम तो इन्हें तरह-तरह के गुण सिखाते रहते हैं, और यह है कि टट्टीघर में दीवार पर अपनी पंडिताई दिखा रहा था। तम्बाकू पीने के लिए कोयले रखे थे। उसीमें से एक टुकड़ा ले लिया था। मुझे देखकर कोयला फेंक दिया और कहता है, 'मैंने नहीं, सर, दूसरे ने लिखा है'।"

करालीबाबू जाने कहां थे। दीवार पर लिखने की बात उनके कानों में पड़ी कि वह हड़बड़ाकर भागते हुए आये और बोले, "ऐं, कल शाम को मिस्त्री सफेदी कर गया और ये बदमाश लड़के दीवार को चौबीस घंटे भी साफ नहीं रहने देते ! सब विद्यावाचस्पति ही बन गये हैं। दुखीराम, ज़रा इधर आ, चूना की बाल्टी लेकर चल, वहां ज़रा एक पौंछा मार दूं। दत्त खान्दान का होकर भी किस्मत में मिस्त्रीगिरी ही लिखी थी।"

वह दुखीराम को लेकर चले गए, फिर जल्दी से लौटकर महिम से बोले, "चलिये साहब, आपको एक बार चलना ही पड़ेगा। बिना आपको

दिखाये मैं उसे नहीं मिटा सकता।"

उन्होंने अपनी वज्र मुट्ठियों में मलय की कलाई जकड़ ली। उसका कोमल हाथ जैसे तोड़ ही डालेंगे। महिम ने दयार्द्र होकर कहा, "इतना नाराज़ क्यों हो रहे हैं? नई-नई लिखाई सीखी है, वच्चा है, हर जगह लिखता फिर रहा है।"

करालीवावू वोले, "लिखना क्या, यह तो एक पूरा-का-पूरा लेख है। आप साहित्यकार हैं, आप इसकी कद्र कर सकते हैं। आपने इसे माला डालने के लिए वुलाया है, पर माला तो इसीके गले में डाल देनी चाहिए।"

इशारा पाकर रामकिंकर और दो-चार और मास्टर जो वहीं थे, उनके साथ चल पड़े। दीवार पर का लेख पढ़कर महिम ने गुस्से में आकर मलय के गाल पर कसकर चांटा जड़ दिया। मलय के गाल पर पांचों अंगुलियां उछल आईं।

रामकिंकरवावू ने घवड़ाये स्वर में महिम के कान में कहा, "सम्भालकर महिमवावू, वड़े आदमी का लड़का है। मारिये-पीटिये मत। मां-वाप की चिट्ठी लिखवा लायगा।"

महिम गरज उठा, "इसे मैं मार डालूंगा।"

मलय वहुत डर गया था। सिर हिलाकर प्रतिवाद करते हुए वोला, "मैंने नहीं लिखा है, सर। किसी और ने लिखा है। मुझे मालूम भी नहीं।"

अध्यापक की निगाह में सभी छात्र एक ही जैसे हैं। कोई भी लिखे, मास्टर के लिए असह्य ही है। महिम मन-ही-मन चाह रहा था, जिसने भी यह लिखा हो, वह मलय न हो।

महिम ने कहा, "उस लिखाई के सामने खड़ा हो जा, मैं देखता हूं।"

मलय के खड़े होते ही महिम ने तड़ा-तड़ तीन-चार थप्पड़ और जमा दिये। फिर उसकी गरदन पकड़कर फाटक से वाहर कर आया, साथ-साथ गरजता रहा—"मैं उसे माला छूने भी नहीं दूंगा। उसके छूने से फूल भी अपवित्र हो जायंगे।"

सजा की कठोरता देखकर कराली दयालु होकर वोले, "रामकिंकरवावू को अच्छी तरह दिखाई नहीं पड़ता। हो सकता है, यह न रहा हो।"

महिम ने कहा, "इसीलिए तो उसे खड़ा करके भी देख लिया। गलती

की है, फिर झूठ वोल रहा है। यह लड़का एकदम विगड़ गया है।"

शरलाक होम्स दीवार पर का लेख देखकर वता सकते थे कि लिखने-वाले की लम्वाई कितनी है ? कोई खड़ा होकर लिखता है तो आंखों के सामने ही लिखता है। अंग्रेजी उपन्यास में पढ़ी हुई यह वात महिम कई बार आजमा चुका है। मलय के वारे में वह वात ठीक निकली।"

रामकिंकरवावू की ओर देखकर महिम ने कहा, "कोई जज, जो पहले आपके छात्र रह चुके हैं, उनपर आपको वड़ा गर्व है।"...

रामकिंकर ने अभिमान के साथ उत्तर दिया, "उसका नाम है सुखमय चक्रवर्ती। मैंने ही उसे वनाया है। जब भर्ती होने आया था, तव एकदम बुद्धू था, वाद को वही जज वन गया।"

करालीवावू ने रामकिंकरवावू की ही वात को शह दी, "हां, गधे को पीट-पीटकर घोड़ा वना दिया।"

महिम ने कहा, "उस जमाने में क्या हुआ करता था, यह तो मैं जानता नहीं, पर अव जमाना वदल गया है। अव तो हम घोड़े को पीट-पीटकर गधा बना देते हैं। साल-भर में कम-से-कम एक तो मैंने ऐसा ही होते देखा है।" थोड़ी देर रुककर फिर वोला, "मुझे ऐसा लगता है कि मास्टरी करना पाप है।"

मैदान के एक छोर पर रंग-विरंगा शामियाना लगा है। अवनीश का ऐसा ही निर्देश था। पीछे की ओर पर्दा भी टंगा है, जैसे रंगमंच हो। उसपर सिंहासन की तरह एक कुर्सी रखी हुई थी। उसके आस-पास की कुर्सियां भी वुरी नहीं थीं। इसी शामियाने के नीचे प्रेसीडेंट और कमेटी के सदस्य वैठेंगे। इसके अलावा दूसरे गण्यमान्य व्यक्तियों को भी यहीं वैठाया जायगा। शामियाना के दोनों ओर दो कतारों में साधारण कुर्सियां रक्खी हैं। कोई पचास कुर्सियां। ये सव वच्चों के अभिभावकों के लिए हैं। डेढ़ हजार निमंत्रण-पत्र भेजे गए हैं। इतनी थोड़ी कुर्सियों से तो काम चलने का नहीं। यह तो जानी हुई वात है, पर केवल दिखाने के लिए ही उन्हें रक्खा गया है। लोग तो इधर-उधर खड़े हो जायंगे, और खड़े रहना पसन्द न हो तो चल देंगे। रुकने के लिए कौन उनकी खुशामद

करने बैठा है !

करालीकान्त को इस यज्ञ का होता कहा जा सकता है। उनके पहनावे में भी आज बड़ी बहार है। बालों के ठीक बीचोंबीच मांग बनाकर दोनों ओर के बालों को कुछ ऊपर को कर दिया है, यानी अलबर्ट ढंग से बाल बनाये गए हैं। कहते हैं, महारानी विक्टोरिया के पति अलबर्ट इसी तरह बाल बहाया करते थे। अध्यक्ष की कुर्सी के सामने एक बड़ी-सी मेज पर इनाम की चीजें सजाई गई थीं। करालीबाबू उन्हें देख रहे थे। यथासमय महिम नाम पुकारता जायगा और करालीबाबू एक-एक चीज उठाकर अध्यक्ष के हाथों में पकड़ाते जायंगे, जिससे देर न होने पावे। खेल खतम होते ही महिम लड़कों की कतार बनवाकर उसका नाम लिख लेगा। अध्यक्ष बहुत समय नहीं दे सकेंगे। उन्हें और भी काम हैं। पांच-सात मास्टर इधर-उधर दौड़-धूप कर रहे हैं। बाकी मास्टर खेल के मैदान में बच्चों पर अनुशासन रख रहे हैं, यानी असली मजा तो वे ही ले रहे हैं। मजे में खड़े खेल देखेंगे।

करालीबाबू ने आकर महिम से कहा, "अरे साहब, आपका लिखा भाषण लेकर तो बड़ी हलचल मच गई है।"

महिम खुशी से फूला नहीं समाया। उसने पूछा, "कैसी हलचल ? किसने क्या कहा ?"

"नवीन पंडित कह रहे थे, हैडमास्टर ने उन्हें ही पढ़ने के लिए दिया था। नवीन पंडित किसीकी भलाई नहीं सहन कर सकते। कहने लगे राम कहो, ऐसी बेकार की चीज अध्यक्ष के हाथ में नहीं दी जा सकती फाड़कर फेंक दीजिये।"

महिम का मुंह लटक गया। पूछा, "उसे पढ़कर उन्होंने बस यही कहा ?"

"उन्होंने कहां पढ़ा होगा उसे। विद्यासागर महाशय के बाद तो वह किसीको लेखक ही नहीं मानते। हैडमास्टर की वजह से शायद उसपर उड़ती नजर डाल ली हो। भाषण लिखने का काम तो उन्हींका था। वह खिसक गये तो आपको लिखना पड़ा। इसीलिए तो हैडमास्टर ने उनसे कहा कि आप तो टाल-टूल गये। जैसा भी हो, महिमबाबू ने कुछ तैयार

तो कर दिया है। इसीपर कुछ पच्चीकारी करके प्रेस में भेज दिया जाय। मैंने भी उत्साह दिया। अध्यक्ष को बंगला शैली की जानकारी कहां है! उन्होंने कभी बंगला पढ़ी भी है? उन्हें जो भी दिया जायगा, उसे ही वह खुशी-खुशी पढ़ देंगे।"

महिम सारे समय चिन्तित रहा कि नवीन पंडित की पच्चीकारी से उसके लिखे की जाने क्या गत हुई होगी! अध्यक्ष जाने कब आकर भाषण पढ़ेंगे। उसके पहले पैकेट नहीं खोला जायगा।

अध्यक्ष आये। मंत्री अवनीश और हैडमास्टर ने लपककर बाग के फाटक पर उनका स्वागत किया। करालीबाबू और दाशू भी दौड़े। ये दोनों ही बहुत कामकाजी आदमी हैं। मालिकों के सामने खूब दौड़-धूप करते हैं। हो-हल्ला मचाते हैं। जो कहा था, एकदम सच निकला—प्रभात पालित धोती-कुर्ता पहनकर आये। यह दृश्य खेल-कूद से भी ज्यादा रोचक था। लोग एक-दूसरे को इशारे से दिखा रहे थे। किसीने कहा, "अरे, अभी तो शुरुआत ही है, दूसरी बार देखना। यह खद्दर पहनकर और गांधी टोपी लगाकर आयंगे।"

आवाज सुनकर महिम ने पीछे मुड़कर उस आदमी को देखा। वही तारककर महाशय हैं—मैक्लीन कम्पनी के खजांची, बड़ी बहन सुधा के जेठ। महिम उन्हें तारकदादा कहता है। भारती इन्स्टीट्यूशन में उनके बच्चे नहीं पढ़ते। उन्हें निमंत्रण-पत्र भी नहीं भेजा गया था, फिर भी जाने कैसे आगये हैं और एक कुर्सी पर जमकर बैठे हैं। अभी तक उनका बोलना जारी है—"रविवार को गंगा के किनारे हवा खाने जाता हूं। वहीं से लौट रहा था तो खेल-कूद देखकर बैठ गया। मैं भी किसी जमाने में मशहूर खिलाड़ी था, खूब दौड़ सकता था। पर शहर में रहकर ट्राम और बसों में चढ़ते-चढ़ते शरीर का सत्यानाश होगया है। चलने में ही दम निकल जाता है, दौड़ने की तो बात ही नहीं उठती। राम-राम, शहर क्या भले आदमियों के रहने की जगह है?"

ट्राम और बस को तो कोस रहे हैं, पर तारकदादा यह नहीं सोचते कि उनकी उम्र भी तो साठ के आस-पास है। सिर पर एक भी बाल काला नहीं रह गया। आंखों के नीचे की चमड़ी लटक गई है। किस उम्र में दौड़

क्यों, जो भी मास्टरी की बात सुनता है, वह मुंह से तो बड़ी श्रद्धा जताता है, पर मन में करुणा, दया रहती है। "हुं, पढ़-लिखकर मास्टरी ! बेचारा !"

महिम ये बातें समझता है। सोलहों आने अनुभव भी करता है। हिरण्य के मामाजी के प्रश्न को वह इसीलिए टाल रहा था। ट्यूशन करता हूं, कहानी लिखता हूं। वह स्कूल-मास्टर है, यह बात तो विवाद और पूछ-ताछ से उकताकर ही स्वीकार करनी पड़ी थी। वह बड़े बाबू तो फौजदारी के वकील को भी जिरह में मात कर देते। अब और नहीं, वह स्कूल की नौकरी छोड़ देगा।

चारों ओर से लोग उसे बुला रहे थे—"मास्टरसाहब, एक कागज मुझे दीजिये। मास्टरसाहब, एक मुझे दीजिये।" ये आवाजें महिम के कानों को बड़ी कटु लग रही थीं। 'मास्टर' के नाम से खुरदरी मूंछ-दाढ़ी वाले एक निरीह, कुबड़े आदमी का चित्र उभर आता है। 'मास्टर' कहकर लोग उसे इसी उम्र में बूढ़ा बनाये दे रहे हैं। वे उसे 'महिमबाबू' कहकर क्यों नहीं बुलाते ? महिम मास्टरी छोड़ देगा। फिर से कमर कसकर नौकरी ढूंढ़ने में जुट जायगा। खेल-कूद की वजह से कल स्कूल बन्द है। महिम सवेरे ही जाकर रमेन को पकड़ेगा कि कार्पोरेशन में कोई जगह है या नहीं !

हेडमास्टर ने बुलाया, "महिमबाबू, ज़रा सुनिये। आपने जो भाषण लिखा था, उसपर बहुत बड़ी शिकायत है।"

महिम बोला, "नवीन पंडित की बात छोड़ दीजिये। वह तो पचास साल पुरानी शैली लिये बैठे हैं। भारी-भरकम शब्दों के बिना उनका जी ही नहीं भरता। पढ़ लेने के बाद भी यदि बत्तीसों दांत ज्यों-के-त्यों रह गये तो फिर भाषा कैसी ?"

नवीन पंडित चले गए थे। अब खुलकर अपनी बात कह देने में महिम को कोई बाधा नहीं थी।

हेडमास्टर ने कहा, "पंडितजी की बात नहीं है। स्वयं अध्यक्ष ने शिकायत की है। वह तो नाराज होकर ही चले गए। कह गये कि मुझे पता न था कि आप ऐसी चीज लिखवाकर देंगे। यह मालूम होता तो स्वयं ही कोई व्यवस्था कर लेता।

महिम ने डरते-डरते पूछा, "क्यों, मुझे तो उसमें कुछ आपत्तिजनक

नहीं दिखाई पड़ा।"

"आपत्तिजनक चीजों को क्या खुर्दबीन लेकर ढूंढ़ना पड़ेगा ? बहुत-सी बातें हैं !" गुस्से से तमतमाकर हैडमास्टर ने जेब से छपा हुआ भाषण निकाल लिया। फिर उसे खोलकर महिम को दिखाने लगे—"यह क्या है ? सारे-का-सारा पन्ना दांततोड़ अटपटे शब्दों से भरा है। यह देखिये, वज्र निर्घोष, उपचिकीर्षा, प्रतिद्वन्द्वी; ये क्या हैं ? देखिये तो, मुझसे भी उच्चारण करते नहीं बनता, अविमृष्यकारिता.. बाप रे बाप, एक-एक उच्चारण में आदमी पसीना-पसीना होजाता है। इसीलिए तो अध्यक्ष ने कहा है कि शैतानी की वजह से ही ये शब्द रखे गए हैं, जिससे कि पढ़ते समय अटक जाने से बीच सभा में हँसी हो।"

महिम ने हैरानीभरे स्वर में कहा, "क्या मुसीबत है ! यह तो एक भी शब्द मेरा नहीं है। आपने नवीन पंडितजी को दिया था। उन्होंने ही यह पंडिताई दिखाई है। "

हैडमास्टर ने भी सोचा, शायद यही बात है। हल्की भाषा को उन्होंने ही वजनदार बना दिया है।

महिम ने कहा, "मेरा लिखा हुआ वह कागज निकालिये। मूल लेख के साथ मिलाकर देखिये। 'अविमृष्यकारिता' के हिज्जे तो मुझसे भी नहीं किये जायंगे। अब बताइये, मेरा इसमें क्या कसूर है और अध्यक्ष की निगाहों में अपराधी मैं ही बना।

हैडमास्टर के चले जाने पर करालीबाबू जोर-जोर से हँसने लगे—"अरे भाई, आप चुप रहिये ! आपकी कोई बदनामी नहीं होगी। मरेंगे तो हैडमास्टर ही मरेंगे। उन्होंने अध्यक्ष के सामने आपका नाम थोड़े ही लिया होगा। वह ऐसे आदमी नहीं हैं। उन्होंने स्वयं लिखा है, यही बताकर यश लूटने गये थे। स्कूल में अच्छा काम कोई भी करे, वह झट्-से कह देंगे, "मैंने किया है।" अब सारा बदला चुक जायगा। पाप का घड़ा भरते-भरते अपने-आप ही फूट जाता है। उस समय मैं वहीं पर था। बड़ी मुश्किल से हँसी रोक पाया था।"

१४

दूसरे दिन सवेरे महिम रमेन के निवास पर गया। कार्पोरेशन के बारे में पता लगाना था।

रमेन ने आश्चर्य से कहा, "इतनी अच्छी-भली नौकरी मिल गई है, फिर दूसरी नौकरी की बात क्यों सोचते हो? तभी तो कहते हैं कि लालच बुरी बला है।"

"नौकरी क्या, स्कूल-मास्टरी ही तो है। इसे तुम अच्छी-भली नौकरी कह रहे हो?"

रमेन बोला, "स्कूल कैसा है, यह भी तो सोचो, कितना नामी स्कूल है।

"हां, पर सिर्फ नाम-ही-नाम है। हाल तो यह है कि पोखरे में लोटा भरने-भर का भी पानी नहीं है। तनख्वा कितनी मिलती है, जानते हो?"

"मुझे क्या सुनाते हो? यह नौकरी करने के पहले कुछ दिनों तक मुझे भी स्कूल में काम करना पड़ा था। बहुत लोग करते हैं। स्कूल भी वैसा ही था। तुम्हारी जैसी किस्मत कितनों की होती है? तुम्हें तीस रुपया लिखकर पन्द्रह तो नहीं लेना पड़ता! पूरी तनख्वा एकमुश्त मिल जाती है। ऊपर से ट्यूशनों के रुपये तो महीने-भर मिलते ही रहते हैं। हम लोगों का क्या? तेली के बैल की तरह महीने-भर खट-खटाकर पहली तारीख को जेब-भर रुपया ले आते हैं। घर में पंसारी-ग्वाला, बैठे रहते हैं। शाम को महरी और कोयला-लकड़ीवाले भी आजाते हैं और रात के किसी तरह बीतते-बीतते भोर में ही मकान-मालिक आ धमकता है। सबको बांट-बूंटकर महीने-भर खाली जेब थपथपाते रहो। दो पैसे देकर ट्राम में दफ्तर जाऊं, यह भी नहीं हो पाता। पैदल रास्ता नापना पड़ता है। लानत है ऐसी नौकरी को। मैं तो तुम्हारी नौकरी के साथ अदला-बदली तक करने के लिए तैयार हूं।"

महिम ने सोचा—यह आदमी कुछ भी मदद नहीं करेगा, यूं ही गाल बजाता रहेगा। आंगन के छोर पर नल के नीचे बैठकर रमेन बनियान और

रुमाल में साबुन लगा रहा है, फिर खड़ा होकर हौज में से निकाल-निकालकर सिर पर पानी डालने लगा। पानी डालते-डालते रुककर रमेन ने महिम से कहा, "शाम के लिए मुझे एक ट्यूशन दिला दो। मैं स्कूलमास्टर नहीं हूं, पर ग्रेजुएट तो हूं। पहले ट्यूशन की भी है। तुम मास्टरों की वजह से अब ट्यूशनें मिलती नहीं। तुम लोगों का पेट तो भंडार जैसा है। एक-एक आदमी दस-दस ट्यूशनें ले लेता है। बचे तब तो बाहरी लोगों को मिले।"

महिम मैस लौट रहा था। देखा, कालाचांदबाबू इधर-उधर देखते हुए आगे चले जा रहे हैं। उसने बुलाकर पूछा, "कहां से आ रहे हैं, कालाचांदबाबू ?"

कालाचांदबाबू हँसकर बोले, "आप बताइये।"

महिम सोचने लगा। कालाचांदबाबू जोर से हँसकर बोले, "अरे, इसमें भी कोई सोचने की बात है। साल-भर हो गया। आपने अभीतक कुछ भी नहीं सीखा। चाल देखकर ही तो पता चल जाता है कि मैं ट्यूशन से लौट रहा हूं। ट्यूशन पर जा रहा होता तो खड़े-खड़े बात करता कि सरसराता हुआ चला जाता ?"

महिम ने कहा, "आपने कहा था, मुझे एक ट्यूशन दिलवा देंगे।"

"याद है। पर कोई अच्छा-सा मिले तो वही दूंगा। जल्दबाजी से काम नहीं चलेगा। आप तो सिर्फ एक-दो करेंगे। वे अच्छे होने चाहिए।"

"पढ़ाऊं भी वहीं और रहूं भी वहीं, अगर ऐसा कोई ट्यूशन मिल जाय तो बड़ा अच्छा रहे।"

"क्यों ? मैस में कोई असुविधा होती है क्या ?"

"नहीं। सोच रहा हूं कि नये साल में लॉ कालेज में नाम लिखा लूं। मैस में शोर होता है। पढ़ाई-लिखाई नहीं हो पाती, इसीलिए किसी शान्त जगह में रहना चाहता हूं।"

कालाचांद ने आश्चर्य से कहा, "तो कानून पढ़कर वकील बनेंगे ? सैकड़ों वकील बने बेकार घूम रहे हैं। मुवक्किल की ताक में सारी दोपहरी पेड़ के नीचे बैठे रहते हैं। किसी दिन अलीपुर जाकर देख तो आइये।"

महिम ने कड़वे स्वर में कहा, "फिर भी लोग उन्हें 'वकील' कहते हैं। 'मास्टर' नहीं कहते। मैं अब मास्टरी नहीं करना चाहता।"

बातों-ही-बातों में वे दोनों चौराहे के मोड़ पर पहुंच गये थे। कालाचांद बोले, "किसीके घर में रहने पर वह खूब खटाता है। कोई बंधा हुआ समय तो रह नहीं जाता! मैं भी ऐसी ही एक जगह रहता था। एक घण्टे के बदले ढाई घण्टे पढ़ाना पड़ता था। कभी बच्चे का बाप आकर कहता—मास्टरजी, ज़रा धोबी का हिसाब जोड़ दीजिये। कभी महरी आकर चिट्ठी लिखाने बैठ जाती।"

जगदीश्वरबाबू ने चुपके-से पीछे से आकर कालाचांदबाबू के कन्धे पर हाथ रख दिया। उनके बाएं हाथ में पकौड़े थे। बोले, "बहुत अच्छा बनाता है। खायेंगे आप? पर बैठा कहां जाय? हर ओर से तो नज़र पड़ रही है। मौका देखकर गुरुजी के चेलों की भी भरमार हो जायगी।"

कालाचांदबाबू बोले, "क्यों, आज के सारे ट्यूशन पढ़ा चुके?"

जगदीश्वरबाबू बोले, "अभी कहां? वह तो बड़े आदमी की लाड़ली है, जो शाम को सिनेमा जाती है या जिसके यहां मौसी या बुआ आजाती हैं। मैंने सोचा, आज छुट्टी का दिन है, उसे सवेरे-सवेरे ही पढ़ा आऊं। पर लड़की की मां तो गरम होगई। कहने लगी, 'इतने सवेरे क्यों आगये? अभी पाली के जगने में देर है। जल्दी उठने से उसे जुकाम हो जाता है। ज़रा सोचिये, उस समय घड़ी में नौ बज चुके थे।"

फिर उन दोनों की ओर देखते हुए बोले, "कुछ खबर मालूम हुई? शायद हम लोगों की छुट्टी बढ़ जाय।"

"वह कैसे?" मास्टरों और छात्रों के लिए छुट्टी से बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है? दोनों ने एक साथ प्रश्न किया, "क्या हुआ, बोलकर तो कहिये।"

"अध्यक्ष बहुत बीमार हैं। पता नहीं कब चल दें! शायद इस बीच खतम हो गये हों। मास्टर के मरने पर दिन-भर की छुट्टी होती है, तो अध्यक्ष या मंत्री के मरने पर तो दो दिन से कम की क्या छुट्टी होगी, आप क्या कहते हैं? ठीक है न?"

जगदीश्वरबाबू की खुशी में महिम शामिल नहीं हो सका। प्रभात

पालित ने उसकी भलाई की है। उन्हींकी कृपा से स्कूल की यह नौकरी उसे मिली है। वह बोला, "कल बाग में आकर सभा में शामिल हुए, पर एका-एक यह क्या हो गया ?"

"अरे, ये सब बड़ी बदनामी की बातें हैं। रेबेका नाम की कोई यहूदिन है। उसीको लेकर जाने क्या-क्या बातें हैं। पालित के घर से असली बातें दबा दी गई हैं। लोग तो कुछ और ही कह रहे हैं। मेरी छात्रा और अध्यक्ष दोनों के मकान बिल्कुल अगल-बगल हैं। मुनीम ने मुझे भी बताया है।"

प्रभात पालित शनिवार को कचहरी से निकलते ही लापता हो जाते थे, वह रहस्य महिम को आज मालूम हुआ। वह कड़ेया रोड पर रेबेका के यहां जाया करते थे। वहीं से कभी-कभी हावड़ा का पुल पार-करके चन्दननगर में, गंगा के किनारे, किसी बागवाले मकान में जाते थे। घर के लड़के-बच्चे, सबको यह बात मालूम थी। देहाती होने के कारण सिर्फ महिम को ही इतने दिनों तक यह सब पता नहीं था।

प्रभात की पत्नी का देहान्त बहुत दिन पहले हो चुका था। दिन-रात की इतनी मेहनत, इतनी कमाई, इतना नाम ! हफ्ते के आखिरी दिन थोड़ा विश्राम करते हैं, इसपर कोई बुरा नहीं मानता। अबकी बार कुछ गड़बड़ी होगई। एक बड़े मुकदमे के लिए कहीं बाहर से बैरिस्टर आये हैं। शनिवार की रात में उनसे सलाह-मशविरा करना था। रविवार को सवेरे स्कूल के खेल-कूद के जलसे का झंझट था। भाषण खतम करते ही जरूरी काम का बहाना करके वह इसीलिए भागे कि रेबेका के लिए मन छटपटा रहा होगा।

"रेबेका यहूदिन है। उसके यहां बड़े-बड़े आदमियों का आना-जाना है। उसके ड्राइंगरूम में देश की बड़ी-बड़ी समस्याओं की आलोचनाएं-प्रत्यालोचनाएं होती हैं। रेबेका के अन्तःपुर का अलग प्रबंध है। उसीके अनुसार शनिवार की रात और रविवार का पूरा दिन प्रभात पालित के लिए निश्चित रहता है। प्रभात पालित के न रहने पर भी उस समय कमरा खाली ही रहता है। अबकी बार ऐसा नहीं हुआ। यह तो राखालदास की ही गलती थी—हां, वही रायसाहब राखालदास, जो पुलिस के खास अफ-सरों में से हैं। यों तो दोनों में ही मित्र[illegible]

के लिए नहीं।"

यह सब बताते समय मुनीम खूब हँस रहा था। जगदीश्वरबाबू ने दुखी होकर कहा था, "एक आदमी मर रहा है। आप लोगों को इतनी हँसी कैसे आ रही है ?"

मुनीम ने कहा "हँसना क्या देखते हैं, मास्टरसाहब, अगर कोई बुरा न माने तो मैं तो माला खरीदकर प्रभात पालित के गले में डाल आऊं। हां, बहादुर आदमी है, दोनों में खूब घूंसेबाजी हुई थी। सुना है, प्रभात की आहट पाकर राखाल रेबेका के पलंग के नीचे छुप रहा था, पर उसकी तोंद अटक गई। तोंद से पांव तक का आधा हिस्सा पलंग के बाहर रह गया था, मौका पाकर प्रभात बेधड़क उसे पीटने लगे। रेबेका ने बीच-बचाव और खींचा-तानी करके राखाल को निकाला तो राखाल ने भी बदला लिया। प्रभात ने राखाल के दोनों हाथों को, जो देश-भक्त स्वयं-सेवकों को पीटते-पीटते खाल उधेड़ लेते थे, मरोड़ दिया। प्रभात का क्या हुआ, यह तो आपने सुन ही लिया। उनका तो हाल बेहाल है। बस,अब गये, अब गये। अगर मर गये तो प्रभात को शहीद कहकर पूजूंगा। घर के लोग असली बात दबा रहे हैं तो क्या हुआ, सच्चाई छिपी थोड़े ही रहती है। उम्र तो साठ से ऊपर की है, पर उनकी शक्ति को देखकर ढांढस बंधता है कि अब हम लोग आजाद होकर ही रहेंगे।"

दूसरे के मुंह से कोई भी बात राई से पहाड़ बन जाती है, इसलिए शाम को महिम खुद प्रभात पालित के यहां गया। और दिन तो बैठक आदमियों से भरी रहती थी, आज एक भी आदमी नहीं दिखाई पड़ रहा था, जैसे मकान ही खाली कर दिया गया हो। उसे देखकर अजीब-सी घबड़ाहट होती थी। आखिर पांचूलाल मिल गये। बाहर आकर खिसियाई आवाज में बोले, "क्योंजी, क्या देखने आये हो ? उन्हें तो मुर्दाघाट ले गये। अब तो जला भी चुके होंगे। जाओ।"

दूसरे दिन अखबार में छपा कि प्रवीण और प्रसिद्ध वकील प्रभातकुमार पालित सोमवार, एक बजे दिन को एकाएक हृदय-गति रुक जाने से पर-लोकवासी हो गये। कई देश-हितैषी संस्थाओं के साथ उनका सम्बन्ध था।

वह जाने-माने दानदाता और परोपकारी थे, आदि-आदि ।

अध्यक्ष की मृत्यु के कारण स्कूल में छुट्टी का नोटिस लगाया गया कि नहीं, यह देखने के लिए सुबह से ही स्कूल के सामने छात्रों और मास्टरों का आना-जाना शुरू हो गया । कुछ भीतर जाकर बूढ़े दरवान से भी पूछ-ताछ करने लगे । पता चला—नहीं । मंत्री या हैडमास्टर, किसीने कोई खबर नहीं भेजी है । सब चुप हैं । स्कूल बन्द रहेगा कि नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता । ताज्जुब की बात है कि उन्हें अभी तक खबर नहीं मालूम है । अखबार में भी तो खबर छप गई ।

परसों ही तो उन्हें समारोह का अध्यक्ष बनाकर उनकी कितनी प्रशंसा गई थी, पर मरते ही एकदम सब रिश्ता ही खतम हो गया । नहीं तो उस आदमी के नाम पर कम-से-कम एक-दो दिन स्कूल में छुट्टी तो कर ही देनी चाहिए थी ।

नोटिस नहीं लगा है तो खा-पीकर ठीक साढ़े दस बजे स्कूल आना ही पड़ेगा । शायद स्कूल में ही मातमपुरसी करनी पड़े । लाइब्रेरी के सामने हैडमास्टर गम्भीर चेहरा बनाकर खड़े हैं । उन्हींके द्वारा सब-कुछ मालूम हुआ ।

"इतने बड़े आदमी का देहान्त होगया, सिर्फ नोटिस टांगकर ही छुट्टी दे देना ठीक नहीं है । जब सब आ ही गये हैं तो आज के दिन की छुट्टी नहीं गिनी जायगी । इसलिए कल और परसों, दोनों दिन स्कूल बन्द रहेगा । सब जल्दी-जल्दी अपनी-अपनी कक्षा में चले जायं । जैसे छुट्टी की घण्टी बजती है, वैसे ही घण्टी बजेगी । कक्षा से निकलते समय लड़के मौन रहकर निकलेंगे । शोक मनाया जा रहा है, आवाज न होने पावे । तबतक मास्टर अपनी-अपनी कक्षा के बालकों को अध्यक्ष के सद्‌गुणों के बारे में बतावें ।"

भूदेवबाबू बोले, "शनिवार को भी छुट्टी है, सर । कोई ईसाई त्योहार है । बुध और बृहस्पति के बदले अगर आप ये छुट्टियां बृहस्पति और शुक्र को दे दें तो चारदिन की एक साथ छुट्टियां मिल जायं । इनमें बहुत लोग अपने घरों को जा सकते हैं ।"

हैडमास्टर बोले, "मंत्री के हुक्म के बिना मैं ऐसा नहीं कर सकता ।

वह भी यह बात नहीं मानेंगे। शोक मनाना कैसे टाला जा सकता है ?"

कक्षा में जाते समय जगदीश्वरबाबू ने महिम से कहा, "आप तो कहानी-वहानी लिखते हैं । एक कहानी लिख दीजिये न।"

"कहानी कैसी ?"

"हैडमास्टर ने जो कहा है, आपने भी तो सुना होगा। लड़कों के सामने अध्यक्ष का गुणगान करना होगा । क्या गुणगान करूं, बताइये तो ? राखालदास को पीटकर शहीद हो गये, यही ? अपनी साठ साल की उम्र में उन्होंने शायद एक यही काम अच्छा किया है। पर लड़कों के सामने रेबेका के घरवाली बात बताना क्या ठीक होगा ? इसीलिए कह रहा हूं कि आप कल्पना से कुछ बना दीजिये।"

एक-एक करके सभी कक्षाओं की छुट्टी हो गई। लड़के चुपचाप निकल आये। हैडमास्टर सीढ़ी के पास खड़े हैं। लड़के बाहर जाकर चिल्ला रहे हैं—"कैसा मजा रहा ! कल खेल-कूद की छुट्टी थी ! आज अध्यक्ष की छुट्टी है। अगर रोज-रोज ऐसा ही हो तो क्या ही मजा आये।"

सलिलबाबू रजिस्टर में दस्तखत करके अपना छाता उठाने लगे, तभी हैडमास्टर ने कहा, "अभी आप लोग मत जाइये। इतने बड़े आदमी थे, कायदे से कुछ तो होना चाहिए । चलिये, सभी पहली बी के कमरे में चलिये । दुखीराम, सब मास्टरों को बुला लाओ। जो जहां भी हो, उसी कमरे में इकट्ठे हों। प्रस्ताव लिख रखा है। बस, दो मिनट में सब हो जायगा।"

हैडमास्टर सफल व्यक्ति हैं। उन्होंने कोई भाषण वगैरा नहीं दिया, केवल दो-चार बातें ही कहीं, "अध्यक्ष कितने महान थे, यह हम सबको मालूम है। परसों आकर हमारे बीच कैसा सुंदर भाषण दिया, कितनी ही सीख की बातें बता गये । बस, शोक-प्रस्ताव पास करके आप लोग जा सकते हैं। अब शुक्रवार को आइये। अध्यक्ष के लड़कों के पास मैं यह प्रस्ताव भेज दूंगा।"

सभा खतम हो गई। बहुतेरे मास्टर तो वहीं से ट्यूशनों पर चले गए। लड़के छुट्टी पाकर घर जा रहे हैं। उनके पीछे-पीछे ही जाकर रात की पढ़ाई

खत्म कर देंगे।

मास्टरों में से दस-बारह आरामतलब मास्टर रह गये। वे दोपहर की धूप में बाहर नहीं जाना चाहते। उन्होंने करालीकान्त को पकड़ा—"पारितोषिक-वितरण तो हो गया, और आप उसके कर्ता-धर्ता रहे, पर हम लोगों को खिलाया-पिलाया तक नहीं ? आज ही ठीक मौका है, भीड़ भी नहीं है।"

कराली ने कहा, "जरूर, इसमें क्या है ! मैं दत्त-खान्दान का लड़का हूं। मेरे बाप-दादा तो खिलाने-पिलाने में ही मुफलिस हो गये, तभी तो मुझे मास्टरी करनी पड़ी। सुनो दुखीराम, मास्टरों के लिए चाय तो ले आओ। आठ आने की चाय, आठ आने के बिस्कुट।"

सचमुच हालत कुछ गिर गई है, फिर भी खान्दानी बड़प्पन कहां जायगा ? करालीबाबू दिलवाले आदमी हैं। एक ही बात में जेब से सोलह आने निकाल दिये। एक बार सोचा तक नहीं। और कौन कर सकता है ऐसा ?

बिस्कुट-चाय आ गई। मास्टर, क्लर्क, दरबान, बैरा, सब मिलाकर बीस जने उपस्थित थे। सबने एक-एक बिस्कुट उठा लिया। टूटी-फूटी और साबुत, सब मिलाकर चार प्यालियां और छः गिलास भी निकल आये, और क्या चाहिए ? एक-एक प्याले के हिसाब से चाय सबको पूरी न पड़ती। इसीलिए अन्दाज कर सबने आधा-आधा प्याली चाय ले ली। चाय पीकर प्याली और गिलास धो-धोकर दूसरों को देते गये। इस तरह छुट्टी की दोपहरी अच्छी बीत गई।

१५

कालाचांद ने महिम को एक ट्यूशन दिलवा दिया है। छात्र के घर में ही खाने-पीने और रहने का प्रबन्ध हो गया है। अभिजात वर्ग के हैं, पर अब उतनी सम्पन्नता नहीं है। नाम-ही-नाम रह गया है। घर में

परिमल को नौकरी करके रोटी जुटानी पड़ती है। नौकरी रेलवे की है, बहुत बड़ी भी नहीं। महल जैसा पैतृक-मकान। नीचे की मंजिल में मोटी दीवार और बड़े-बड़े अंधेरे कमरे, जिनमें दिन में ही बत्ती जलाये विना काम न चले। वैसा ही एक कमरा महिम को भी मिल गया है। घर के लोग दूसरी मंजिल पर रहते हैं। रसोई और खाने का कमरा नीचे है। जितना मन चाहे पढ़िये, शान्ति-ही-शान्ति है, कहीं जरा भी शोर नहीं।

स्कूल की छुट्टी होते ही महिम ला कालेज चला जाता है। पौने पांच बजे क्लास लगती है। कालेज से सीधा घर नहीं आता। पुरानेवाला ट्यूशन भी पढ़ाकर ही लौटता है। सबेरे तो यहीं पढ़ाता है। बात तय हुई थी कि सबेरे एक घंटे तक बड़े लड़के पाटु को पढ़ायेगा, फिर अपनी पढ़ाई करेगा। थोड़े दिनों तक ऐसा ही चलता रहा।

एक दिन पाटु अपने छोटे भाई बटु को भी साथ लेकर नीचे उतरा। कहने लगा, "मां ने इसे भी भेज दिया है।"

"क्यों ?"

"इसके मास्टरजी कुछ दिनों से नहीं आरहे हैं। बीमार हैं। यह हमारे स्कूल में ही सातवीं कक्षा में पढ़ता है। कल कक्षा में इसे सजा मिली थी। मां ने कहा है कि आपसे पाठ पढ़कर यह चला जायगा। ए बटु, जल्दी कर, मेरा भी बहुत-सा काम है।"

बटु ने एक-एक करके सारा सबक पूछ लिया। उसके बाद भी वहीं महिम के बिस्तर पर बैठ गया। वहीं बैठे-बैठे सबक तैयार करता रहा। भूलने पर बार-बार उठकर पूछता भी रहा। महिम क्या करता ! ऐसे आग्रही छात्र को इन्कार भी कैसे किया जा सकता है ? सचमुच,अध्यापन कोई व्यापार तो है नहीं। पुराने जमाने में शिक्षक विद्यादान करते थे और साथ ही विद्यार्थियों को भोजन और अवास भी देते थे। अब तो रोटी चलाने के लिए पैसे लेने पड़ते हैं, ऊपर से छात्र ही के घर में आश्रय भी लेना पड़ता है ! फिर आंखों का लिहाज कैसे छोड़ा जाय ? पढ़ने दो, जबतक बटु के मास्टर अच्छे न हो जायं, तबतक वह भी पढ़े।

पर आफत यहीं खतम नहीं हुई। बटु की छोटी बहन माया भी उसके पीछे-पीछे आने लगी। जो मास्टर बटु और माया, दोनों को पढ़ाते हैं,

वह बीमार हैं।

महीने-भर यही क्रम चलता रहा, बटु और माया के मास्टरजी नहीं आये। ऐसी कौन-सी बीमारी होगई ? कुछ मालूम तो हो !

सुबह तो इसी तरह बीत जाती है। लॉ कालेज से लेक्चर सुनकर आता है, पर किताब खोलकर ज़रा दुहरा लेने की फ़ुरसत भी नहीं मिलती। कभी-कभी कालेज में ही बनावटी अदालत बैठती है। प्रोफ़ेसर न्यायाधीश बनते हैं। छात्रों में से कुछ तो वादी के वकील बनते हैं और कुछ प्रतिवादी के। महिम को मुजरिम की वकालत करने का आदेश हुआ। स्कूल से अस्त-व्यस्त सीधे लॉ कालेज आकर लाइब्रेरी से ला-रिपोर्ट ले आया है। उसीमें इस मुक़दमे का विवरण है। पर एक बार सरसरी निगाह डालने तक का समय भी नहीं मिला। क्लास शुरू हो गई। एक मोटी-सी किताब हाथ में लिये हुए महिम वहां पहुंच गया। प्रोफ़ेसर ने उसकी ओर देखकर कहा, "वहां बैठो। हाजिरी हो चुकी है। फिर भी मैं अदालत का काम देखकर तुम्हारी हाजिरी भर दूंगा।"

पढ़ाई खत्म होने के बाद बनावटी अदालत बैठी। फ़रियादी वकीलों ने अपना मामला पेश कर दिया। फिर महिम की बारी आई। प्रोफ़ेसर आंखें मूंदकर सुन रहे हैं और बीच-बीच में तारीफ भी करते जाते हैं, "वाह, बहुत खूब।" अपनी दलीलें पेश करके महिम बैठ गया तो वह आंख खोलकर बोले, "मुजरिम के विद्वान वकील ने कानून कें जटिल तथ्यों की छानबीन बड़े सुन्दर ढंग से की है। मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं। मुजरिम बच जायगा, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं रह गया, पर एक बात (प्रोफ़ेसर महिम की ओर देखकर हँसते हुए बोले) यह मुकदमा सालों पहले हाई कोर्ट में आया था, तब बावेल साहब ने एकदम इसी ढंग से मुजरिम की पैरवी की थी। इससे यही सिद्ध होता है कि सभी विद्वान लोग एक ही तरह से चिन्तन करते हैं, यहांतक कि भाषा भी हू-ब-हू एक-सी ही रहती है।"

सारी क्लास हँसी के ठहाके से गूंज उठी। प्रोफ़ेसर बड़े चालाक थे। डेस्क पर लॉ-रिपोर्ट खोलकर महिम पढ़ रहा था, यह बात आंखें मूंदे रहने पर भी उन्हें मालूम होगई थी। पर और चारा ही क्या है ? दिन-रात, एक क्षण भी तो पढ़ने का मौका नहीं मिलता। अब दशहरे की छुट्टियां होने

वाली हैं, उस समय जरूर कुछ पढ़ाई हो जायगी।

कालाचांदबाबू ने पूछा, "आपकी पढ़ाई-चढ़ाई कैसी चल रही है, महिमबाबू ?"

"अरे साहब, पढ़ाने से तो समय ही नहीं बचता, पढ़ूंगा कब ? रक्तबीज के झाड़ हैं। दिन-ब-दिन बढ़ते ही जा रहे हैं। कुल मिलाकर कितने भाई-बहन हैं, एक दिन पता लगाना पड़ेगा।"

कालाचांदबाबू बोले, "मैंने आपसे पहले ही कह दिया था न ! आप लोग तो मोतीबाबू के जैसा ही ट्यूशन चाहते हैं। अरे भई, ट्यूशनें भी बड़े भाग्य से मिलती हैं। मोतीबाबू जैसा राजसी ट्यूशन कितनों के भाग्य में होता है ?"

माया के भी आने से ही विपदा का अन्त नहीं होगया। थोड़े दिन बाद माया के पीछे एक और आया, नन्तु। माया बोली, "बहुत तंग करता है नन्तु। ज़रा भी काम नहीं करने देता। इसीलिए मां ने कहा कि यहां चुपचाप बैठा रहेगा। क्यों रे नन्तु, किताब लाया है ?"

फिर माया हँसकर बोली, " 'अ-आ' पढ़ता है। एकाध बार बता दीजिये तो सीख लेगा।"

एकदम पाठशाला बन गई। अब धीरज रखना कठिन हो गया तो महिम ने कहा, "बताओ तो, अभी और कितने हैं ?"

उसकी ओर देखते हुए माया ने कहा, "हम कितने भाई-बहन हैं, यही पूछ रहे हैं, मास्टरजी ?"

"हां।"

"हम चार जने तो पढ़ने आते हैं। इसके अलावा अन्तू और छाया और हैं।"

"वे दोनों कबसे पढ़ने आयंगे ?"

माया खिलखिलाकर हँसने लगी। बोली, "वे कैसे आयंगे, मास्टरजी ? छाया तो सिर्फ आठ ही महीने की है। बोल भी नहीं सकती और अन्तु ने अभी-अभी चलना सीखा है।।

महिम ने व्यंग्य किया, "बस और क्या चाहिए ? जब चलना सीख ही

लिया है तो यहांतक चलकर आजाय !"

उसी घर से सटकर बगल में उनके पट्टीदार का भी घर है। महिम के कमरे के पूरब में जो गली है, उसी गली से वे लोग आते-जाते हैं। एक दिन जब खूब जोर-शोर से पढ़ाई चल रही थी, गंगा-स्नान करके लौटती हुई एक अधेड़ महिला गीले कपड़े पहने-पहने ही छप्-छप् करती हुई कमरे में आगई। लड़के 'ताई-ताई' करके एक साथ चिल्लाने लगे।

वह महिला हँसकर बड़ी मधुरता से महिम से बोली, "मैं इन बच्चों की ताई हूं। यह मेरे देवर का मकान है। मैं गंगा नहाने जाने लगती हूं तो तुम खिड़की से दिखाई देते हो। बड़े जतन से पढ़ाते हो, बेटा। देखकर मुझे बड़ा अच्छा लगता है। रोज ही सोचती हूं कि आकर तुमसे बातें करूं, फिर संकोच होता है कि तुम पता नहीं, क्या सोचोगे। हम लोगों के परिवार के रीति-रवाज, सभी पुराने हैं। स्त्रियां बाहरी लोगों से नहीं बोलतीं। आखिर मैंने संकोच छोड़ ही दिया। मेरा लड़का मधूसूदन भी तुम्हारी उम्र का ही होगा। भला बेटे के साथ मां क्यों न बोले ? यही सोचकर आज आ गई।"

"सो तो ठीक है।" महिम ने इतना कहकर उनके पांव छू लिये। गोरा-चिट्टा रंग, जैसे अन्नपूर्णा हों। देखने से ही मालूम हो जाता है कि किसी बड़े घराने की हैं।

अब उन्होंने असली बात कही, "तुम्हें मेरी बेटी मंजुरानी को पढ़ाना होगा। बहुत अच्छा पढ़ाते हो तुम। पहले जो पढ़ाता था, बड़ा दुष्ट था। मैंने उसे तो निकाल बाहर किया। इस साल मेरी बेटी मैट्रिक की परीक्षा देगी।"

मैट्रिक की परीक्षा देनेवाली इतनी बड़ी लड़की महिम जैसे युवक के पास पढ़ेगी, महिम के मन में जाने कैसा होने लगे। बोला, "समय तो नहीं है। देखिये न, सवेरा तो इन्हीं लोगों में बीत जाता है और शाम को मैं लॉ-कालेज जाता हूं।"

ताईजी ने कहा, "मेरा बेटा भी थोड़े दिनों तक लॉ-कालेज गया था। वहां तो ज्यादा देर नहीं रहना पड़ता। कालेज के बाद क्या करते हो ?"

में आजाती है ? उसे देखने से ही सब पता चल जाता है।"

मधुसूदन के पास बात करने का समय नहीं था। वह हँसता हुआ चला गया। बड़ा अच्छा घर है। मां-बेटे में दो बराबर के साथियों की तरह हँसी-मजाक हुआ, पर महिम को मधुसूदन ने मास्टर कहा, यह उसको अखर गया। क्या उसके चेहरे पर एकदम मास्टर की छाप पड़ गई ? क्या उसका और कोई नाम ही नहीं है ?

ताईजी अपनी बेटी को बुलाने लगीं, "मंजु, तू यहां क्यों नहीं आती ? शरमा रही है क्या ? जिसके पास पढ़ेगी, उसीसे शरमाने से कैसे काम चलेगा ? आ, इधर आ !"

जो हो, कम-से-कम ताईजी ने तो मास्टर नहीं कहा। मंजुरानी आई। है तो रानी जैसी ही। आखिर ताईजी की ही बेटी है न। मैट्रिक की परीक्षा देगी तो उम्र सोलह तक की ही होनी चाहिए, पर गठन ऐसी है कि लगती है, बीस पार कर गई है। रूप तो ऐसा है, जैसे उसके आते ही कमरा जगमगा उठा हो।

महिम ने पूछा, "किस स्कूल में पढ़ रही हो ?"

बड़े घर की ऐसी सुंदर लड़की के साथ महिम के बात करने का यह पहला मौका है। 'तुम' कहा नहीं जा सकता और एक छात्रा को 'आप' भी कैसे कहे ?"

ताईजी ने कहा, "आज यहीं खाना खाओगे, बेटा।"

महिम लजाकर बोला, "नहीं-नहीं, खाना रहने दीजिये।"

"मेस में तुम क्या खाते हो, यह तो मुझे मालूम है। वहां खाने की जरूरत नहीं है। जबतक वे लोग न लौटें, दोनों समय तुम यहीं खाओगे।"

"मेस में एक महीने का इन्तजाम हो चुका है।"

"वहां मना कर देना। मेरे देवर परिमल के घर खा सकते हो, फिर मेरे यहां खाने से क्या तुम्हारी जात ओछी हो जायगी ?" फिर कुछ रुककर पूछा, "तुम लोग किस जाति के हो, बेटा ? सेन उपाधि तो वैद्यों में भी होती है और कायस्थों में भी ?"

"हम कायस्थ हैं।"

"हम भी कायस्थ ही हैं। फिर तो सजातीय ही ठहरे। तब तो अपने

हाथ का शाकाहारी खाना भी खिला सकती हूं। मैं अभी आई, तबतक तुम लोग बातें करो। अब खाना खाकर हीं जाओगे।"

महिम जल्दी से बोला, "अभी स्नान आदि भी नहीं किया है।"

"स्नान तो यहां भी कर सकते हो। पर कोई बात नहीं। अच्छा, जाओ। वहा नहा आओ, पर देर मत करना।"

बाबा रे बाबा, कितना भारी आयोजन किया गया है। तरह-तरह के पकवानों की कटोरियां से थाली भरी हुई है। खाते समय ताईजी बैठे-बैठे "यह लो, वह लो," कहती रहीं। बहुत ज्यादा लाड़-प्यार महिम को अच्छा नहीं लगता, पर वह कहता भी तो क्या!

काली पूजा पास आ गई है। रास्तों में पटाखे और आतिशबाजी छूटने लगी है। काली पूजा के एक दिन पहले परिमलबाबू सपरिवार लौट आये। स्कूल अभी जगद्धात्री पूजा तक बन्द रहेगा। थोड़े दिन घर हो आने के लिए बार-बार मां की चिट्ठियां आरही हैं। इकलौता बेटा है। देखने के लिए मां का मन बेचैन होता होगा। बड़ी बहन सुधा भी अब आलतापोल नहीं रह सकेगी। उसके जेठ तारककर महाशय की गृहस्थी उसके बिना नहीं चल रही है। वह सुधा को बेहालावाले घर पर जल्दी ही लायंगे। तब मां एकदम अकेली रह जायगी।

मंजु की मां महिम के घर का हाल खोद-खोदकर पूछती रहती है। एक दिन कहने लगी, "तुम्हारी ही गलती है, बेटा। बुढ़िया मां को गांव में अकेली कैसे छोड़ दोगे? यहीं एक घर ले लो। अच्छा, शादी होने पर ही लेना। शादी के बारे में मां कुछ नहीं कहतीं?"

महिम ने सिर झुका लिया। बोला कुछ नहीं। मंजु की मां ने फिर कहा, "मैं भी तो एक मां ही हूं। कोई मां ऐसा थोड़े ही चाहती है कि उसका बेटा आधा संन्यासी रहे। पर तुम आज-कल के लड़के ऐसे हो गये हो कि तुम्हारे मन की बात का पता ही नहीं चलता। अपनी मधु के लिए मैं भी कोई लड़की ढूंढ़ रही हूं। हां, वह तो यह भी कह सकता है कि पहले बहन की शादी हो जाय। ठीक भी है मंजुरानी बड़ी होगई है। अपनी बेटी है, सो अपने मुंह बड़ाई करते अच्छा नहीं लगता, पर तुमने तो देखा ही है।

तुम पढ़ा भी रहे हो। तुम्हें उसके बारे में सबकुछ मालूम है। पात्र तो कई मिले, पर मैंने ही परवा नहीं की। सोचा—पढ़ रही है, पास हो जाने दो। लेकिन अब सोचती हूं कि पास कर लेने से क्या सुर्खाब के पर निकल आयंगे ! व्याह हो जाने के बाद भी तो पढ़ सकती है। अच्छा लड़का मिल जाय तो शादी कर ही देनी चाहिए। तुम्हारी क्या राय है ?

"ठीक तो है।"

एकाएक मंजु की मां ने पूछा, "तुम्हारी यह स्कूल की नौकरी कितने दिनों से चल रही है, बेटा ?"

महिम ने जल्दी से कहा, "अभी दो साल नहीं हुए। पर यह नौकरी तो कानून पास करने के बाद छोड़ दूंगा। सोचा, लॉ कालेज तो शाम को लगता है, दिन-भर बैठे-बैठे क्या करता ! इसीलिए..."

मंजू की मां ने उसका समर्थन करते हुए कहा, "ठीक किया। शहर में बैठकर घर से रुपया ला-लाकर कितने दिन खाते ? तुम्हारे जैसा लड़का ही मुझे पसन्द है। ज़रा अपने गांव का पता तो दे दो, बेटा, मैं तुम्हारी माताजी को चिट्ठी लिखूंगी।"

महिम पसीना-पसीना हो गया। उसकी छाती धक-धक करने लगी। यह क्या कह रही हैं ? इतने बड़े घर की राजकुमारी जैसी उस लड़की को महिम जैसे मास्टर के हाथ में देंगी ? मैक्लीन कम्पनी के बाबू ने तो मास्टर नाम सुनकर ही रिश्ते से इन्कार कर दिया था।

मंजु की मां ने कहा, "मेरे तो एक ही बेटी है। गहने से बेटी को लाद दूंगी। मेरा अपना जेवरों का एक पुराना जड़ाऊ सेट है, वह भी बेटी को ही मिलेगा। यह पुश्तैनी मकान मधु का है। पर बेटी के नाम से भी एक मकान वह काली घाट में खरीद गये हैं। वह मकान साठ रुपये माहवार किराये पर उठा हुआ है। मेरी बेटी खाली हाथ नहीं जायगी। पूजा के बाद यहां लौटो, इसके पहले ही मैं तुम्हारी माताजी को चिट्ठी भेजूंगी। तुम अपनी माताजी से सारी बातें बता देना।"

महिम नीचे उतरकर जा रहा था। मंजु ने छिपकर सारी बातें सुन ली थीं। वह दरवाजे के पास ही खड़ी थी। महिम भी ठिठककर खड़ा होकर इधर-उधर देखने लगा। आस-पास में कोई नहीं था।

मंजु बोली, "मास्टरसाहब, आपसे कुछ कहना है। पहलेवाले मास्टर भी पढ़े-लिखे थे। अच्छा पढ़ाते थे। वह वेतन भी नहीं लेते थे। फिर भी उन्हें निकाल बाहर किया गया।"

इतना कहकर वह एकाएक चुप होगई। फिर क्षण-भर बाद बोली, "नहीं, अभी नहीं, कहीं कोई आ न जाय, फिर बताऊंगी। उन मास्टर को क्यों निकाला गया था, यह आपको बताना जरूरी है। वह निकाले ही नहीं गये थे, उनकी खूब मरम्मत भी की गई थी। आप गांव के रहनेवाले सीधे-सादे आदमी हैं। आपको सारी बातें मालूम हो जानी चाहिए।"

इतना कहकर वह पलक मारते ही चली गई।

उसी रात को गली की खिड़की में किसीने दस्तक दी। महिम को नींद में ही खुट-खुट की आवाज सुनाई पड़ी और फुसफुसाहट भी आई—"मास्टरजी, मास्टरजी!"

महिम हड़बड़ाकर बिस्तर पर बैठ गया। खिड़की के बाहर मंजुरानी खड़ी थी। महिम को लगा, जैसे वह सपना देख रहा है। मंजु जल्दी से ज़रा एक ओर हटकर दबी आवाज में बोली, "ज़रा बाहर आइये। कुछ कहना है—वही बात।"

महिम की उनींदी आंखें अभी पूरी तरह नहीं खुल पाई थीं। मारे आलस के वह सोच नहीं पारहा था कि क्या करे। मंजु बोली, "क्या कर रहे हैं? मैं आगई और आप नहीं आ सकते?"

अंधेरा बहुत घना नहीं था। इसीलिए मंजु दिखाई पड़ रही थी। यह दिन की छात्रा मंजु नहीं थी, रात की रहस्यमयी प्राणी थी। दूध जैसा उजला रंग चमक रहा था। मंजु एकदम पास आगई। दोनों के बीच कुछ ही इंचों की दूरी रह गई। मंजु के खुले बाल पीठ पर फैले थे, कपड़े अस्त-व्यस्त थे, मानों जैसे-तैसे कपड़ा लपेटकर चली आई हो। चलते समय यौवन छलका पड़ रहा था। महिम सिहर उठा।

मंजु आगे-आगे चलकर अपने मकान के सामने खड़ी हो गई। दरवाज़े भिड़े हुए थे, हल्के-से खोलकर और एक पैर दहलीज के भीतर रखकर बड़े धीरे-से महिम को बुलाया, "आइये।"

तुम पढ़ा भी रहे हो। तुम्हें उसके वारे में सवकुछ मालूम है। पात्र तो कई मिले, पर मैंने ही परवा नहीं की। सोचा—पढ़ रही है, पास हो जाने दो। लेकिन अव सोचती हूं कि पास कर लेने से क्या सुर्खाव के पर निकल आयंगे! व्याह हो जाने के वाद भी तो पढ़ सकती है। अच्छा लड़का मिल जाय तो शादी कर ही देनी चाहिए। तुम्हारी क्या राय है?

"ठीक तो है।"

एकाएक मंजु की मां ने पूछा, "तुम्हारी यह स्कूल की नौकरी कितने दिनों से चल रही है, वेटा?"

महिम ने जल्दी से कहा, "अभी दो साल नहीं हुए। पर यह नौकरी तो कानून पास करने के वाद छोड़ दूंगा। सोचा, लॉ कालेज तो शाम को लगता है, दिन-भर वैठे-वैठे क्या करता! इसीलिए..."

मंजू की मां ने उसका समर्थन करते हुए कहा, "ठीक किया। शहर में वैठकर घर से रुपया ला-लाकर कितने दिन खाते? तुम्हारे जैसा लड़का ही मुझे पसन्द है। जरा अपने गांव का पता तो दे दो, वेटा, मैं तुम्हारी माताजी को चिट्ठी लिखूंगी।"

महिम पसीना-पसीना हो गया। उसकी छाती धक-धक करने लगी। यह क्या कह रही हैं? इतने बड़े घर की राजकुमारी जैसी उस लड़की को महिम जैसे मास्टर के हाथ में देंगी? मैक्लीन कम्पनी के वावू ने तो मास्टर नाम सुनकर ही रिश्ते से इन्कार कर दिया था।

मंजु की मां ने कहा, "मेरे तो एक ही वेटी है। गहने से वेटी को लाद दूंगी। मेरा अपना जेवरों का एक पुराना जड़ाऊ सेट है, वह भी वेटी को ही मिलेगा। यह पुश्तैनी मकान मधु का है। पर वेटी के नाम से भी एक मकान वह काली घाट में खरीद गये हैं। वह मकान साठ रुपये माहवार किराये पर उठा हुआ है। मेरी वेटी खाली हाथ नहीं जायगी। पूजा के वाद यहां लौटो, इसके पहले ही मैं तुम्हारी माताजी को चिट्ठी भेजूंगी। तुम अपनी माताजी से सारी वातें वता देना।"

महिम नीचे उतरकर जा रहा था। मंजु ने छिपकर सारी वातें सुन ली थीं। वह दरवाजे के पास ही खड़ी थी। महिम भी ठिठककर खड़ा होकर इधर-उधर देखने लगा। आस-पास में कोई नहीं था।

मंजु बोली, "मास्टरसाहब, आपसे कुछ कहना है। पहलेवाले मास्टर भी पढ़े-लिखे थे। अच्छा पढ़ाते थे। वह वेतन भी नहीं लेते थे। फिर भी उन्हें निकाल बाहर किया गया।"

इतना कहकर वह एकाएक चुप होगई। फिर क्षण-भर बाद बोली, "नहीं, अभी नहीं, कहीं कोई आ न जाय, फिर बताऊंगी। उन मास्टर को क्यों निकाला गया था, यह आपको बताना जरूरी है। वह निकाले ही नहीं गये थे, उनकी खूब मरम्मत भी की गई थी। आप गांव के रहनेवाले सीधे-सादे आदमी हैं। आपको सारी बातें मालूम हो जानी चाहिए।"

इतना कहकर वह पलक मारते ही चली गई।

उसी रात को गली की खिड़की में किसीने दस्तक दी। महिम को नींद में ही खुट-खुट की आवाज सुनाई पड़ी और फुसफुसाहट भी आई—"मास्टरजी, मास्टरजी!"

महिम हड़बड़ाकर बिस्तर पर बैठ गया। खिड़की के बाहर मंजुरानी खड़ी थी। महिम को लगा, जैसे वह सपना देख रहा है। मंजु जल्दी से ज़रा एक ओर हटकर दबी आवाज में बोली, "ज़रा बाहर आइये। कुछ कहना है—वही बात।"

महिम की उनींदी आंखें अभी पूरी तरह नहीं खुल पाई थीं। मारे आलस के वह सोच नहीं पारहा था कि क्या करे। मंजु बोली, "क्या कर रहे हैं? मैं आगई और आप नहीं आ सकते?"

अंधेरा बहुत घना नहीं था। इसीलिए मंजु दिखाई पड़ रही थी। यह दिन की छात्रा मंजु नहीं थी, रात की रहस्यमयी प्राणी थी। दूध जैसा उजला रंग चमक रहा था। मंजु एकदम पास आगई। दोनों के बीच कुछ ही इंचों की दूरी रह गई। मंजु के खुले बाल पीठ पर फैले थे, कपड़े अस्त-व्यस्त थे, मानों जैसे-तैसे कपड़ा लपेटकर चली आई हो। चलते समय यौवन छलका पड़ रहा था। महिम सिहर उठा।

मंजु आगे-आगे चलकर अपने मकान के सामने खड़ी हो गई। दरवाज़े भिड़े हुए थे, हल्के-से खोलकर और एक पैर दहलीज के भीतर रखकर बड़े धीरे-से महिम को बुलाया, "आइये।"

महिम पथरा-सा गया। उसके पैर नहीं उठे।

"अरे, खड़े क्यों रह गये? कोई देख ले तो? अन्दर चले आइये"

महिम की देह पसीने से तरवतर हो गई थी। मंजु के चेहरे पर ज़ाने कैसी हँसी-सी खेल रही थी। वोली, "क्यों, डर लग रहा है? अच्छा तो रहने दीजिये। क्यों, वे वातें सुनने की जरूरत नहीं है? मास्टरसाहब आप घूंघट निकाला करें।...मैं अव आपसे नहीं पढ़ा करूंगी।"

मंजु ने अन्दर से दरवाजा वन्द कर लिया। यह क्या मुसीवत है? क्या यह वातें करने का समय है? महिम जल्दी से अपने कमरे में लौटकर बिस्तर पर लेट गया और सोचने लगा—उसने यह ठीक किया या नहीं? उसे नींद नहीं आ रही थी। वह करवटें वदलता रहा। सारी देह सुन्न-सी हो रही थी। वह सुकुमारी क्या कहना चाहती थी? उसके मन में कौन-सी गोपनीय वात थी? वह जिसकी पत्नी वनने जा रही है, उसको उसने अपने मन की वात वतानी चाही थी, पर महिम डर गया था। कलंक का डर और उसके उन्मत्त यौवन का डर। शैशव से नैतिकता के जिन संस्कारों में जकड़ा था, उन्हें वह नहीं तोड़ सका।

१६

आलतापोल जाकर महिम ने देखा, मां और दीदी, दोनों ही उसके व्याह के लिए उत्सुक वैठी हैं। चिट्ठी-पर-चिट्ठी आई हैं। पड़ोसिनें मां के मन में यह वात जमाने की चेष्टा करती रहती हैं कि महिम ने पढ़-लिख लिया है, कमाई कर रहा है। उसके व्याह में अब देर करना ठीक नहीं। "महिम की मां, तुम चुप कैसे वैठी हो? कलकत्ता जैसा शहर, फिर उसके सिर पर कोई नहीं है। किसी दिन किसी कुलटा के फेर में पड़ गया तो फिर महिम तुम्हारा वेटा नहीं रह जायगा। तभी तो कहती हूं, घोपगांति में मेरे ममेर भाई की वेटी है। अच्छी सयानी भली लड़की है। घर का काम कर सकती है। दस वात कह लो, सुन लेगी, पर चूं नहीं करेगी। उसी

लड़की को घर में लाओ, महिम की मां। वे लोग दान-दहेज कुछ कम नहीं देंगे।"

कुलटा के फंदे में पड़कर अपना ही बेटा मां को कैसे पैर की जूती बना डालता है, उसके जाने कितने उदाहरण महिम की मां के सामने पेश किये जा रहे हैं। हरेन आलतापोल डाकघर का पोस्टमास्टर है। महिम का बचपन का साथी है। स्कूल में भी साथ-साथ ही पढ़ा है। महिम की मां ने उसे बुलाकर कहा, "बेटा, तुम्हारे बिना काम नहीं बनेगा। महिम के आने पर उसे लेकर तुम दोनों जाकर लड़की देख आओ। अब तो यह आम रिवाज होगया। हमारे गांव में भी यह सब होने लगा है। तुम महिम को छोड़ना मत। जैसे भी हो, उसे ले जाकर लड़की दिखा दो!"

महिम घर आया तो सुधा ने कहा, "लड़की को अपनी आंखों से देखकर ही व्याह करना ठीक रहता है। बाबूजी होते या कोई बड़ा भाई होता तो कोई बात नहीं थी, पर ऐसा कोई तो है नहीं। दूसरे के मुंह से सुनकर व्याह-शादी करना ठीक नहीं होता।"

महिम ने बहन का समर्थन किया।

"तो फिर घोषगांति जाकर लड़की देख आओ। कल बुधवार को उधर की यात्रा है, भोर में ही निकल जाना। तुम घर आनेवाले हो, यह लड़कीवालों को बता दिया गया है। तुम्हें लड़की देखने भेजा जायगा, यह भी उन्हें मालूम है।"

महिम ने चकित होकर कहा, "अरे, तुम लोग इतना आगे बढ़ गये हो? मैं तो यह सब सोच भी नहीं पाया था।"

"तब क्या सोचा है आपने? खून-पसीना एक करके तुम कमा-कमाकर पैसा घर भेजते रहो और हम लोग खा-पीकर सोते रहें। यही न? हरेन भी जाने के लिए तैयार है। मैं उसे कहे आती हूं।"

"अरे, क्या अभी हरेन से कहने चल पड़ी?" महिम ने सिर हिलाकर कहा, "नहीं-नहीं, दीदी उनसे कुछ भी कहने की जरूरत नहीं है। गांव-गांव में घूमकर लड़की देखने की मुझे दरकार नहीं है। थोड़े दिन की छुट्टी मिली है। घर आया हूं। आराम करूंगा। मैं तो घर से एक कदम भी बाहर नहीं निकलूंगा।"

फिर भी उसे जाने के लिए बार-बार कहा जाता रहा तो वह नाराज़ होकर बोला, "अच्छा, जाने के लिए कह रहे हो तुम लोग तो लो, मैं कलकत्ता जा रहा हूं। और कहीं नहीं जाऊंगा मैं।"

बेटी से काम नहीं बना तो स्वयं मां आकर बेटे के सामने खड़ी होगई। बोली, "तू घोषगांति कब जारहा है?"

"मैं नहीं जाऊंगा। दीदी से कह तो दिया।"

"तो शादी नहीं करेगा तू? साफ-साफ बता दे। दूसरों के आगे मेरी जग-हँसाई मत करा।"

महिम ने कहा, "पागल हो रही हो, मां! इतनी जल्दी क्या है? समय आने पर सब अपने-आप हो जायगा।"

"तेरी बात सुनकर तो आदमी का दिमाग खराब होजाय। सुबा के जेठ उसे ले जायंगे। वह चली जायगी तो मैं यहां अकेली पड़ी रहूंगी। अगर कोई जान भी ले ले तो जबतक सड़ांध नहीं फैलेगी, मुहल्लेवालों को पता भी नहीं लगेगा।"

मां ने आंखों पर आंचल रख लिया। महिम हँसकर बोला, "बेकार की बातें सोचते रहना तो तुम्हारी आदत होगई है, मां। अकेली क्यों रहोगी? कलकत्ते में घर लूंगा, तुम्हें भी वहीं ले चलूंगा।"

मां ने रुककर कहा, "इस बुढ़ापे में तेरे घर पर चूल्हा-चौका करना मेरे बस का नहीं है, सो साफ कहे देती हूं।"

"अच्छा-अच्छा, बाद में देखा जायगा। घर के काम के लिए क्या आदमी नहीं मिलता? पर अभी इतनी जल्दी क्या है, मां?"

डाकखाने में डाक आती है तो उसपर डाकखाने की मोहर लगाने की ठक्-ठक् आवाज यहांतक सुनाई पड़ती है। वह आवाज सुनते ही महिम जल्दी से डाकखाने की ओर चल देता है। एक दिन महिम ने हरेन से कहा, "क्या बात है! कलकत्ते से चिट्ठी नहीं आ रही है।"

"कोई लिखता नहीं, इसीलिए नहीं आती। पर तुम इतने उतावले क्यों हो रहे हो? चिट्ठी लिखनेवाला तो जुटाओ, फिर रोज भारी-भारी लिफाफा आता रहेगा।"

महिम बोला, "नहीं भई, मजाक की बात नहीं एक बहुत जरूरी

चिट्ठी आनेवाली है। डाकघर का आदमी ठप्पा लगा-लगाकर वाएं हाथ से चिट्ठियों को खिसकाता जाता है। कहीं मेरे नाम की चिट्ठी इधर-उधर गिर न गई हो।"

हरेन ने कहा, "गिरेगी भी तो इस कमरे में ही तो गिरेगी। तुम्हारी कोई चिट्ठी नहीं आई है। अगर आयगी तो मैं खुद आकर दे जाऊंगा।"

महिम घोषगांति नहीं गया तो लड़की के चाचा ही आ पहुंचे। शायद महिम की मां ने आने को कह दिया था।

सूर्यकान्तवावू का घर घोषगांति में है। आजकल वह अपने भतीजे के पास सिलीगुड़ी रहते हैं। भतीजा वहीं स्टेशन-मास्टर है। अगर घोषगांति में रहते तो महिम पिछली वार की तरह इस वार भी उनके पास जाता। लड़की के चाचा से सूर्यकान्तवावू के वारे में सारी वातें मालूम हुईं। एक वहुत ही वुरी वात होगई—लीला ने फिर शादी कर ली। सूर्यवावू की परदादी विधवा होकर पति के साथ ही सती होगई थीं और सूर्यवावू की वेटी विधवा होने के वाद फिर व्याह करके घर-गृहस्थी जमा रही है। वड़े भतीजे का पुलिस इंस्पेक्टर साला लीला को कलकत्ता ले गया था। वहां ट्रेनिंग के लिए भर्ती भी करवा दिया था, पर वाद में उन्हीं दोनों ने शादी करके सूर्यवावू के पास आशीर्वाद मांगने के लिए पत्र भेजा। सूर्यवावू ने पत्र का कोई जवाव नहीं दिया। ऐसी वेटी के साथ क्या नाता! रानी की तरह लीला भी मर गई, यह कहकर सन्तोष कर लिया। अव सिलीगुड़ी में भतीजे के लड़के-वच्चों को पढ़ाते हैं, पड़े रहते हैं।

महिम को वुलाकर सुधा ने कहा, "लड़की देखने के लिए तुम तो नहीं गये। यह देखो, घर में लाकर दिखा रहे हैं।"

उसने लड़की का फोटो निकालकर दिखाया। सभी उस फोटो को देख रहे हैं। सुन्दर नाक, आम की फांक जैसी लम्वी-लम्वी आंखें, सुघड़-सलोना चेहरा। नाम है, सरला वाला।

मां ने पूछा, "क्या कहता है? वात पक्की कर लूं?"

हड़वड़ाकर महिम ने कहा, "नहीं-नहीं, मां, अभी नहीं। इतनी जल्दी क्या है?"

मां मुंह लटकाकर वहां से हट गई। दोनों में बोलचाल वन्द हो गई थी। तीन दिन वाद कलकत्ता जाते समय महिम ने मां के पैर छुये। मां अभी तक नाराज थीं। महिम ने आखिरी वार डाकखाने जाकर हरेन से पूछा, "कोई चिट्ठी आई है क्या ?"

पर चिट्ठी नहीं आई, नहीं आई।

परिमलवावू के यहां पहुंचते ही सारा रहस्य खुल गया। मास्टरजी घर से लौट आये हैं, सुनकर सव छात्र-छात्राएं नीचे आगये। माया ने खुशी-खुशी खवर दी, "उस घर की मंजु दीदी की परसों शादी होगई। घर के सभी लोगों का न्यौता था। अगर आप होते तो आपको भी न्यौता मिलता !"

महिम क्षण-भर के लिए स्तब्ध होकर खड़ा रह गया। धूल से भरे कपड़े-जूते उतारना भी भूल गया। वोला, "कोई मुझे भी पूछ रहा था ?"

"नहीं, पर अगर आप रहते तो क्या छूट जाते ?"

पाटु ने कहा, "मंजु दीदी लौट आई हैं, आज ही। कहती हैं, 'ससुराल के लोग वहुत खराव आदमी हैं। गुण्डे हैं।' सुनकर वावूजी वहुत नाराज हो रहे थे। कह रहे थे कि दो दिन में ही शादी तय कर ली। किसीसे वात तक नहीं की, कुछ पूछताछ तक नहीं की। तभी तो यह सव हुआ।"

माया ने कहा, "मंजु दीदी वहुत रो रही हैं। देखकर अपनेको भी रुलाई आती है। मैं गई थी तो मुझसे एक शब्द भी नहीं वोलीं। ऊपर वर-साती में घुसकर किवाड़ वन्द कर लिये।"

व्याह होते ही यह हाल ! मंजु रानी के लिए महिम के मन में वड़ी पीड़ा हुई। इतनी सुन्दर लड़की का ऐसा भाग्य ! उसकी मां और भाई पर महिम को वड़ा गुस्सा आया। पढ़ाने के वहाने वुलाकर खिला-पिलाकर नाता जोड़ने की क्या जरूरत थी ! पढ़ाना तो वहाना-भर था। असली वात अव मालूम होगई। सच तो यह था कि लड़की दिखाकर दोनों में मेल करा देना था। पर महिम स्कूल-मास्टर है न ! इसीलिए वे शायद द्विविधा में पड़ गये। फिर वूत्तों के पल्ले डालकर लड़की की जिन्दगी वरवाद कर डाली। वस, मां और भाई, दोनों ने मिलकर ही यह किया है। दोनों की

वोटी-वोटी काटकर गंगा में वहा दें, तव कहीं संतोष हो।

ज्यादा दिन नहीं, इसके वाद कोई दो ही हफ्ते बीत पाये कि वार्षिक परीक्षा एकदम सिर पर आ खड़ी हुई। छात्रों में पढ़ाई-लिखाई को लेकर वड़ा जोश आगया। कोई प्राइवेट ट्यूटरों को छोड़ना ही नहीं चाहता। जोंक की तरह चिपके रहते हैं। महिम जव ट्यूशनें पढ़ाकर लौट रहा था, काफी रात वीत गई थी। देखा, गली के ठीक मोड़ पर एक टैक्सी खड़ी है। टैक्सी में कई हट्टे-कट्टे आदमी सिकुड़े-सिकुड़े-से वैठे हैं। उन लोगों ने महिम को वड़ी रुखाई से देखा। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। महिम को कुछ अच्छा नहीं लगा।

थोड़ी देर में जैसे एकदम तूफान उठ खड़ा हुआ हो, मंजु के घर में शोर मचा। महिम अपने कमरे की खिड़की खोलकर खड़ा होकर देखने लगा—वहुत-से लोग इकट्ठे हो गये थे। उधर की टीन की छतवाली वस्ती में इन्हीं लोगों के कुछ किरायेदार रहते थे। वे भी आगये। अच्छी वेश-भूषावाले एक युवक को मंजु के घर से धक्का देकर निकाल दिया गया है।

वह युवक चीख रहा है, "अरे ये लोग मुझे मारे डाल रहे हैं।"

मधुसूदन सवसे आगे खड़ा था। गुस्से से कांपते हुए वह उस युवक की कसकर मरम्मत कर रहा था। भीड़ भी ऐसा मौका कव छोड़ती ! किसी-किसीने आगे वढ़कर उस युवक के एक-दो हाथ जमा ही दिये।

वह युवक गली के मोड़ पर खड़ी टैक्सी की ओर देखकर चिल्लाया, "अरे, तुम लोग वहां वैठे-वैठे क्या कर रहे हो ?"

परिमलवावू के घर की ऊपरवाली खिड़की खट् से खुल गई। उन्होंने झांककर पूछा, "इतना शोर क्यों मचा रक्खा है ? अरे, गजव हो गया, मधु, जमाई को मार रहे हो ?"

"यह देखिये, चाचाजी, मतवाला होकर आया है। कहता है—वहू को ले जाऊंगा। टैक्सी लाया है। रसोइया जाकर देख आया है कि टैक्सी में गुण्डे भरे हैं। मंजु को ये लोग मार डालेंगे।"

जमाई ने कहा, "मैं गुण्डों को लाया हूं ? वे गु

ममेरे-फुफेरे भाई हैं। वहू को ले जाने के लिए आया हूं। अरे भाई, तुम लोग यहां क्यों नहीं आते ?"

टैक्सी हवा होगई और उसीके साथ ममेरे-फुफेरे भाई भी।

परिमलबाबू डपटकर बोले, "इतनी रात गये वहू को ले जाने आये हो ? दिन को आना। अभी जाओ। यह शरीफ लोगों का मुहल्ला है। मस्ती दिखाने की जगह नहीं है।"

दामादबाबू का पारा एकदम चढ़ गया। ऊपर की ओर मुंह उठाकर चिल्लाकर बोला, "बड़े शरीफ लोग हैं आप! क्वारी लड़की चक्कर में आगई तो मुझे ठगकर ब्याह दिया। ऊपर से शरीफ बनते हैं। लड़की को बाहर निकालिये, दस आदमी देखें तो सही। शरीफ घर से निकालकर बस्ती में लाइये, तब मैं यहां से जाऊंगा।"

"निकालो इस शैतान को यहां से !" क्रोध में इतना कहकर परिमल-बाबू ने जोर से खिड़की बन्द कर दी। पर जो लोग मार-पीट कर रहे थे, जैसे जादू से उनके हाथ थम गये। एक शरीफ घराने की लड़की की पोल खुल रही थी न ! दामाद चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा है, "अरे, पहले मेरी सुन तो लो। फिर जो चाहो करना।"

उसी रात को महिम ने मां को चिट्ठी लिखी, "मां, मैंने क्या कभी आपकी बात टाली है ? आप जो चाहती हैं, वही होगा। लड़की देखने की मुझे इच्छा नहीं है। जैसा समझें, करें।"

१७

मैक्लीन कम्पनी के बड़े बाबू ने तो स्कूल-मास्टर महिम के साथ बेटी की शादी नहीं की। पर यह बंगाल का इलाका है। खाता-पीता घर हो या न हो, ब्याह के लिए लड़की मिल ही जाती है। सरला बाला को महिम के हाथ सौंपकर उसके बाप-चचा कृतार्थ हो गये। ऐसा यंत्र तो नहीं बना है, जिससे आदमी के मन की बात जानी जा सके। यदि यह सम्भव होता तो

कई लड़कियों के बापों को दिखाई पड़ जाता कि महिम जैसा लड़का पास होते हुए भी वे उसे अपनी बेटी के लिए नहीं पा सके। इसके लिए वे अपने-को अब कोस रहे थे।

तारकबाबू अपनी भाभी सुधा को अपने यहां ले गये। महिम की मां बूढ़ी हो गईं। उनकी देख-भाल करने के लिए किसीकी जरूरत थी ही। अबतक यह काम सुधा करती थी। अब इस हालत में बूढ़ी मां पर नई बहू की जिम्मेदारी डालकर अकेले गांव में कैसे छोड़ा जा सकता है। महिम को भी कलकत्ता में घर लेना पड़ा। स्कूल के पास ही एक छोटा-सा कमरा और उसके आगे का बरामदा मिल गया। अच्छा है। स्कूल जाने में ज्यादा समय नहीं लगेगा। दोपहर की आधी छुट्टी में भी घर आ सकता है। सबेरे परिमलबाबू के लड़के-बच्चों को पढ़ाता था। अब वहां से चले आने पर उतने ही समय में दो-दो ट्यूशनें पढ़ा लेता है। रातवाली छात्रा का पुराना ट्यूशन भी अभी है। गनीमत है कि मंजु की मां की बातों में आकर महिम ने वह ट्यूशन छोड़ नहीं दिया था।

पहली को तनख्वा मिली। भारती इन्स्टीट्यूशन का यह कायदा बड़ा अच्छा है। बहुत-थोड़े स्कूलों में ऐसा होता है। एक बड़ी-सी दूकान में ताजे रसगुल्ले बन रहे थे। छोटे-छोटे पनीर के लड्डू उबलती हुई चाशनी में डाल देने से रस भर जाता है और फिर रसगुल्ले फूल उठते हैं। आज तनख्वा पाने से महिम बहुत खुश है। एक कुल्हड़ में छः आने के छः रस-गुल्ले लेकर घर की ओर चल पड़ा। पहुंचते ही सरला बाला से कहा, "लो, तुम्हारे लिए गरम-गरम रसगुल्ले लाया हूं। एकदम गरम। खोलो और उड़ा जाओ। ठंडा होने पर यह मजा नहीं रह जायगा।

सरला बहुत कम बोलती है। कोई कुछ कहता है तो बड़ी-बड़ी आंखें उठाकर देखती है और हर बात में मुस्करा देती है। उसका इस तरह देखना और मुस्कराना, दोनों ही बड़े भले लगते हैं। वह कुल्हड़ लेकर चली गई और एक कटोरी में दो रसगुल्ले और गिलास में पानी लाकर महिम के आगे रख दिया। बोली, "चाय तो पीकर नहीं आये होगे? बनाकर लाती हूं।"

"तुम कल कह रही थीं कि घर में चीनी नहीं है। अच्छा, मैं अभी

ला रहा हूं।"

महिम उठ खड़ा हुआ कि सरला बाला ने हँसते हुए उसका कन्धा पकड़कर उसे फिर बैठा दिया, बोली, अभी-अभी आ रहे हो ! दूकान दौड़े जाने की इतनी जल्दी क्या है ? रात को लौटते समय लेते आना। अभी रहने दो। रसगुल्ले के शीरे से चाय बनाये देती हूं। मैंने बता दिया, नहीं तो चाय पीकर समझ भी न पाते कि रसगुल्ले के शीरे की बनी चाय है।"

वह जल्दी-से जाने लगी, पर महिम ने उसे जाने नहीं दिया। हाथ पकड़कर बोला, "मुझे तो खिला दिया। तुम नहीं खाओगी क्या ?"

सरला ने कहा, "मां के लिए पहले ही दो रसगुल्ले निकाल दिये हैं। संध्या कर लेंगी तो दे दूंगी।"

"और तुम ? तुम कब खाओगी ?"

सरला बोली, "तुम्हें अभी कालेज जाना है। चाय बनाकर दे दूं। तुम कालेज चले जाओगे तो खाने के लिए मुझे बहुत-सा समय मिलेगा।"

हाथ-पैर फैलाकर महिम ने अलसाई आवाज में कहा, "अब इतनी देर बाद कालेज जाकर क्या होगा ? वहां पहुंचते-पहुंचते साढ़े पांच बज जायंगे। कोई भी प्रोफेसर एक घन्टा पूरा नहीं पढ़ाते। चार मंजिलों की सीढ़ियां चढ़कर पहुंचूंगा तो देखूंगा कि कहीं कोई नहीं है। छुट्टी हो गई है।"

सरला बोली, "परसों भी आप नहीं गये थे। पिछले हफ्ते सिर्फ तीन दिन गये थे। विद्यार्थी होते तो अकल ठिकाने आ जाती। मास्टर कह देते—'मां-बाप की चिट्ठी लाओ या बेंच पर खड़े हो जाओ'—तब नानी याद आ जाती।"

"क्यों नानी क्यों याद आती ! तुमसे चिट्ठी लिखवा लेता कि बीमार हूं और ले जाकर दे देता। कह देता, यह लीजिये अभिभावक की चिट्ठी।"

सरला ने मुस्कराकर कहा, "हूं। बिस्तर पर पड़नेवाली बीमारी नहीं, शरारत की बीमारी। पर नागा करके रोज-रोज बीमार पड़ोगे तो घर-गृहस्थी का मेरा सारा काम कैसे पूरा होगा ?"

महिम बोला, "कालेज में मेरा एक दिन का भी नागा नहीं है, तभी तो बीमार बनकर घर में बैठ सकता हूं और कालेज भी जा सकता हूं।"

सरला की समझ में कुछ नहीं आया। वह उत्सुकता से उसकी ओर

देखने लगी। महिम उसे समझाकर बोला, "हमारे लॉ कालेज में बिना गये भी हाजिरी लग जाती है। मैं तो फिर भी कलकत्ता में ही हूं। एक लड़का तो बरिशाल शहर में एक बड़े स्कूल में काम करता है। दस बजे स्कूल जाता है, चार बजे दस्तखत करके घर लौटता है। ठीक पौने पांच बजे कलकत्ता की दरभंगा बिल्डिंग में लॉ की कक्षा में हाजिर रहता है। पूरे दो साल से ऐसा ही चलता आ रहा है।"

सरला बोली, "यह कैसे हो सकता है ?"

"पक्का इन्तजाम करना पड़ता है। महीने में कुछ रुपये देने होते हैं। हाजिरी के समय रोज हाजिरी बोल दी जाती है।"

"ऐसा कैसे हो सकता है ? प्रोफेसर इतने बुद्धू हैं कि वे जान नहीं पाते ?"

"यह तुमने खूब कही ! अरे, बड़े अच्छे प्रोफेसर हैं। उन्हें सब बातें मालूम होती हैं। एक बड़े कमरे में सिर्फ पन्द्रह-बीस विद्यार्थी बैठे रहते हैं और हाजिरी के रजिस्टर में प्रोफेसर साठ-सत्तर विद्यार्थियों की हाजिरी लगाते हैं। अगर एकाध नाम की हाजिरी नहीं बुलती तो हँसकर कह देते हैं—यह लड़का बदकिस्मत है, इसका कोई दोस्त क्लास में नहीं दीखता।

महिम थोड़ा रुककर बोला, "कभी-कभी सोचता हूं कि मैं भी ऐसा ही कोई पक्का इन्तजाम कर लूं। कालेज नहीं जाऊंगा। किसी दूसरे से हाजिरी बुलवा दिया करूंगा। रात की ट्यूशन शाम को पढ़ा दिया करूं। बस सारी रात अपनी हो जायगी। हम दोनों मैदान में घूम आया करेंगे, कभी सिनेमा भी हो आया करेंगे।"

सरला ने पूछा, "और पढ़ाई का क्या होगा ?"

महिम ने कहा, "यही तो मैं आगे कहने जा रहा था। कानून की किताबें अभी तक छू भी नहीं सका। पहला इम्तहान नहीं दे सका। इसीलिए काम-काज का झंझट जल्दी-से निपटाकर रात को अच्छी तरह पढ़ा करूंगा। मैं जबतक वकील न बन जाऊं, मुझे चैन नहीं पड़ेगा।"

पति वकील हो, सरलाबाला भी यही चाहती है। उसके घोपगांति गांव का भी एक आदमी वकील है। सरला उसे बचपन से ही देखती आ रही थी। मोटे-ताजे, गंजा सिर। दशहरे की छुट्टी में घर आया करते थे।

रेलवे स्टेशन से घोषगांति तक का एक कोस का रास्ता और लोग तो पैदल ही तय करते हैं, पर वकीलसाहब आठ कहारोंवाली पालकी में आते हैं। आठों कहार अपनी एक खास आवाज—"हुम्-हुम्"—करते हुए सारे गांव को जतला देते हैं। मैदान में से होकर जाने में रास्ता छोटा पड़ जाता है, पर वकीलसाहब उस रास्ते से पालकी नहीं ले जाते। कहते, "इस रास्ते नहीं। आखिर इतनी जल्दी क्या है? पूरब, पश्चिम, उत्तर, तीनों टोलों में से होते हुए चलो। लोगों की नींद खराब होगी, जलेंगे, तभी तो मजा आयगा। पालकी के लिए पैसे खर्च करके इतना भी सुख न मिले तो क्या!"

सरलावाला का बड़ा मन होता है कि महिम वकील होकर एक दिन पालकी में बैठकर आलतापोल जाय।

यह सब तो बाद में होगा, पर अभी तो स्पष्ट है कि महिम कालेज नहीं जा रहा है। आठ बजे तक वह घर पर ही रहेगा। उसने कुर्ता उतारकर खूंटी पर टांग दिया था। उसे सरला ने ले जाकर भीतर अलगनी पर टांग दिया। फिर स्कूल के जूते ठीक जगह पर लगा दिये और घर में पहननेवाली मोटरटायर की चप्पल लाकर उसके पास रख दी। बोली, "आज पहली तारीख है। तनख्वा के रुपये जेब में ऐसे ही रख छोड़े हैं। बर्तन मलते-मलते महरी इसी ओर घूर रही थी। सो जेब से निकालकर रुपये मैंने रख दिये हैं। सैंतीस रुपया एक आना। इतना ही न? कोई बटुआ भी तो तुम्हारे पास नहीं है। नोट कागज की तरह जेब में पड़े रहते हैं। अच्छा, मैं ही एक बटुआ बुन दूंगी। तुम धागे की दो रीलें ला देना, कुरशिया तो मेरे पास है।"

जेब से रुपये निकालकर सरला ने जतन से रख दिये हैं, यह जानकर महिम को रकम की कमी का ख्याल आया। नई बहू को सैंतीस रुपये एक आना मिले हैं। चालीस में से ढाई रुपये प्राविडेन्ट फन्ड के कट गये। छः आने के रसगुल्ले आये। एक आने का रसीदी टिकट। बी. ए. ग्रेजुएट पति, बस इतने की नौकरी करता है! इसी भरोसे कलकत्ते में घर बनाकर औरत को लाया है!

यह सोचते हुए महिम ने कहा, "हां, तनख्वा तो मिली है, पर सिर्फ अड़तीस ही रुपये। ऐसा अभागा स्कूल है कि पूरी तनख्वा एक दिन में नहीं

दे सकता। कमेटीवाले कहते हैं कि मैं अकेला नहीं हूं, और भी हैं। थोड़ा-थोड़ा सबको देना है। बाकी का एक-दो बार में दे देंगे।"

महिम का कालेज जाना बन्द है। वहां हाजिरी लग जाती है। स्कूल से लौटकर महिम थोड़ी देर सरला से गप लड़ाता है। करीब आठ बजे एक छात्रा को पढ़ाने जाता है। पांच दिन बाद एक दिन महिम ने कहा, "आज फिर स्कूल से कुछ रुपये मिले हैं। जेब में पड़े हैं। पन्द्रह रुपये। रुपये क्या देते हैं, जैसे भीख देते हैं। पर किया क्या जाय! अच्छा, रुपये सम्भालकर रख लो।"

महिम सवेरे जो दो ट्यूशन करता है, वहीं एक जगह से ये रुपये मिले थे। मिल तो सवेरे ही गये थे, पर बताता कैसे? स्कूल की तनख्वा तो स्कूल से लौटने पर ही दे सकता है।

इसके बाद दो किस्तों में फिर पन्द्रह और अट्ठारह रुपये आये। सरला ने उन्हें जेब से निकालकर गिना और सम्भालकर रख दिया। कुल मिलाकर पचासी हो गये। क्या बुरा है! पचासी रुपये कमानेवाले पति को नई दुलहिन क्यों न श्रद्धा की दृष्टि से देखेगी? श्रद्धा आगे और भी बढ़ेगी। जब वह वकील होकर अदालत जाने लगेगा तबका तो कहना ही क्या!

रात को जो ट्यूशन है, उसका समय नहीं बदला जा सका। वह एक छात्रा है। हफ्ते में तीन दिन उसे गाना सिखानेवाले मास्टर आते हैं। अतः शाम को महिम से नहीं पढ़ती।

मां ने कहा, "फिर बेकार कालेज से क्यों नागा करो? वहीं जाया करो।"

महिम ने कहा, "कालेज जाने में कोई फायदा नहीं है, मां। गोलदीघि तक ट्राम का बेकार खर्चा होता है। यह तो लॉ कालेज है। दूसरे स्कूल-कालेजों जैसा नहीं है। वहां के प्रोफेसर दिन-भर हाईकोर्ट में जिरह करते हैं। पढ़ाने में क्या धरा है। यहां के छात्र भी तो कहीं-न-कहीं नौकरी करते हैं। पढ़ने के लिए कालेज कौन जाता है! जो-कुछ पढ़ाई होती है, वह घर में ही होती है। रात को खाने-पीने के बाद मैं भी पढ़ता हूं!"

मां ने सरला से बचाकर दबी आवाज में कहा, "तो फिर शाम

लिए एकाध ट्यूशन ही कर लो। पैसे की तंगी होती है। बहू के पांव भारी हैं। वह ज्यादा काम नहीं कर सकती। महरी रखनी पड़ेगी। बच्चा होने के समय खर्चा होगा। उसके बाद तो खर्चा-ही-खर्चा है। इसीलिए कह रही हूं कि स्कूल से छुट्टी होने पर फालतू मत बैठो। कुछ और काम कर लो, जिससे थोड़े-बहुत पैसे और मिल जाया करें।"

पर साल के बीच में अच्छे ट्यूशन मिलते कहां हैं ? फिर भी कोशिश करने पर एक मिल गया, बारह रुपये महीने का।

पहली तारीख को हर बार की तरह सरला ने महिम की जेब से रुपये निकालकर गिने और सम्भालकर रख दिये। फिर मुस्कराती हुई महिम के पास आकर बोली, "और बार तो तीन किस्तों में तनख्वा आती थी। अबकी बार तो सारी एक साथ ही आगई। ऊपर से एक और भी है। तनख्वा बढ़ गई है ?"

महिम को लगा, अगर धरती फट जाती तो वह उसमें समाकर अपनी इज्जत बचा लेता। सरला बड़ी चतुर है। सब-कुछ जान-बूझकर भी अनजान बनी रहती है। मास्टरी भी कोई नौकरी है ? बस, किसी तरह वकालत पास कर लेना है, पर यह आशा भी तो मरीचिका-सी ही लगती है। इतने दिनों में पहला इम्तहान भी तो नहीं दे सका। हाजिरी पूरी नहीं पड़ी। कालेज में हाजिरी बोलने की जिम्मेदारी जिस लड़के पर थी, मालूम हुआ कि वह पढ़ाई छोड़कर कहीं चला गया। सबसे बड़ी बाधा यह थी कि छः महीने की फीस ही नहीं पहुंची थी। घर-गृहस्थी का खर्च भी तो बेहद बढ़ता जा रहा है। महिम शाम के समय एक और ट्यूशन कर लेने की बात सोचने लगा।

१८

स्कूल के पते पर महिम के नाम एक पोस्टकार्ड आया है। किसी सुरेश

ने लिखा है कि महिम के मास्टरजी सूर्यबाबू अस्पताल में बीमार पड़े हैं—कर्जन वार्ड के अट्ठाईस नम्बर के बेड पर। वह उससे मिलना चाहते हैं।

महिम स्कूल से सीधे वहीं चला गया। सोचा, ट्यूशन पर जाने में आज कुछ देर ही सही। शायद एक दिन नागा भी होजाय। बहुत चक्कर काटने के बाद पूछताछ करके महिम को अस्पताल का ठीक पता मिला। अस्पताल में नीचे ही एकदम आखिरवाला बिना पैसे का बिस्तर उन्हींका था। शाम हो रही थी। अस्पताल में काफी भीड़ थी। मरीजों के रिश्तेदार और साथी फल-मिठाई लेकर आरहे थे। सूर्यबाबू के पास कोई नहीं था। वह अकेले पड़े थे। वह वैसे ही दुबले-पतले थे, पर अब तो उनका शरीर एकदम बिस्तर से लग गया था। लिफाफे में चार संतरे लेकर महिम सूर्यबाबू के बिस्तर पर पहुंचा और एक किनारे खड़ा होगया।

"आओ बेटा!" कहकर सूर्यकान्तबाबू ने उसे बुलाया और बैठने की कोशिश करने लगे, पर सिर उठाया ही था कि देखा, सिस्टर उधर ही देख रही थी। वह फिर जैसे-के-तैसे लेट गये।

"आप बीमार होकर कलकत्ता आये हैं, मास्टरसाहब। पर मुझे तो कुछ भी नहीं मालूम था। सुरेश नाम के किसी सज्जन ने मेरे पास चिट्ठी भेजी है।"

"सुरेश मेरा छोटा दामाद है। अभी आयगा! उससे मिलकर देखना, बहुत अच्छा लड़का है। इतने अच्छे लड़के बहुत कम मिलते हैं। लीला और सुरेश, दोनों अब आते ही होंगे।"

वह नये दामाद की प्रशंसा करने लगे। महिम अचम्भे में पड़ गया। दादी सती हुई थीं। सूर्यबाबू ने सदा उसी आदर्श को बड़ा माना था, पर आज वह विधवा-विवाह के पक्ष में हो गये। कहने लगे, "मेरी बेटी बच गई। सुरेश के बाप कारपोरेशन के बड़े अफसर हैं। उनकी ही मदद से लीला को इतनी जल्दी नौकरी मिल गई, पर शादी के बाद बेटे-पतोहू को घर में नहीं घुसने दिया। वे दोनों बस्ती में टीन का घर किराये पर लेकर रह रहे हैं। मास्टरी में जी-तोड़ मेहनत करके लीला को सिर्फ पचपन रुपये मिलते हैं। सुरेश के लिए अभी किसी भी काम का जुगाड़ नहीं हो सका है। वह कभी यहां, कभी वहां किताबों का प्रूफ देखकर दो-चार रुपये बना ले

पर वे इतनी खुशी-खुशी दिन बिताते हैं, यह जब आंखों से देख लोगे तभी जान पाओगे। उनकी झोपड़ी में जैसे स्वर्ग उतर आया है। तभी तो कहते हैं, सुख रुपये में नहीं होता, वह मन में होता है। मैं अपने भतीजे के यहां रहता था। उसकी तनख्वा और ऊपरी आमदनी दोनों ही बहुत थीं। पर लड़ाई-झगड़े के मारे घर में रहना मुश्किल हो गया था।"

कुछ देर सुस्ताकर वह फिर कहने लगे, "फिर भी मैं यहां नहीं आना चाहता था। मेरे मन की बात तो तुम्हें भी मालूम है। मैं कुछ छिपाकर नहीं कहता। मेरे विचार तो सभी जानते हैं। पर मेरी बीमारी का हाल सुनकर सुरेश मुझे सिलीगुड़ी से ले आया है। अब मैं अकेले पड़े-पड़े तमाम बातें सोचता हूं। पहले मेरा विचार गलत था। जमाना तो हरदम बदलता रहता है। एक समय की रीति-नीति दूसरे समय में बेकार हो जाती है। रोएंवाले विशाल प्राणी अतिकाय हाथी हिमयुग के साथ-साथ ही खतम हो गये। उनके स्थान पर अब बिना रोएंवाला हाथी है। समाज पर भी यही बात लागू होती है। मेरी परदादी के समय नारी के जीवन में पति के अलावा और कुछ नहीं था। इसीलिए पति की मृत्यु के बाद सती हो जाना उनके लिए सुखकर था, पर आज की लड़कियों के सामने जिन्दगी बिताने के लिए हजारों उपाय हैं। इनके लिए पति ही सर्वस्व नहीं है, पति उनकी बहुत-सी सम्पत्तियों में से एक सम्पत्ति मात्र है। पति न भी रहे, फिर भी जिन्दगी में बहुत-कुछ बाकी रह जाता है। तब क्यों पति के साथ सती हों या जीते-जी मुर्दों की तरह रहें ?"

इकट्ठी एक साथ बहुत-सी बातें कहते-कहते थककर सूर्यबाबू चुप होगये। उनके सिरहाने स्टूल पर बैठा महिम धीरे-धीरे उनके माथे पर हाथ फेरता रहा। उसने पूछा, "मास्टरसाहब, बीमारी क्या है ?"

"कोई खास नहीं। खा नहीं सकता। पेट में हरदम कुछ दर्द-सा रहता है। अम्लदोष है। और क्या ! लीलावाली गली में ही होम्योपैथी का खैराती अस्पताल है। वहां के डाक्टर ने कहा था कि महीने भर में बीमारी ठीक कर देंगे, पर ये दोनों घबड़ा गये। बड़े डरपोक हैं। जोर-जबर्दस्ती करके अस्पताल में भर्ती करा दिया।। यहां आकर मैं तो बेहाल होगया। कितने ही किस्म के एक्सरे लिये गए हैं। नाक से पेट तक नली घुसाकर आधे दिन

तक कछुए की तरह चित्त पड़ा रहना पड़ा। दिन-भर सिस्टर, डाक्टर, हाउस-सर्जन घेरे रहते हैं, ऊपर से छात्र भी। कोई आकर नाड़ी पकड़ता है, कोई आंख देखता है। बड़े जोरों से इलाज हो रहा है।"

कहते-कहते उन्हें हँसी आगई। उनके सफेद दांत चमक पड़े। बोले, "गांव की वह जगह याद है न, जहां ढोर फेंके जाते हैं। जैसे वहां गिद्ध मंडराते रहते हैं, ठीक वही हाल है।"

थोड़ी देर में लीला और सुरेश आगये। स्कूल में अध्यापकों की बैठक थी। उस झंझट से निपटकर घर लौटते-लौटते लीला को छः बज गये थे। सुरेश भी कहीं-से ढेर सारे प्रूफ़ लाया था। दोपहरी में उन्हें ही देखता रहा। मरीज का पथ्य—दूध-बार्ली बनाकर अल्मुनियम के बर्तन में लाया। बस में भीड़ थी। तीन-तीन बसें छूटने के बाद चौथी बस में किसी तरह दोनों को खड़े होने की जगह मिल सकी।

लीला ने महिम के पैर छूकर प्रणाम किया। पत्नी की ओर देखते हुए सुरेश ने भी ऐसा ही किया। बोला, "दादा, मेरी चिट्ठी मिल गई थी? आपके घर का पता तो मालूम नहीं था, इसीलिए स्कूल के पते से भेजी थी।"

उसके व्यवहार का ढंग बड़ा मधुर था। सूर्यबाबू अपनी पुरानी राय बदलकर इन दोनों से इतने खुश क्यों थे, यह महिम अब समझ गया। बिस्तर में ही बैठकर लीला बाप को बार्ली पिला रही है। उसे देखकर कोई सोच भी नहीं सकता कि वह दिन-भर की थकी-मांदी और परेशान है। लगता है, जैसे वह दिन-भर आराम ही कर रही थी। सुरेश के चेहरे पर भी थकान नहीं दिखाई दी।

महिम ने कहा, "मास्टरजी, तुम लोगों को डरपोक कहकर शिकायत कह रहे थे। कह रहे थे कि मामूली अम्लदोष है, होमियोपैथी से ही ठीक हो जाता, पर तुम लोग घबराहट के मारे पता नहीं क्या-क्या कर रहे हो।"

"मामूली बीमारी? आपके मुंह में घी-शक्कर!" फिर सुरेश ने महिम के कानों में धीरे-से फुसफुसाकर कहा, "कैन्सर होने का शक है।"

हाउस सर्जन नया-नया पास करके आया है। अभी नौजवान है।

महिम ने उससे भेंट की—रोग तो कैंसर ही है। अच्छा होने की कोई उम्मीद नहीं है, आपरेशन हो सकता है कि नहीं, इसके लिए एक्सरे-प से जांच हो रही है। आपरेशन हो जाने से एक-डेढ़ साल के लिए जिन्द बच सकती है। इससे ज्यादा नहीं।"

महिम को विश्वास नहीं हुआ। बोला, "कैंसर में तो बहुत तकली होती है। इनमें ऐसा तो कुछ नहीं दिखाई पड़ता। बड़ी देर से हँस-हँसक बातें कर रहे हैं।"

हाउस सर्जन बोला, "यह तो हम भी देखते हैं। ऊपर से कुछ नहीं दिखाई पड़ता, पर तकलीफ जरूर है। इनमें सहन-शक्ति गजब की है। सब सह लेते हैं।"

महिम को एकाएक याद आया, सूर्यबाबू के ही छात्र चारुदादा भी थे। एक बार उन्हें पुलिसवालों ने बहुत सताया, पर चारुदादा अखीर तक हँसते रहे। पुलिस उनके मुंह से एक भी शब्द नहीं बुलवा पाई।

महिम दूसरे दिन भी गया। फिर अक्सर आने लगा। डाक्टर ने उससे कहा, "आपरेशन के बारे में पूछ लीजियेगा। आपरेशन कराने के लिए तैयार हैं कि नहीं?

सूर्यकान्तबाबू बोले, "जरूरत हो तो आपरेशन जरूर करें, पर ऐसी ोई खास जरूरत तो नहीं महसूस होती।"

ऐसे लोगों को शायद ही कभी किसी चीज की जरूरत महसूस होती हो। र के अस्तित्व पर ये सिर नहीं खपाते। इहलोक में भी किसी चीज के प्रार्थना नहीं करते और परलोक के लिए भी वही बात है। ों की भलाई हो, जिन्दगी-भर वही करते आये हैं। दूसरा कोई । इनकी प्रकृति ही ऐसी होगई है। इससे इनको छुटकारा नहीं ।

ापरेशन नहीं हो पाया। सूर्यबाबू कुछ दिन बेहोश-से पड़े रहे। ुली थीं। सो रहे हैं या जाग रहे हैं, यह पता ही नहीं लगता था। हिम ने सूर्यबाबू के कान के पास मुंह करके पूछा, "मास्टरजी, पहचान रहे हैं?"

अस्पष्ट आवाज सुनाई पड़ी, शायद कह रहे हैं, "हां।"

महिम ने अपने घर का पता सुरेश को बता दिया था। स्कूल से आया ही था, तभी बिखरे बाल, नंगे पैर, चादर ओढ़े सुरेश ने आकर कहा, "दादा, चलिये।"

विस्तार से कुछ कहने की आवश्यकता नहीं थी। महिम समझ गया। वह बिना कुछ बोले जूते उतारकर चल पड़ा। उसने सुरेश से कहा, "तुम्हें ही आना पड़ा?"

सुरेश ने कहा, "लीला भी गई है। ले जाने के लिए कम-से-कम चार आदमी तो चाहिए ही, पर कलकत्ता शहर में उनका मिलना मुश्किल है।" सुरेश को भेजकर महिम अपने पुराने मेस में गया। मुर्दा जलाने के काम में भूदेवबाबू को बड़ा उत्साह है। वह आगये।

लीला भी कहीं से दो आदमियों को लिवा लाई। किसी जमाने में वे दोनों भी सूर्यबाबू के छात्र रहे थे। कुल मिलाकर पांच जने हो गये।

डाक्टर का सार्टिफिकेट लेकर अस्पताल से शव निकालने का आदेश मिलते-मिलते सांझ होगई।

स्मशान में उस दिन बड़ी भीड़ थी। एक बड़े आदमी की इहलीला समाप्त होगई थी। तीन-चार टोलियां भजन-कीर्तन कर रही थीं। सारे रास्ते लावा और पैसे की बारिश की गई थी। मुर्दे को उठानेवालों में कुछ लड़के सिगरेट सुलगाकर घाट के पक्के चबूतरे पर बैठे-बैठे हँस रहे हैं। कोई कह रहा है—नेपालदादा, गोपालदादा, खूब दरिया-दिली दिखा रहे हो। बूढ़ा बाप गया, छुट्टी मिल गई, इसी खुशी में यह सब कर रहे हो क्या?"

दूसरे ने कहा, "पर यह काम ठीक नहीं हो रहा है। मुझे तो डर लगता है कि कहीं मुर्दा उठकर डांटने-डपटने न लगे। बूढ़ा इतना कंजूस था कि ट्राम में दूसरे दर्जे को छोड़कर और किसी सवारी में कभी नहीं चढ़ा। वही जब मर गया तो उसके पैसों को रास्ते भर बरसाते आये! स्वर्ग में जाकर उनको क्या इससे खुशी हो रही होगी?"

साथ में करीब बीस मोटर गाड़ियां आई हैं। सामने का रास्ता मोटरों से ही घिर गया है। नाते-रिश्ते की औरतें भी आई हैं। उनके बदन पर जेवर जगमगा रहा है। दस-पांच आदमी रो भी रहे हैं। थोड़ी दूर पर गंगा

महिम ने उससे भेंट की—रोग तो कैंसर ही है। अच्छा होने की कोई खास उम्मीद नहीं है, आपरेशन हो सकता है कि नहीं, इसके लिए एक्सरे-फोटो से जांच हो रही है। आपरेशन हो जाने से एक-डेढ़ साल के लिए जिन्दगी बच सकती है। इससे ज्यादा नहीं।"

महिम को विश्वास नहीं हुआ। बोला, "कैंसर में तो बहुत तकलीफ होती है। इनमें ऐसा तो कुछ नहीं दिखाई पड़ता। बड़ी देर से हँस-हँसकर बातें कर रहे हैं।"

हाउस सर्जन बोला, " यह तो हम भी देखते हैं। ऊपर से कुछ नहीं दिखाई पड़ता, पर तकलीफ जरूर है। इनमें सहन-शक्ति गजब की है। सब सह लेते हैं।"

महिम को एकाएक याद आया, सूर्यबाबू के ही छात्र चारुदादा भी थे। एक बार उन्हें पुलिसवालों ने बहुत सताया, पर चारुदादा अखीर तक हँसते रहे। पुलिस उनके मुंह से एक भी शब्द नहीं बुलवा पाई।

महिम दूसरे दिन भी गया। फिर अक्सर आने लगा। डाक्टर ने उससे कहा, "आपरेशन के बारे में पूछ लीजियेगा। आपरेशन कराने के लिए तैयार हैं कि नहीं ?

सूर्यकान्तबाबू बोले, "जरूरत हो तो आपरेशन जरूर करें, पर ऐसी कोई खास जरूरत तो नहीं महसूस होती।"

ऐसे लोगों को शायद ही कभी किसी चीज की जरूरत महसूस होती हो। ईश्वर के अस्तित्व पर ये सिर नहीं खपाते। इहलोक में भी किसी चीज के लिए प्रार्थना नहीं करते और परलोक के लिए भी वही बात है। जिससे लोगों की भलाई हो, जिन्दगी-भर वही करते आये हैं। दूसरा कोई उद्देश्य नहीं। इनकी प्रकृति ही ऐसी होगई है। इससे इनको छुटकारा नहीं मिल सकता।

आपरेशन नहीं हो पाया। सूर्यबाबू कुछ दिन बेहोश-से पड़े रहे। आंखें आधी खुली थीं। सो रहे हैं या जाग रहे हैं, यह पता ही नहीं लगता था।

महिम ने सूर्यबाबू के कान के पास मुंह करके पूछा, "मास्टरजी, मैं हूं, महिम पहचान रहे हैं ?"

बड़ी अस्पष्ट आवाज सुनाई पड़ी, शायद कह रहे हैं, "हां।"

महिम ने अपने घर का पता सुरेश को वता दिया था। स्कूल से आया ही था, तभी विखरे वाल, नंगे पैर, चादर ओढ़े सुरेश ने आकर कहा, "दादा, चलिये।"

विस्तार से कुछ कहने की आवश्यकता नहीं थी। महिम समझ गया। वह विना कुछ बोले जूते उतारकर चल पड़ा। उसने सुरेश से कहा, "तुम्हें ही आना पड़ा ?"

सुरेश ने कहा, "लीला भी गई है। ले जाने के लिए कम-से-कम चार आदमी तो चाहिए ही, पर कलकत्ता शहर में उनका मिलना मुश्किल है।" सुरेश को भेजकर महिम अपने पुराने मेस में गया। मुर्दा जलाने के काम में भूदेवबावू को बड़ा उत्साह है। वह आगये।

लीला भी कहीं से दो आदमियों को लिवा लाई। किसी जमाने में वे दोनों भी सूर्यवावू के छात्र रहे थे। कुल मिलाकर पांच जने हो गये।

डाक्टर का सार्टिफिकेट लेकर अस्पताल से शव निकालने का आदेश मिलते-मिलते सांझ होगई।

स्मशान में उस दिन वड़ी भीड़ थी। एक वड़े आदमी की इहलीला समाप्त होगई थी। तीन-चार टोलियां भजन-कीर्तन कर रही थीं। सारे रास्ते लावा और पैसे की वारिश की गई थी। मुर्दे को उठानेवालों में कुछ लड़के सिगरेट सुलगाकर घाट के पक्के चवूतरे पर वैठे-वैठे हँस रहे हैं। कोई कह रहा है—नेपालदादा, गोपालदादा, खूव दरिया-दिली दिखा रहे हो। वूढ़ा वाप गया, छुट्टी मिल गई, इसी खुशी में यह सव कर रहे हो क्या ?"

दूसरे ने कहा, "पर यह काम ठीक नहीं हो रहा है। मुझे तो डर लगता है कि कहीं मुर्दा उठकर डांटने-डपटने न लगे। वूढ़ा इतना कंजूस था कि ट्राम में दूसरे दर्जे को छोड़कर और किसी सवारी में कभी नहीं चढ़ा। वही जव मर गया तो उसके पैसों को रास्ते भर वरसाते आये ! स्वर्ग में जाकर उनको क्या इससे खुशी हो रही होगी ?"

साथ में करीव वीस मोटर गाड़ियां आई हैं। सामने का रास्ता मोटरों से ही घिर गया है। नाते-रिश्ते की औरतें भी आई हैं। उनके वदन पर जेवर जगमगा रहा है। दस-पांच आदमी रो भी रहे हैं। थोड़ी दूर पर गंगा

बिल्कुल किनारे ही धूनी रमाकर एक साधु बैठे हैं। उनके आस-पास छ भक्त बोतलें लेकर बैठ गये।

.. एक पेड़ के नीचे सूर्यकान्त का शव रखकर महिम और भूदेव उनकी त्यु का सार्टिफिकेट लेकर दाहक्रिया के दफ्तर में रुपया जमा करने चले ये। वे दोनों चारों ओर देखते हुए चले जा रहे थे। भूदेव बोले, "हम ोगों के मास्टरजी आये हैं, किसीको पता भी नहीं चला !"

महिम ने कहा, "चुपचाप जिन्दगी बिता दी, और उसी तरह चुपचाप ले भी गये। पुराने जमाने के स्नातक हैं। चाहते तो कोई अच्छी-सी ौकरी मिल सकती थी। पर सारी जिन्दगी गांव में पड़े-पड़े लड़कों को ढ़ाने में ही बिता दी।".

महिम को घोषगांति के घर की उस दिन की बातचीत याद आई। ्र्यबाबू एक महान शिल्पी थे। छोटे-छोटे बच्चों को लेकर सालों तक उन्हें ढ़ते रहते, उनके विचारों को सजाते-संवारते रहते। वह कहते थे, "श्रम ा पुरस्कार पैसे से नहीं मिलता। सृजन की सफलता में ही मिल जाता ़। उनकी सबसे सफल कृति या सबसे बड़ा पुरस्कार शायद चारुदादा ो थे। चारुदादा का हर काम चुपचाप होता था। वह खुद अपनेको कभी ी प्रकाश में नहीं लाते थे। वह गोली से नहीं डरते थे, पर प्रशंसा से डरते ो।

सूर्यबाबू भी वैसे ही थे। गुरु और छात्र दोनों एक ही मन्त्र जानते थे, अर्थात् अपनेको पीछे रखना। अधमैले कपड़े, बेतरतीब मूंछ-दाढ़ी। देखकर कौन समझता कि यह आदमी भी कुछ है ? बात करने के लिए किसी दूसरे के सामने मुंह नहीं खोलते थे, पर छात्र बनकर पढ़ने के लिए एक दिन उनकी कक्षा में जाने से दूसरी ही मूर्ति दिखाई पड़ती थी। आवाज में फर्क पड़ जाता था। पर वह तो गांव के छोटे-छोटे बच्चों की कक्षाएं होती थीं, गण्य-मान्य लोगों को उनके बारे में कुछ पता नहीं था।

महिम और भूदेवबाबू दफ्तर में पहुंच गये। खिड़की पर वहां उस अमीर आदमी की चर्चा हो रही थी। दफ्तर का एक बाबू दूसरे से कह रहा था, "पिछली बार बिहार का एक जमींदार लाया गया था। चंदन की लकड़ी थी, आदमकद चिता, कई टीन घी। उसके साथ आया हुआ

आदमी उंगली में पड़ी हीरे की अंगूठी नचा-नचाकर कह रहा था, "मैं दोहरी चिता का खर्च दूंगा। साठ-सत्तर हजार से कम क्या लाशें देखी होंगी। एक लाख पूरी करके एक दिन मैं भी चिता पर धर दिया जाऊंगा।"

सूर्यबाबू के कागजात गौर से देखकर उसने महिम से पूछा, "पूरी या टांग-तोड़?"

महिम की समझ में कुछ नहीं आया। भूदेवबाबू ने उसे समझाया—"मुर्दा जलाने के दो भाव हैं। एक तो साढ़े तीन रुपया, जिसमें टांग तोड़कर जलाया जाता है, उससे चिता छोटी बनती है और लकड़ी कम लगती है। इसलिए भाव भी सस्ता है। साबुत शरीर जलाने के लिए एक रुपया ज्यादा लगेगा। बोलो, कैसे जलाना चाहते हैं?"

महिम ने अपनी जेब टटोली, सिर्फ आठ आने निकले। वह सलाह करने के लिए लौट आया। सुरेश और लीला को भी इस बारे में कुछ नहीं मालूम था। फूल खरीदने में वे कुछ ज्यादा खर्च कर बैठे थे। वे दोनों एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। तब महिम दफ्तर में जाकर बोला, "टांगतोड़ की ही रसीद काटिये, साढ़े तीन रुपये की।"

क्रिया समाप्त होगई। महिम को लगा कि सूर्यबाबू के साथ-साथ उसने आदर्शवाद का एक युग ही आग में झोंक दिया। इतना बड़ा भारती इन्स्टीट्यूशन, पर उसमें गंगापदबाबू के अलावा असली शिक्षक एक भी नहीं है। जो हैं वे जैसे मिस्त्री हैं। कृष्णकिशोर, सूर्यकान्त सब चले गए। अब थोड़े दिन तक लोगों की कहानियों में जिन्दा रहेंगे।

१६

सत्रह साल बीत गये। पहली लड़की का नाम महिम सरस्वती रखना चाहता था, पर सरला ने उसे बदलकर फैशन का नाम रख दिया—दीपाली उसका कहना था—नाम में भी कुछ पैसे खर्च होते हैं! तब अच्छा नाम

क्यों न रखें ? पुराने जमाने का नाम सुनकर तो वर पक्षवाले लड़की देखने भी नहीं आयंगे। शादी के समय तो यह नाम वदलना ही होगा। तव अभी से वढ़िया नाम रखने में क्या हर्ज है ?

दीपाली के वाद वेटा है। उसका नाम है शुभव्रत। फिर जुड़वां वेटियां हुई। दोनों ही चल वसीं। तव पुण्यव्रत का जन्म हुआ। वह अव चार साल का हो गया है। पुण्यव्रत के जन्म होने के दो दिन वाद ही महिम की मां नहीं रहीं। तभीसे सरला की देह भी टूट गई। वुखार, गठिया, जिगर, तिल्ली, दर्द, एक-न-एक रोग लगा ही रहता है। वीच में कई साल छूट गये थे, अव फिर एक लड़की हो गई। उसके वाद सौरघर से निकलकर सरला एक दिन भी उठ नहीं सकी। हर समय थोड़ा-थोड़ा वुखार रहता है। शरीर पीला पड़ गया है, खून की कमी है। खड़े होने से चक्कर खाकर गिर जाती है। लेकिन लड़की अच्छी-खासी तन्दुरुस्त है। एकदम गोरा-चिट्टा रंग। सरला इस हालत में भी दीपाली के साथ छोटी वेटी के नाम के लिए सलाह करती है। कहती है—"दीपाली की वहन रूपाली। क्यों, कैसी रहेगी ?"

मां वीमार रहती है। घर में दूसरी कोई औरत नहीं है। दूसरे दर्जे के वाद दीपाली की पढ़ाई वन्द होगई। अव वह आंचल में चाभी वांधकर घर-गृहस्थी सम्भालती है। शुभव्रत भारती इन्स्टीट्यूशन में ही पढ़ता है। मास्टर का लड़का है, इसलिए फीस नहीं लगती। कितावें भी नहीं खरीदनी पड़तीं। स्कूल की मुहर लगी हुई चिट्ठी लेकर प्रकाशक के पास जाने से कितावें मुफ्त में मिल जाती हैं। प्रकाशकों को देनी ही पड़ती हैं, नहीं तो अगले साल कितावों की सूची से उनका नाम कट जायगा। शुभव्रत वड़ा मेघावी छात्र है। कक्षा में पहले-दूसरे नम्वर पर रहता है।

पर मुश्किल हुई छोटी वच्ची रूपाली को लेकर। उसको मां का एक वूंद दूध नहीं मिल पाता। वह वहुत कमजोर हो गई। मास्टरों के वीच एक पताकीवावू ही ऐसे हैं, जिन्हें हर मास्टर और हर छात्र की हालत मालूम है। सवके साथ उनका मेल-जोल रहता है। वह दूसरों के लिए कुछ-न-कुछ करते भी रहते हैं। महिम ने एक दिन उन्हें ही पकड़ा। कहने लगा, "पताकी-वावू, वच्ची कैसे वचेगी ? उसकी मां को अपनी वीमारी की परेशानी से कहीं ज्यादा वच्ची के लिए परेशानी है। कल वहुत देर तक रोती रहीं।

रात-भर नींद नहीं आई। सचमुच हम लोगों की भी क्या जिन्दगी है! खाली पढ़ाना और पढ़ाना। घर-गृहस्थी की ओर एक बार नजर-भर देखने का भी मौका नहीं मिलता। आप कुछ कीजिये। उसे बचाना ही होगा।"

पताकीबाबू निर्विकार ढंग से हँसते हुए बोले, "आपको चाहिए क्या, यह बताइये!"

"दूध का डिब्बा।"

"कितने डिब्बे?"

महिम आश्चर्यचकित होकर बोला, "और लोगों को तो तमाम कोशिशों के बाद एक डिब्बा भी नहीं मिलता!"

"हां, पर कायदा-कानून मालूम हो तो दर्जनों डिब्बे मिल सकते हैं। अच्छा, कल आपको बताऊंगा।"

दूसरे दिन पताकीचरण बोले, "फिलहाल दो-तीन डिब्बे तो मिल ही जायंगे।"

महिम ने कृतज्ञता से गद्‌गद् होकर कहा, "आपने हमारी बच्ची की जान बचाली!"

"जरूरत पड़ने पर और की भी व्यवस्था हो जायगी। पर भाव कुछ तेज पड़ेगा।"

महिम ने डरी हुई आवाज में पूछा, "कितना? सुन रहा हूं कि लोग काला बाजार से ढाई-तीन रुपये की चीज छः सात रुपये में खरीदते हैं।"

पताकीचरण जोर से हँसकर बोले, "छः-सात रुपये में मिलेगा, यह आप को किसने बताया? मैं रुपये-पैसे के भाव की बात नहीं कर रहा था। एक लड़के की जांच हुई है। उसे पास कर देना है।"

धीरे-से पताकीबाबू ने लड़के का नाम भी बता दिया—अलककुमार घोष।

महिम चौंक पड़ा। बोला, "वह लड़का? उसकी तो उम्र का भी ठीक-ठिकाना नहीं है। मैट्रिक की परीक्षा देना चाहता है। इस [illegible] बी. ए. की परीक्षा देनी चाहिए थी।"

पताकीबाबू बोले, "आप लोग तो उसे मैट्रिक [illegible]

दे रहे हैं। जांच में फेल करके रोक देंगे। उम्र ज्यादा है ही, और भी ज्यादा हो जायगी। ज़रा यह भी तो सोचिये कि बाप काले बाजार का कारोबारी है, पर वैसे बाप की भी आंखों में धूल झोंककर माल निकाल लाना! लड़का अगर छोटा होता तो यह काम कर सकता?"

महिम चुप होगया। उसे चुप देखकर हाथ हिलाते हुए पताकीबाबू ने व्यंग्यपूर्वक कहा, "मास्टरी करते बीस साल हो चले हैं, पर अभी भी जैसे नई दुलहिन की तरह बैठे हैं। अरे भई, ज्यादा बखेड़ा नहीं है। बात यह है कि रद्दी स्कूलों में पढ़कर उम्र कुछ बढ़ा ली है। और क्या? कालाचांदबाबू को ट्यूटर रखा, तब कहीं इस स्कूल में भरती हो पाया है। सब इन्तज़ाम पहले से ही हो चुका है। कालाचांदबाबू इतिहास की कापी देखेंगे, उसमें अच्छे नम्बर मिल ही जायंगे। नवीन पंडितजी के पास संस्कृत है। उसमें पास हो जायगा। आपने देखा नहीं, कालाचांदबाबू नवीन पंडितजी के पास बैठे-बैठे घंटों अखबार की व्याख्या सुनते रहते हैं, सो क्या यों ही? बंगला में तो खुद ही पास हो जायगा। बाकी रह गये हिसाब और अंग्रेजी। हिसाब आपके पास और अंग्रेजी दाशू के पास। नया-नया सुपरिन्टेंडेण्ट बनकर तो दाशू बहुत बढ़ गया है। कालाचांदबाबू पर नाराज भी है। कहता है—कालाचांदबाबू ने ट्यूशन नहीं दिलवाया। खुद कामचोर है। लड़के पसन्द नहीं करते हैं तो कालाचांदबाबू का क्या कसूर? हां, तो वह दाशूवाला ही मामला आपको सम्भालना पड़ेगा। कालाचांदबाबू उस लड़के के ट्यूटर हैं, यह बात दाशू को नहीं मालूम होनी चाहिए। कोशिश कीजियेगा। सिर्फ एक विषय में फेल होने पर कालाचांदबाबू हैडमास्टर से सिफारिश कर देंगे।"

महिम द्विविधा में पड़ गया। सोचा, उससे अच्छे लड़के रह जायंगे और वह सिफारिश के जोर पर दनदनाता हुआ पास हो जायगा। यह तो अधर्म है, अन्याय है।

महिम के मन की बात मानों पताकीबाबू ताड़ गये। बोले, "और भी तो बहुतों को बच्चों के दूध की जरूरत है। पर मिल आप ही को रहा है, यह भी तो अधर्म है। हम मास्टर लोग बहुत सोचा करते हैं, तभी तो कुछ हो नहीं पाता। ज़रा-सी तो बात है। 'सच कहिये, महिमबाबू, क्या

आपने कभी किसीके नम्बर नहीं बढ़ाये, अब सोच लीजिये कि एक बच्ची की जान बचाने की खातिर ऐसा किया ?"

खिदिरपुर बाजार के पीछे सन्नाटा रहता है। अलक घोष ने महिम को वहीं बुलाया। खूब अच्छी तरह जगह समझा दी। उस दिन महिम रात के ट्यूशन पर नहीं जासका। परीक्षा खतम हो चुकी है। नतीजा अभी नहीं निकला था। एकाध शाम नागा कर जाने पर भी लोग आपत्ति नहीं करते। महिम वहां पहुंच गया। रास्ता नहीं है, इसलिए इस ओर बत्ती नहीं लगी है। अंधेरे में जाने किधर से अलक आगया। धीरे-से बोला, "आज तीन डिब्बे नहीं हो सके। आज दो ही ले जाइये। चादर के नीचे छिपा लें। जल्दी-से चले जाइये। देर मत कीजिये। कई बार पुलिस इधर आजाती है।"

वह दो डिब्बों को कागज में लपेटकर लाया था। चद्दर के नीचे दबा लेने पर कोई खतरा नहीं था। महिम इस ओर बहुत कम आता-जाता था। बहुत घूम-घामकर तब वह रास्ता पासका। वह जल्दी-जल्दी चलने लगा। तभी किसीने पीछे से बुलाया, "कौन? महिम? इतना दौड़ क्यों रहे हो! मैं तुम्हें ही बुला रहा हूं।"

सातू घोष! महिम पहले नहीं पहचान सका। सातूघोष अब दाढ़ी रखते हैं। सफेद दाढ़ी, नैमिषारण्यवासी ऋषियों की तरह। महिम एकाएक कैसे पहचान पाता।

सातू घोष बोले, "मैं तुम्हें ही ढूंढ़ रहा था। फिर सुना कि भारती स्कूल में मास्टर हो गये हो। प्राइवेट ट्यूशन करने में भी तुमने नाम कमाया है। तुम्हारे स्कूल जाकर तुम्हारे घर का पता लाया हूं। वहीं जाने की सोच रहा था। तुम यहीं मिल गये। अपने लड़के को भी अब उसी स्कूल में भर्ती करा दिया है। मुझे पहले क्या मालूम था कि तुम भी वहीं पर हो। अगर यह मालूम होता तो फिर झंझट ही न होता। अब मैंने एक चलानी कारबार शुरू किया है। चलो, मेरे साथ चलो, कुछ बातें करनी हैं।"

बड़ा-सा टीन का कमरा। सामने तीन-चार छोटे-छोटे हिस्से हैं। उन्हींमें से एक में मेज-कुर्सी रखकर दफ्तर बनाया गया है। सातू घोष एक

कुर्सी पर वैठ गये। वोले, "मेसवाले साइनवोर्ड पर मर्चेन्ट्स भी लिखा था। तुम्हें याद है न ? मैंने पहले से ही सव सोच रखा था। एक के वाद एक सभी होता जा रहा है। वैंकर्स भी लिखा था, सो एक वैंक भी खोल रखा है—कल्याणश्री वैंक। नाम नहीं सुना है ? वैठो, अरे, ठीक से वैठो। मैनेजर, इसी महिम को मैं पहले-पहल कलकत्ता लाया था। आज तो इसका नाम चारों ओर फैल गया है। जल्दी से एक प्याला चाय मंगा दो।"

मैनेजर घवड़ाहट के साथ वड़वड़ा रहा था, "अरे, यह तो दिन-दहाड़े डकैती है। एक दर्जन ग्लैक्सो अभी घंटे-भर पहले ही निकालकर रखे थे। कैंनिंग के खुदीराम साह के यहां भेजने थे। अव मिलाने आया हूं तो दो डिब्वे गायव हैं।"

सातू घोष आगवबूला होकर दहाड़ उठे, "यह वखेड़ा मेरे सामने नहीं चलेगा। यह चोरी हो रहा है, वह चोरी हो रहा है। यहां चोरों का कोई अड्डा है क्या ? घंटे-भर में गायव हो गया ? डिब्वों में क्या पर लग गये कि उड़ गये ? किसीको वाहर मत निकलने दो, सवकी तलाशी लूंगा। जाड़े के दिन हैं न। मजे से चद्दर ओढ़े रहते हैं। उसीके नीचे माल छिपाकर निकाल ले जाते हैं। उस कमरे में कौन-कौन थे ?"

"खजांची चुन्नीवावू को छोड़कर और कौन था ! हजारी और फूलचन्द, दोनों सामान ढो रहे थे। सुना है कि एक वार खोकावावू भी आये थे।"

सातू घोष की त्यौरी चढ़ गई। वोले, अच्छा अलक न ? उसे इस समय घर में वैठकर पढ़ाई-लिखाई करना चाहिए। यहां क्या करने आया था ? तुमसे कहा था कि विना काम पूछे उसे गोदाम की तरफ मत जाने दिया करो।"

मैनेजर वोला, "उस समय मैं यहां नहीं था और चुन्नीवावू को तो आप जानते ही हैं। खोकावावू को रोकने की हिम्मत वह नहीं कर सकते।"

"अच्छा जाओ, अच्छी तरह से ढूंढ़ो।"

प्रसंग खतम करके सातू घोष ने महिम से कहा, "इस तरह खड़े क्यों हो ? वैठो !"

"अभी ट्यूशन पर जाना है। जाना पड़ेगा।"

सातू घोष ने कहा, "इधर कैसे आये थे ?"

'डायमंड हार्बर रोड पर एक मित्र बीमार है। उसीको देखने आया था।"

सातू घोष बोले, "अच्छा हुआ, तुम मिल आये। सुनो, मेरे लड़के ने तुम्हारे स्कूल से टेस्ट दिया है। तुम्हें उसे पढ़ाना होगा।"

"कालाचांदबाबू तो पढ़ाते हैं?"

"उनकी कुछ न पूछो। ऐसा कामचोर तो मैंने जिन्दगी-भर नहीं देखा। हजारों बहाने करके नागा करता रहता है। उन्हें मास्टर रखकर और एक महीने की पेशगी तनख्वा देकर कहीं लड़के को स्कूल में दाखिल करा सका। लड़के ने टेस्ट दिया है। फाइनल में बैठने देगा, इसी उम्मीद से उसे अभी तनख्वा दे रहा हूं। खैर, कालाचांदबाबू को पढ़ाने की तनख्वा नहीं देता। देता हूं सिफारिश की कीमत समझकर। वह पढ़ाये या नहीं, मुझे इसकी परवा नहीं है। तुम्हें ही पढ़ाना पड़ेगा। दो-दो मास्टर रखने का भार भी मैं उठा सकता हूं। मेरे एक ही लड़का है। बरबाद होता जा रहा है। तुमने अभी डिब्बे की चोरी के बारे में सुना न। उन्हें और किसीने नहीं, अलक ने ही उड़ाया है। तुमसे क्या छिपाना! कारोबार में मैंने खूब कमाई की है, पर मन में शान्ति नहीं है। लड़का चोर बनता जा रहा है। हमेशा कुछ-न-कुछ गायब कर देता है। सिगरेट पीता है, सिनेमा जाता है, बुरी संगति में पड़ गया है।"

दर्दीले स्वर में सातू घोष कहते ही गये, "तुम चरित्रवान हो। मैनेजर को देखा न, मेरे साथ रहते-रहते उसने कलकत्ता में मकान बनवा लिया है। मकान तो तुम्हारा बनना चाहिए था, पर तुम तो पैसे को हाथ का मैल समझते हो। तुम आदर्श लेकर साधुओं जैसी जिन्दगी बिता रहे हो। उसी में सुख है, उसीमें शान्ति है। यह सब मैं अब बुढ़ापे में समझ रहा हूं। लड़के ने टेस्ट तो दिया है, पास हो जाय तो अच्छा है, नहीं तो परवा नहीं। तुम्हारे आदर्श से वह भी इन्सान बन जाय, यही मैं चाहता हूं। तुम उसकी जिम्मेदारी ले लो। जबतक वादा नहीं करोगे, मैं छोड़ूंगा नहीं।

महिम को राजी होना पड़ा। सातू घोष उसका हाथ पकड़कर उससे अनुरोध करनेवाले थे, पर महिम के हाथ में डिब्बे थे। इसी डर से उसने जल्दी-से हामी भर ली।

आजकल बहुत ट्यूशन मिलती हैं। मास्टर बनावटी हँसी हँसकर

महिम को 'ट्यूशन राज्य का सम्राट' कहते हैं। पहले सलिलबाबू थे। अब उस सिंहासन पर महिम है। सचमुच, उसकी अच्छी धाक जम गई है। इस समय यानी टेस्ट और मैट्रिक की परीक्षा के बीच के तीन महीने में ट्यूशनों की भरमार हो जाती है। कितने ही किस्म के ट्यूशन मिलते रहते हैं। पर अलक के ट्यूशन की बात खूब रही। सातू घोष तो महिम की साधुता की प्रशंसा कर रहे थे और महिम चद्दर के नीचे डिब्बे छिपाये हुए हुए था! छाती धौंकनी की तरह चल रही थी। महिम झटपट 'हां' कहकर वहां से चल दिया।

अलक के अंग्रेजी नम्बरों के लिए महिम दाशू के घर गया। उसने बातचीत के लिए कुछ खुशामदी वाक्य याद कर लिये थे। वहां जाकर महिम ने कहा, "इतने बड़े स्कूल के सुपरिन्टेन्डेन्ट बन गये। दाशूबाबू, भगवान ने तुम्हें आगे बढ़ाया, हम सबको इससे खुशी हुई।"

"भगवान ने क्या योंही बढ़ा दिया है?"

इशारा समझकर महिम जल्दी से बोला, "गुण के बिना कभी कोई आगे नहीं बढ़ सकता। गुणी पर भगवान दया करते हैं। पर भगवान से भी दया वसूल करनी पड़ती है। आप गुणी भी हो, साथ ही उद्यमी भी। इतनी कम उम्र में सबसे बाजी मार ले गये। आपके पास एक प्रार्थना करने आया हूं, दाशूबाबू! मेरे छात्र को पास होने-भर के नम्बर देने पड़ेंगे।"

ऊंची पदवी पाकर दाशू इन्साफ-पसन्द हो गया है। महिम की बात काटते हुए बोला, "नम्बर देना क्या मेरे बस की बात है? नम्बर तो वह खुद ही लेगा। जैसा लिखेगा, वैसे ही नम्बर पायगा।" कहते-कहते और भी गम्भीर होकर दाशू ने कहा, "कुछ और कहना हो तो कहिये। मुझे अफसोस है कि आप पुराने शिक्षक होकर भी ऐसी दुर्नीति को प्रश्रय दे रहे हैं। ये बातें अगर ऊपर पहुंच जायं तो नौकरी पर आ बीते।"

महिम को धक्का लगा। वह मुंहतोड़ जवाब देने पर उतारू हो गया। बोला, "ये बातें ऊपर तक क्यों पहुंचेंगी, दाशूबाबू? हम दोनों का संबंध तो ऐसा नहीं है। पहले-पहल जब मैं स्कूल में आया था, तब यहां का रंग-ढंग नहीं जानता था। मास्टरी को एक महान कार्य समझता था। उस

समय अध्यक्ष के घर में हमेशा जाता-आता रहता था। उन्हीं दिनों तो आप अपने एक छात्र के विषय में मेरे पास आये थे। ! वह बात तो अध्यक्ष तक नहीं पहुंची थी। फिर आज की यह बात क्यों ऊपर पहुंचेगी ?"

दाशू को कुछ याद नहीं आया।

महिम याद दिलाते हुए बोला, "अच्छा, छात्र का नाम भी बता दूं—मलय चौधरी। देव बालक जैसा सुकुमार। एक दिन टट्टीघर में बुरी बात लिखने पर पकड़ा गया था।"

दाशू याद करके बोला, "ओह, पर मैंने नम्बर घटाने के लिए कहा था, बढ़ाने के लिए तो नहीं। घटाने में क्या रखा है। सौ की जगह पचास ले लेने में कसूर नहीं होता, पर पचास की जगह सौ लेना कसूर होता है।"

दाशू ने जाने क्या सोचकर अलमारी के ऊपर से कापियों का बंडल उतार लिया। बोले, "आपके छात्र का नाम क्या है ?"

"यही कापी तो है—अलक कुमारघोष।"

"छत्तीस मिलने से पास होता। यह लीजिये सैंतीस नम्बर दे दिये।"

"कापी खोलकर देखी भी नहीं ?"

दाशू ने कहा, "देखने की कोई जरूरत नहीं। हर लड़के की नस-नस मुझे मालूम है। कक्षा में रोज तो देखता हूं। कापी खोलकर देखने से क्या होता है ! अलक को सिर्फ सात-आठ नम्बर मिलते, फेल होता, यकीन न हो तो आपके सामने ही कापी जांच दूं। अगर आठ नम्बर से ऊपर चौथाई नम्बर भी ज्यादा मिले तो समझिये कि उसने नकल की है।"

काम पूरा करके महिम खुशी-खुशी घर लौटा। अब वह ट्यूशनों को 'ना' नहीं करता। रुपयों की उसे जरूरत है। मां का क्रिया-कर्म खूब धूम-धाम से किया था। उसमें कर्ज बड़ा हो गया। पर ट्यूशनों की कमाई से करीब-करीब चुका दिया। अब बेटी सयानी हो गई है। उसके व्याह के लिए पैसे चाहिए। घोंसला बनाने के लिए जैसे चिड़िया एक-एक तिनका लाती है, वैसे ही महिम भी दस घरों में पढ़ाकर रुपये इकट्ठे कर रहा था। सब जगह रुपयों से काम चलता है। बेटी का व्याह हो जायगा, फिर लड़कों की पढ़ाई-लिखाई। अपने ऊपर चाहे जैसी बीते, लड़के की पढ़ाई-

लिखाई में कंजूसी न हो। वह जितना चाहे पढ़े। पढ़-लिखकर कुछ बन जायगा तो दुःखों का भी अन्त हो जायगा।

२०

हैडमास्टर को पद-मुक्त हुए सालों हो गये। उनकी जगह अव नये हैडमास्टर आये हैं। महिम की तारीफ उनके कानों में भी पहुंच गई। टेस्ट में अगर किसी छात्र को एक विषय में कुछ कम नम्बर मिले हों तो हैडमास्टर कहते हैं—जाकर महिमवावू से पूछो। अगर वह तुमको पास करवाने की जिम्मेदारी ले लें तो मैं तुम्हें आगे वढ़ा दूंगा।"

लड़के हैडमास्टर के पास से आकर महिम को घेरते हैं। सुखद आत्म-तृप्ति से हँसते हुए महिम कहता है—"हैडमास्टर तो कहते हैं, पर मैं कितनों की जिम्मेदारी लूंगा। तुम सव मुझे मार डालोगे!"

"आप कह देंगे, तभी हैडमास्टर मानेंगे। कवसे पढ़ाइयेगा, वोलिये?"

महिम 'ना-ना' करता रहता है। दूसरे दिन छात्र अपने अभिभावक को लेकर आजाता, है। वह आकर पूछते हैं, "तो आप ही महिमवावू हैं? नमस्ते। परिचय तो नहीं है, पर आपका नाम बहुत सुना है। लड़के कहते हैं कि आप जिसे पढ़ाते हैं, वह कभी फेल नहीं होता। मैं अपने दफ्तर से नागा करके आपके पास आया हूं। असित का गणित विना आपके देखे नहीं चलेगा।"

महिम कहता है, "पहले यह तो वताइये कि आप रहते कहां हैं? क्या टेस्ट के वाद से ही मैं एकाएक अच्छा पढ़ाने लगा हूं। मार्च के पहले हफ्ते से ही परीक्षा शुरू होगी। इतने थोड़े-से समय में मैं क्या सिखा सकूंगा?"

अभिभावक हार मानना नहीं जानते, कहते हैं, "सिखाना-विखाना क्या है, मास्टरसाहव! वस, पास हो जाय किसी तरह, फिर सीखने के लिए तो सारी जिन्दगी पड़ी है। सीखने का भी कोई ओर-छोर है?"

"नम्वर तो विश्वविद्यालय देगा। कोई मेरी पेटी में तो नम्वर रखे

नहीं हैं कि दे दूंगा।"

अभिभावक हँसकर कहता है, "लड़के की बात से तो ऐसा ही लगता है कि नम्बर आपकी पेटी में हैं।"

महिम गम्भीर होकर कहता है "इतने थोड़े समय में पास करवाना है। इसका रेट दूसरा होगा।"

रेट की बात सुनकर अभिभावक की आंखें फटी रह जाती हैं —"आप शिक्षक हैं। शिक्षा देने का पुण्यकार्य करते हैं। इतना पैसा मैं कहां से दूंगा?"

"दो साल ट्यूटर रखकर जो काम करवाते, उतना ही काम आप तीन महीने में करवाना चाहते हैं। दो साल का हिसाब जोड़िये, तब तो वह बहुत सस्ता पड़ेगा।"

इसमें संदेह नहीं कि महिम बहुत अच्छा शिक्षक है। हिसाब, अंग्रेजी और बंगला, तीनों विषयों को बहुत अच्छा पढ़ाता है। चित्तबाबू कहते हैं—महिमबाबू तो आलू की तरह हैं। किसी भी सब्जी में डाल दो, चल जाता है।

सोच-विचारकर महिम ने हिसाब बनाने की कुछ सरल तरकीबें निकाली हैं। सिर खपाने की जरूरत ही नहीं पड़ती। हिसाब अपने-आप हल हो जाता है। उसको जैसे तीसरी आंख भी प्राप्त है—फाइनल में कौन-कौन से सवाल आयंगे, यह महिम बताता है और उसका अनुमान पन्द्रह आने सही निकलता है। ऐसा संयोग से नहीं, सालों से होता आ रहा है।

दोपहर की आधी छुट्टी के समय लाइब्रेरी के कमरे में दाशू मिलते हैं। पूछते हैं, "इस बार कितनों को फंसाया, महिमबाबू?"

"थोड़े ही हैं।"

"दर्जन-भर पूरे हो गये?"

"कहीं दर्जन-भर पढ़ाये जा सकते हैं?"

सुपरिन्टेन्डेन्ट गंगापदबाबू का देहान्त हो गया, उनकी जगह दाशू सुपरिन्टेन्डेन्ट बने हैं। उनका विचार है कि अधिक ट्यूशन करने से स्कूल का काम ठीक से नहीं होता। ऐसा ही वह कहते भी हैं। पताकीचरण फुस-फुसाते कहते हैं, "खुद ट्यूशन नहीं पाता, इसीलिए जलता है। भला

ऐसा कामचोर मास्टर कौन रखेगा ? खुशामद से कमेटीवालों का दिल पिघल जाता है, पर लड़कों के मां-वाप का दिल तो तभी पिघलेगा, जव कि लड़का कुछ सीखेगा।"

महिम एक वात से वहुत चिन्तित है। दाशू से वोला, "दिनोंदिन मेरी आंखें कमजोर होती जा रही हैं। क्या करूं ?"

तपाक से दाशू ने जवाव दिया, आंखों से ज्यादा काम लेते हैं न। आराम कीजिये। आधे नहीं, वल्कि वारह आने ट्यूशन छोड़ दीजिये।"

पताकीचरण टिप्पणी करते हैं, "आंखों पर कहां जोर पड़ता है ! महिमवावू को सव-कुछ याद है। वह आंखें मूंदकर ही पढ़ाते हैं।"

वात सही है। पढ़ते-पढ़ाते अव ऐसा हो गया है कि वीजगणित की पुस्तक देखे विना ही सारे हिसाव वताता जाता है।

महिम का घर पहले स्कूल के पास ही था। अव शाह नगर के पास दूसरा मकान ले लिया है। लोग पूछते हैं, "मास्टरजी, इतनी दूर क्यों चले गये ? वेकार की हैरानी होती है। पास-पड़ोस में थे तो अच्छा था।"

केवल छात्रों को पढ़ाने के अलावा अव महिम वहुत कम वोलता है। वेकार ही फेफड़ों से क्यों काम ले ? कोई कुछ कहता है तो मुस्कराकर "हूं"—भर कह देता है।

अटारी पर एकान्त में महिम का कमरा है। विल्कुल सन्नाटा रहता है। उसी कमरे में महिम अकेला रहता है। सवेरे पौ फटने के कुछ पहले ही जाग जाता है। आकाश में पश्चिम की ओर तव भी तारे जगमगाते रहते हैं। उसी समय स्नान करके महिम रसोई के कमरे में जाकर चावल के टीन में से निकालकर वारह-चौदह दाने कच्चे चावल मुंह में डालकर चवाता है और ऊपर से एक गिलास पानी पी लेता है। फिर छाता और चद्दर उठाकर 'दुर्गा-दुर्गा' कहकर दीवार में टंगे चित्र के आगे सिर झुकाकर चला जाता है। जाते समय वेटी को आवाज देता है—"दीपाली, दरवाजा खुला है। अव जग जाओ, वेटा, सवेरा हो गया। अंगीठी जला लो।"

वस कह-भर देता है, पीछे मुड़कर देखता भी नहीं कि किसीको सुनाई पड़ा या नहीं। इतनी फुरसत ही कहां रहती है। किसी मकान से टन से

साढ़े चार वजे की घंटी सुनाई पड़ती हैं, जैसे किसीने महिम की पीठ पर चावुक मार दी हो। चलने के वजाय महिम दौड़ने लगता है। उसके दुवले, पतले, लम्वे पैरों में वेहद ताकत आ जाती है।

तीर की तरह मुहल्ला पार करके महिम तीन मिनट के अन्दर चौराहे पर आ जाता है। सवेरे के ट्यूशनों को पढ़ाना यहीं से शुरू होता है—चौक के दाहिनी ओर के दो तल्ले मकान से। छात्र का नाम है प्रवोध। पिछले साल फेल हो गया था, इसीलिए महिम को मास्टर रखना पड़ा। महिम ने कहा था—आरामतलवी से सिर्फ चैन की वंसी वजाने से पढ़ाई नहीं होती। कोई परीक्षा पास नहीं कर सकता, खास-तौर से तुम्हारे जैसे लड़के। सवेरे उठकर पढ़ाई करो, उस समय चारों ओर शान्ति होती है। जल्दी ही याद हो जाता है। थोड़े दिन पढ़कर देखो, स्वयं ही मालूम हो जायगा।"

प्रवोध असहाय ढंग से कहता है, "इच्छा तो होती है, मास्टर साहव, पर उठ नहीं पाता। नींद नहीं खुलती।"

"तो घरवालों को कह दो। वे जगा देंगे।"

"वे लोग तो मुझसे भी देर से उठते हैं। मैं सात वजे उठता हूं, पिताजी आठ वजे और मां तो साढ़े नौ वजे उठती हैं।"

"तव तो मुश्किल है।"—कहकर महिम कुछ देर सोचकर कहता है, "अच्छा देखो, तुम नीचेवाले पढ़ने-लिखने के कमरे में सो जाना। आखिरी रात में तो एक वार जागते ही हो। उस समय दरवाजे की कुण्डी खोल दिया करना, फिर मैं आकर जगा लिया करूंगा।

"सर, आप इतने जाड़े की रात में! इन दिनों जाड़ा भी तो वहुत पड़ता है?"

"क्या करें, वेटा, और तो कोई चारा नहीं है। मैंने जिम्मेदारी ली है! तुम्हारे वावूजी से वादा किया है कि तुमको पास करवा दूंगा।"

मास्टर महिम की कर्तव्य-भावना देखकर प्रवोध के घरवाले दंग रह गये। मास्टर आकर पढ़ा जाता है, घरवालों को मालूम भी नहीं हो पाता। उसके वाद प्रवोध चिल्ला-चिल्लाकर पढ़ता रहता है। एकदम सवेरे ही शुरू न करने से महिम का काम पूरा नहीं होता। इतने लड़कों की जिम्मे-

दारी सिर पर ले रखी है। कम-से-कम एक-एक घन्टा तो पढ़ाना ही पड़ता है। घंटे-भर सबको नहीं तो कम-से-कम पचास मिनट तो जरूर ही चाहिए। मुश्किल है कि भगवान ने सिर्फ चौबीस घंटे का ही दिन बनाया है। इसमें खाने-पीने, सोने आदि में कम-से-कम आठ घंटे खर्च हो जाते हैं। साढ़े दस बजे से चार बजे तक स्कूल भी तो है। प्रबोध के यहां पढ़ा चुकता है तो महिम दूसरे घर में जाता है। कालीघाट की ओर उस घर में ज़रा सुविधा है, क्योंकि मालिक सवेरे से ही ट्राम से चांदपाल घाट पर बड़ी गंगा में स्नान करने जाते हैं। जाने के पहले एक चिलम तेज तम्बाकू पी जाते हैं। उठते हैं तो लड़के को भी जगा देते हैं। महिम के आवाज देते ही छात्र आकर दरवाजा खोल देता है।

वहां से सिंही परिवार में जाता है। वे बड़े नामी आदमी हैं। कुछ साहबी ढंग से रहते हैं। पौने आठ बजे से पढ़ाने का समय है। तबतक थोड़ी धूप निकल आती है। महिम छाता खोल लेता है। छाता दिन-रात साथ ही रहता है। बिना छाते के महिम मास्टर की कल्पना भी नहीं की जा सकती। एक ही छाता सालों चलता है। छाते के कपड़े का काला रंग धूल की वजह से जरूर कुछ फीका पड़ गया है, इसके अलावा छाते में और कोई कमी नहीं है। शीत, ग्रीष्म, वसन्त, वर्षा, सभी ऋतुओं में इस छाते को काम में लाया जाता है। ठंड लगने के डर से महिम रात को भी छाता खोल लेता है। पौराणिक चित्र के राजछत्र की तरह महिम के सिर पर छाता खुला रहता है। छाता खोलकर कन्धे पर रख लेने की आदत नहीं है। दूर से देखकर ही लड़के समझ जाते हैं कि महिम मास्टर आरहे हैं।

सिंही परिवार के बूढ़े मालिक चन्द्रभूपणसिंह बरामदे में कुर्सी पर बैठे-बैठे अखबार पढ़ते हैं। महिम को दूसरी छोर के बरामदे में आना पड़ता है। चन्द्रबाबू दीवारघड़ी की ओर देखते हैं। अगर पौने आठ से दो मिनट भी ज्यादा हो जाय तो आवाज देते हैं—"मास्टरसाहब, ज़रा इधर होकर जाइयेगा।"

महिम के पास आने पर देर होने की वजह पूछते हैं। दो-एक बातों से ही छुटकारा नहीं मिल जाता। किसी जमाने में चन्द्रबाबू बहुत बड़े वकील थे, अब अवकाश ले लिया है, फिर भी जिरह करने की आदत नहीं छूटी

है। दो मिनट की देरी के लिए उचित कैफियत देकर पढ़ाने के कमरे में जाने में कम-से-कम दस मिनट की देर हो जाती है। पर जल्दी पहुंच जाने से कोई फायदा नहीं होता। जाली विल्कुल पढ़ता ही नहीं। कहता है--आज रहने दीजिये सर, तवीयत कुछ ठीक नहीं है। आप वैठिये, मैं चाय के लिए कह आता हूं। चाय तो आजाती है, पर जाली नहीं लौटता। या कभी आता भी है तो कहता है कि मास्टरजी, आप पढ़िये, मैं सुनता जा रहा हूं। सुन-सुनकर ही याद हो जायगा। कहकर वह आराम कुर्सी-पर लेट जाता है। महिम पढ़ाता जा रहा है और वह आराम-कुर्सी में पड़ा-पड़ा खेल-कूद के सामान के सूचीपत्र के पन्ने उलटता रहता है। महिम को वुरा लगता है। एक दिन वह सातू घोप की नौकरी छोड़ आया था और अव यह गुलामी? उसे अपने पर गुस्सा आता है और लड़के पर भी। पर उस परिवार में यही एक वेटा है। सवका लाड़-प्यार उसीपर वरसता है। पैसे अच्छे मिलते हैं। इसलिए चुपचाप सह लेना पड़ता है। सिंह-परिवार में पढ़ाना क्या, मुसाहिवी करना है।

एक के वाद एक इसी तरह ट्यूशनें खत्म करके महिम स्कूल की ओर वढ़ जाता है। छात्रों के घरों का हिसाव लगाकर महिम ने सवको एक सरल क्रम में वांध लिया है। शाहनगर में घर लेने की खास वजह यही है। सिंह-परिवार में पढ़ाकर वलराम मित्र लेन में राविन को पढ़ाने जाता है। सवेरे के ट्यूशन यहीं आकर खत्म हो जाते हैं। राविन मणि घोष का छोटा भाई है—वही मणि घोष, जिससे महिम पहले अभिभावकों की तरह डरता था। मणिघोष ने एम. ए. पास कर लिया है। स्वास्थ्य पहले जैसा ही अच्छा है, पर वह घर-गृहस्थी में नहीं फंसा। देश-सेवा में मस्त है। महिम के पैर छूकर प्रणाम करता है। सातू घोष का वेईमानी का काम छोड़कर महिम स्कूल में मास्टर हुआ था, यह वात मणि ने शायद महिम के ही मुंह से सुनी है। इसीलिए महिम पर उसकी वड़ी श्रद्धा है। कहता है, "आप जैसे ही लोग तो राह दिखाते हैं, तभी तो किसी वड़े काम में कूद जाने का वल मिलता है। उस परिवार की हालत अच्छी है। राविन को पढ़ाने की जिम्मेदारी मणि घोष की ही वजह से लेनी पड़ी।

पर यह अपनी तरह का एक अलग ही परिवार है। राविन वड़ा अच्छा

लड़का है। पढ़ाई में अच्छा है, व्यायाम करता है। शरीर भी बड़ा मजबूत है। कभी झूठ नहीं बोलता। फिर भी उसकी मां को सन्तोष नहीं है। राबिन से कोई गलती हो जाती है तो वह नौकर के जरिए महिम से कहला भेजती हैं। अगर उनकी राय से वह गलती बहुत भारी हुई तो लिखकर भेजती है। साथ ही, एक मोटी-सी छड़ी भी आती है। मालकिन की इच्छा का पालन करके ठीक दस बजे महिम स्कूल की ओर चल देता है।

थोड़ी दूर पर मेस है। उसीके पास स्कूल है। महिम राबिन के घर से चलने पर सीधा मेस में घुस जाता है। रसोईघर के संकरे-से बरामदे में आसन बिछे होते हैं। गिलासों में पानी रखा रहता है। महिम जूते खोलकर और चद्दर अलगनी पर टांगकर खाने के लिए बैठ जाता है। इतने में खाने की थाली आजाती है। बार-बार परोसने का समय नहीं मिलता, इसलिए दाल, सब्जी, आदि सब एक साथ ही परोसकर रसोइया दे जाता है। अब तो महिम की हाथों की कसरत होती है। थाली में पड़े भात के निवाले जल्दी-से-जल्दी मुंह में पहुंचाये जायं। साथ ही मुंह की भी अच्छी कसरत होती है कि जल्दी-जल्दी भात को चबाकर निगल जाना और दूसरा निवाला खाने के लिए मुंह खाली कर लेना। उस समय हाथ और मुंह एक-दूसरे से मानो होड़ लगाते हैं। खाना खत्म करके हाथ-मुंह धोता है और जूता पहनकर चद्दर कन्धे पर डालता-डालता वह सत्र से निकल जाता है। स्कूल की पहली घंटी बज चुकी है। रजिस्टर में दस्तखत बनाकर खड़िया और फुटा लेकर महिम क्लास में चला जाता है।

ब्लैकबोर्ड पर जल्दी-जल्दी त्रिभुज बना देता है। शुरुआत हुई। फिर एक के बाद एक छात्र को बुलाकर सवाल पूछता है। एक ने जबतक दो लाइनें बताई, तबतक उसे बैठने का इशारा करके दूसरे से पूछने लगता है। अगर पहले लड़के का वाक्य खत्म नहीं हुआ तो उसने जहांतक कहा है, दूसरे को वहीं से शुरू करके खत्म करना पड़ेगा। एक लाइन से एक के बाद दूसरे से पूछे, ऐसा नहीं होता। जिससे मन हुआ, पूछ लेता है। इसलिए कक्षा के सभी लड़कों को होशियार रहना पड़ता है। जो पढ़ा है, वह एकदम याद रखना पड़ता है। चौकस रहना पड़ता है। पता नहीं, कब किसकी बारी आ जाय।

ब्लैकबोर्ड के पास खड़ा होकर महिम लगातार एक-के-बाद दूसरे से पूछता जा रहा है—दूसरे वेंच का दूसरा लड़का ! खड़े हो जाओ । हां-हां, तुमसे ही कह रहा हूं, जहां से छूटा है, वहीं से बोलना शुरू करो ।... बहुत अच्छा, बैठ जाओ । आखिरी बेंच का तीसरा लड़का । क्योंजी, तुमने सुना नहीं ? ऐ, उस मोटे लड़के को कह रहा हूं..."

वह छात्र नहीं उठता । महिम ने बार-बार कहा, फिर भी उस लड़के ने सिर नहीं उठाया, महिम बोला, "इसका मतलब है कि तैयारी करके नहीं आये हो ? या नख़रे कर रहे हो ? तुम्हारे जैसे बहुत देखे हैं..."

महिम गरजता है, "मैं कह रहा हूं—खड़े हो जाओ, अभी खड़े हो जाओ ।"—फिर भी वह लड़का बहरा बना बैठा रहता है । महिम को और भी गुस्सा आता है । कहता है, "बदतमीज, वेंच पर खड़े हो जाओ ।"

कक्षा के सारे लड़के जैसे निर्जीव हो गये हों । कहीं से चूं तक की आवाज नहीं सुनाई पड़ती । महिम फुटा लेकर पीछे की वेंच तक जाता है । दो फुटे अच्छी तरह लगा देगा । वह आजकल के कायदे-कानून नहीं मानता । कान पकड़कर वेंच पर खड़ा करके ही मानेगा । लड़के के एकदम पास जाकर महिम ने मारने के लिए फुटा उठाया, फिर रुक गया । चौंककर बोला, "आप ?"

हैडमास्टर सिर झुकाकर लड़कों के बीच में बैठे थे । बिना कुछ बोले ही वह चुप-चाप कक्षा से बाहर चले गये ।

मास्टरों के काम-काज की जांच करने का एक तरीका यह भी है कि छिपकर छात्रों के बीच बैठ जाना । महिम की आंखें कमजोर हैं । वह ध्यान नहीं दे सका, पर और मास्टर देख लेते हैं । बाहर आकर हैडमास्टर ने दाशू से कहा, "आपका कहना ठीक नहीं है । महिमबाबू पढ़ाने में ज़रा भी गफलत नहीं करते । बस, उनके पढ़ाने का ढंग कुछ पुराना है । लड़कों को रट्टा लगवाते हैं । समझाते हुए मैंने उन्हें नहीं देखा ।"

दाशू ने टिप्पणी की, "क्लास में ही लड़के सब समझ जायंगे तो घर में क्यों बुलायंगे ? असली पढ़ाई तो ट्यूशन करने पर होती है ।"

हैडमास्टर ने सिर हिलाकर कहा, "नहीं, वह जान-बूझकर ऐसा करते हों, ऐसा तो नहीं लगता ।" उनकी आंखें बहुत कमजोर हो गई हैं ।

मेरे बहुत पास आजाने पर भी पहचानने में देर लगी।"—कहते-कहते हैडमास्टर हँस पड़े। बोले, "सच दाशूबाबू, मैं तो डर गया था कि कहीं एकाध फुटा मेरे ही जमा न दें। खैर, आपकी बात मैं मानता हूं। नये क्रम में उन्हें ऊपर की क्लास नहीं दी जायगी। उनकी आंखें कमजोर हैं। पढ़ाने में तकलीफ होगी। मैं चित्तबाबू से भी कह दूंगा।"

क्लास से निकलकर महिम तिमंजिले पर जा रहा था। अब तीसरी कक्षा का 'ई' विभाग पढ़ाना है। तिमंजिले पर और भी लोग जा रहे थे। गगनविहारीबाबू बोले, "कल २६ जनवरी है—गणराज्य दिवस। सुना है कि स्कूल में हड़ताल होगी। महिमबाबू, आपने कुछ सुना है?"

बगल से जगदीश्वरबाबू बोल उठे, "आपके मुंह में घी-शक्कर। देखिये न, छुट्टी नहीं मिलती। मार्च तक लगातार ऐसा ही चलेगा। एकाध दिन यह सब हो जाता है तो जान बचती है।"

महिम चिन्तित हो उठा। एकाएक बोल पड़ा, "गगनविहारीबाबू, आंखों को लेकर तो बड़ी मुसीबत हो गई। अब तो पास की चीजें भी धुंधली दिखाई देती हैं।"

गगनविहारीबाबू बोले, "शायद जाला पड़ गया है। कटवा लीजिये, ठीक हो जायगा।"

जगदीश्वरबाबू ने कहा, "हां, जाड़ा ही तो जाला कटवाने का ठीक समय है। अस्पताल चले जाइये। दूसरी कक्षा के 'बी' विभाग के सुशील सरकार के बाप सर्जन हैं। उन्हींसे मिल लीजिये।"

महिम बोला, "बाबा रे बाबा, तब तो जान ही निकल जायगी। ऐसे समय अगर अस्पताल चला जाऊं तो लड़के और उनके माता-पिता मारने नहीं दौड़ेंगे?" फिर ज़रा हँसकर बोला, "अगर मैं मर भी जाऊं तो सावित्री की तरह ये लोग यमराज का पीछा नहीं छोड़ेंगे। कहेंगे कि फाइनल परीक्षा खत्म होने तक इन्हें नहीं जाने देंगे।"

तीसरी कक्षा के 'ई' विभाग के सामने आकर सब खड़े हो गये। जगदीश्वरबाबू ने महिम का हाथ पकड़कर कहा, "अरे, ज़रा ठहर भी जाइये, इतनी जल्दी क्या है?"

कलाई की घड़ी की ओर देखकर महिम ने कहा, "तीन मिनट की

वैसे ही देर हो गई है।"

हाथ छुड़ाकर महिम कक्षा में घुस गया। जगदीश्वरबाबू ने नाराज होकर कहा, "जैसे हम लोगों की क्लास ही नहीं है। क्लास है तो क्या घोड़े की तरह हमेशा जुते रहेंगे। सवेरे से ही पढ़ाना शुरू कर देते हैं। क्या जी नहीं ऊबता ?"

जगदीश्वरबाबू और गगनविहारीबाबू खड़े-खड़े कल की हड़ताल के बारे में बातें कर रहे हैं—"सुना है कि प्राची शिक्षालय में तो छुट्टी हो रही है। सीधे-सीधे गणराज्य दिवस तो नहीं कह सके, इसलिए कह दिया कि अध्यक्ष के चचा या जाने कौन मर गये हैं, उन्हीं के शोक में छुट्टी हो रही है। हमारे स्कूल में भी तो इतने लोग हैं। किसी के मरने-जीने का बहाना नहीं किया जा सकता ? स्कूल खोलकर बेकार का बखेड़ा खड़ा करेंगे।"

गगनविहारीबाबू बोले, "अरे भाई, स्कूल क्या खुशी से खोल रखा है ? लड़के भी छुट्टी चाहते हैं। हम लोग भी छुट्टी देना चाहते हैं, पर अभागे अभिभावक जो गड़बड़ करते हैं। अंग्रेजों के जितने खैरख्वाह हैं, सबने अपने लड़कों को इसी स्कूल में भर्ती किया है। गणराज्य-दिवस मनाने के लिए छुट्टी हो तो ऐसे लोगों की जान ही निकल जायगी।"

जगदीश्वरबाबू ने कहा, "मैं कहे देता हूं कि कल किसी भी तरह स्कूल नहीं लगेगा। लड़के जल्दी-जल्दी खा-पीकर आयंगे और मौका पाकर पार्क में गोली खेलेंगे।"

गगनविहारीबाबू ने कहा, "सिनेमा की शूटिंग देखने के लिए टालीगंज में स्टूडियो के सामने भीड़ लगायंगे। लड़के खूब तरक्की कर रहे हैं न !"

तभी दाशू आगये। पीछे-पीछे जमादार भी था। उन्हें देखकर दोनों खिसकने ही वाले थे कि दाशू एकदम उनके सामने आ खड़े हुए।

दाशू ने टोककर कहा, "सुनिये जगदीश्वरबाबू, इससे पहले तो आपकी पांचवीं कक्षा थी न ? इतनी जल्दी क्लास छोड़कर कैसे आये ?"

जगदीश्वरबाबू जैसे आसमान से गिरे। बोले, "किसने कहा ? मैं तो अभी-अभी आ रहा हूं। गगनविहारीबाबू, आप ही बताइये न।"

दाशू ने कहा, "शोर के मारे तो बगलवाली क्लास में पढ़ाना मुश्किल होगया था।"

"बनवारी ने कहा है ? उस चुगलखोर की बात पर आप ध्यान न दें। जब वह खुद क्लास में बैठा रहता है, तब भी इतना शोर होता है कि मैं पढ़ा नहीं पाता। गगनविहारीबाबू, सही है न ?"

"इस घंटे को भी शुरू हुए पांच-सात मिनट हो चुके हैं, पर अभी आप लोग खड़े-खड़े बातें ही कर रहे हैं!" कहकर दाशू वहां और नहीं रुके। कहीं किसी लड़के ने उल्टी कर दी थी, वहीं चले गये।

आंखों से ओझल होते ही जगदीश्वरबाबू दाशू पर एकदम फट पड़े—"क्यों गगनविहारीबाबू, इतना डर काहे का ? दौड़ क्यों रहे हैं ? कोई सिर उतार लेगा क्या ? पांचवीं क्लास जल्दी छोड़ी है, तीसरी में देर से जा रहा हूं! क्या कर लेगा मेरा—यही कहने का मन हो रहा था, पर चुप रह गया। सुपरिन्टेन्डेन्ट बना है। खुद तो एक भी घंटा नहीं पढ़ाता, बेकार मीनमेख निकालना और मास्टरों को तंग करना।"

चार बजे छुट्टी होते ही महिम फिर ट्यूशनों पर चल पड़ा।

जगदीश्वरबाबू ने पीछे से आवाज दी, "ओ, महिमबाबू, आपने नोटिस देखा ? प्राची शिक्षालय तक ने तो छुट्टी कर रखी है, पर हमारे यहां तो सब-कुछ उलटा है। कल साढ़े नौ बजे, यानी रोज से एक घंटा पहले ही हाजिर होना पड़ेगा।

महिम आगे बढ़ गया। सिर हिलाकर 'हूं'-भर कह दिया। उसकी बात तो नहीं सुनाई पड़ी, पर सिर हिलाना दीख गया।

"दौड़ क्यों रहे हैं, साहब ? कौन आपका पीछा कर रहा है ?" फ्ताकीबाबू ही-ही करके हँसते हुए बोले, "एक आदमी बिना देखे रास्ता पार कर रहा था। वह मोड़ पर गाड़ी के नीचे दब गया, फिर आपकी तो आंखें भी कमजोर हैं।"

इस बार भी महिम ने सिर हिलाकर 'हूं' कह दिया।

बात करने की फुर्सत ही कहां है ? गाड़ी के नीचे आजाने के डर से भी धीरे-धीरे रास्ता पार करने का समय नहीं है। यह रास्ता पार करके बड़े रास्ते से एक गली निकलती है—ग्वालपाड़ा। वहींपर बिहारी हलवाई की दूकान है। वहां गरम-गरम कचौड़ियां भी बनती हैं। हलवाई महिम

मास्टर को पहचानता है, उसके रास्ता पार करते ही आलू-कद्दू का साग और तीन कचौड़ियां पत्ते में रखकर पकड़ा देता है। महिम कचौड़ी खाता रहता है और चलता रहता है। गली खतम होते ही हरि चाटुर्ज्या स्ट्रीट आजाती है। इतनी देर में कचौड़ियां खत्म हो जाती हैं। सारा काम घड़ी की सुइयों के अनुसार होता है। वहीं मोड़ पर पानी का नल है। वहीं पत्ता फेंककर महिम ओक से पानी पी लेता है फिर दो मकान छोड़कर वह बरामदे वाले मकान में पहुंच जाता है। बाहरवाले कमरे में किताब खोले छात्र बैठा है। क्या पूछना है, इसपर पहले से ही निशान लगा रखा है। समय का अपव्यय बिल्कुल नहीं होना चाहिए। लड़का सचमुच अच्छा है, नहीं तो इस समय खेलकूद छोड़कर मास्टर का इन्तजार करता ?

इसके बाद महिम सुलता को पढ़ाने जाता है। वह एक प्याला चाय ला देती है। गरम-गरम चाय पीकर महिम में कुछ फुर्ती आजाती है। सुलता को पढ़ाकर अलक घोष को पढ़ाने जाता है। सातू घोष का घर काफ़ी दूर है।

रात साढ़े दस बजे आखिरी छात्र को पढ़ाकर महिम किताब बन्द करके खड़ा हो जाता है। पर आज ऐसा नहीं हो पाया। शरारती छात्र रेखागणित के तीन अतिरिक्त सवाल दिखाकर कहने लगा कि इन्हें समझा दीजिये। छात्र के बाप उसी कमरे में बैठे इतनी रात तक शायद दफ्तर का कुछ काम निपटा रहे थे। महिम को फिर से बैठना पड़ा। ग्यारह बज गये, तब छुट्टी मिली। ट्राम बन्द हो गई। रास्ता तो लम्बा नहीं है, पर महिम इस समय ट्राम से ही घर लौटता है।

काफी रात होगई थी, लोग सिनेमा से लौट रहे थे। भीड़ में दाशू को देखकर महिम चौंक पड़ा। स्कूल का शिक्षक सिनेमा देखने आया है। अकेला नहीं आया है, साथ में उसकी बीवी भी है।

महिम ने बुलाया, "दाशूबाबू।"

कलकत्ते में जब पहले-पहल घर लिया था, तब एक दिन महिम भी सरला को लेकर सिनेमा देखने गया था। पर मास्टर जो है। पढ़ाने के अलावा कुछ और करने का मौका ही कहां मिलता है! फिर उसमें इज्जत भी तो घटती है। उसके बाद महिम ने फिर कभी सिनेमा नहीं देखा।

"दाशूबाबू, यहां इधर देखिये।"

दाशू ने महिम को पहले ही देख लिया था। वह चुपचाप खिसकने के चक्कर में था। रात बहुत हो गई थी। अब इस समय पत्नी के साथ खड़े होकर कुछ कहने का समय थोड़े ही था। पर महिम तो ट्यूशन पढ़ाकर घर जा रहा था। बिना कुछ देर बातें किये थोड़े ही जायगा।

"सिनेमा देखकर आ रहे हैं ? विज्ञान का कितना अनोखा आविष्कार है। आपकी भाभी को लेकर एक बार मैं भी देखने आया था। दशमहाविधाप्त, काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, धुमावति, एक के बाद एक आविर्भूत होती रहीं। जितने बड़े-बूढ़े थे, गद्‌गद् होकर 'मां-मां' करने लगे। पर मेरे पीछे से ही कोई सीटी बजाने लगा, गंदी-गंदी बातें करने लगा। थोड़ी देर बाद बत्ती जली, तब पीछे मुड़कर जानते हैं क्या देखा ? दूसरी कक्षा के 'सी' विभाग के दो लड़के बैठे थे। उन्होंने मुझे नमस्कार किया, पर मैं तो शरम के मारे गड़ गया। आपकी भाभी अब भी कहती हैं कि चलो, एक दिन और देख आयें। पर मैं कह देता हूं कि एक ही दिन देखकर बहुत पा लिया। अब नहीं।"

दाशू बोले, "रात के खेल में लड़के नहीं रहते। फिर जब मैं सिनेमा हाल में रहता हूं तो क्या मजाल कि कोई लड़का चूं तक कर जाय।"

दाशू की पत्नी कुछ दूर हटकर खड़ी थी। दाशू ने उसकी ओर देखकर कहा, "तुम चलो, मैं आरहा हूं। एक रिक्शा ही ले लो।"

चले जाने का इतना स्पष्ट इशारा पाकर भी महिम ने उन्हें नहीं छोड़ा। बोला, "आप लोगों ने आज क्या नोटिस निकाला है ? मैं तो नहीं देख पाया।"

"कल एक घंटे पहले ही हाजिरी है। गणराज्य-दिवस का झमेला है। बाहरी लोग आकर फाटक पर खड़े होकर रुकावट डालेंगे। उससे पहले ही पहुंचकर लड़कों को अन्दर कर लेना है!"

इतना कहकर सुपरिन्टेन्डेन्ट दाशू ने कहा, "आप नोटिस कब देखते हैं। कभी भी स्कूल की कोई चीज आपने देखी है क्या ? मन तो बाहर लगा रहता है। छुट्टी की घंटी हुई नहीं कि आप लोग दौड़ना शुरू कर देते हैं।"

उनकी बात पर महिम नाराज नहीं हुआ। कातर स्वर में कहने लगा,

"सो तो आप ठीक कह रहे हैं, दाशूबाबू । सच कहता हूं, मुझसे अब काम नहीं होता । बी. ए. पास किया । हिसाब में आनर्स पाया । स्कूल-कालेज में कभी खेल-कूद में शामिल नहीं हुआ । बस, पढ़ता ही रहा । अब देख रहा हूं कि अगर आनर्स पाने के लिए जी-जान से न पढ़कर कुछ खेल-कूद में मन लगाया होता तो आज वह ज्यादा काम आता । जितना पढ़ाता हूं, उससे तिगुना दौड़ता हूं । अब सब छोड़ दूंगा । यह काम मुझ जैसे आदमी के लिए नहीं है ।"

थोड़ी दूर पर एक रिक्शा जा रहा था । दाशू ने उसे रोक लिया और पत्नी से कहा, "चलो, बैठो, बहुत रात होगई ।" पत्नी को बैठाकर दाशू भी बैठ गया । वैसे तो पैदल ही जाता, पर महिम से जान छुड़ाने के लिए रिक्शा करना पड़ा । तीन आने पैसे बेकार गये ।

महिम के घर पहुंचकर कुण्डी हिलाते ही दरवाजा खुल गया । दीपाली बैठी जग रही थी । ओह, इतनी छोटी-सी लड़की को कितना हैरान होना पड़ता है ! भीतर जाकर महिम ने देखा, शुभव्रत भी जीजी के साथ बैठा था । काफी रात बीत गई थी । दोनों इतनी रात तक प्रतीक्षा करते बैठे थे ।

पिता को देखकर दीपाली रो पड़ी, बोली, "थोड़ी देर पहले मां को जाने क्या होगया था । पुन्न को खिलाकर महाराजिन मौसी चली गई । शुभो की पढ़ाई खतम हुई तो हम दोनों खाने बैठे, तभी धड़ाम से कोई आवाज सुनाई पड़ी । दौड़कर देखा कि मां गिर गई थीं । मुंह से बात नहीं निकल रही थी । आंखें भी जाने कैसी उलट-सी गई थीं और गले से गों-गों आवाज निकल रही थी । शुभो रोते-रोते गोविन्द डाक्टर के यहां दौड़ा । भाग्य से वह घर में ही थे । उन्होंने आकर दवाई दी । कह गये हैं कि सुबह आपको जाकर उनसे मिल लेना है ।"

महिम ने व्यग्र होकर पूछा, "अब तबीयत कैसी है ? सो रही हैं कि जग रही हैं ? तुम लोग तो बच्चे ही हो । क्या कर सकते हो ! मुझे भी इन तीन महीने में मरने की तक फुरसत नहीं है । एक मिनट भी छुट्टी नहीं मिलती । बेहाला जाकर तुम्हारी बुआ को लाऊंगा ।"

कहते-कहते महिम जूते-कपड़े उतारने लगा । कमरे में चौकी पर

सरला पड़ी है। उसके एक ओर छोटी-सी बच्ची और दूसरी बगल पुण्यव्रत। पुण्यव्रत की भी आंख नहीं लगी है। शायद सो गया था। अब आहट मिलने पर जाग गया है। मां की हालत देखकर सहम-सा गया था। चेहरे पर अभी भय की छाप है।

महिम ने पत्नी से पूछा, "क्यों क्या बात है ? अब तबीयत कैसी है ?"

सरला के चेहरे पर हँसी की रेखा उभर आई। बोली, "बच्चों की बात की चिन्ता मत करो। आज तो मैं और दिनों से अच्छी हूं। मैं ही एक गलती कर बैठी थी। दीपाली दिन-भर काम करते-करते सूखती जा रही है। अभी वह खाने बैठी तो मैंने सोचा कि अच्छी तो हूं ही, लाओ थोड़ा-सा पानी गरम करके बच्ची का दूध बना लूं। पर उठते ही सिर चकरा गया। बच्चे तो बच्चे ही ठहरे ! डाक्टर-वैद्य लाकर हल्ला मचा दिया।

महिम ने पत्नी का बदन छूकर देखा तो एकदम बोला, "बुखार से तुम्हारी देह तप रही है।"

"अरे, वह सबकुछ नहीं है। रात के समय सिर पर थोड़ा पानी डाल लिया था। शायद उससे कुछ बुखार हो आया है।"

इतना कहकर सरलाबाला ने रोग की बात टाल दी और विनोद से पुन्न की ओर देखती हुई बोली, "यह कौन हैं, पुन्न ? इन्हें पहचानते हो ?"

महिम ने कहा, "कैसी बात कर रही हो ? पुन्न मुझे नहीं पहचानेगा ?"

"तुम्हीं बताओ, कैसे पहचानेगा ? तुम्हें देख ही कब पाता है ? जब तुम सबेरे जाते हो, यह सोता रहता है और रात को लौटते हो तब भी सोता मिलता है। एक रविवार की छुट्टी होती है, सो भी ट्यूशनों से पीछा नहीं छूटता। बाप-बेटे की भेंट ही कब हो पाती है ?"

महिम ने बेबसी से कहा, "क्या करूं, फिर भी तो नहीं बनता। कई ट्यूशन तो सप्ताह में केवल चार ही दिन के हैं। सोम से शनिवार तक तीन दिन तो पढ़ा देता हूं, बस एक दिन इतवार का रह जाता है। पैसे की बड़ी जरूरत है। बेटी की शादी, लड़के की पढ़ाई। हां, मैट्रिक तक ऐसा ही चलेगा, फिर जोर कुछ कम पड़ जायगा।"

कहते-कहते महिम की आवाज में थोड़ा गर्व झलक उठा। बोला,

स्कूल में तो क्लासों के लिए कार्यक्रम बनता है, पर मुझे तो ट्यूशनों के लिए वैसा करना पड़ता है। फिर भी देखो, कितने ही मास्टर एकाध ट्यूशन के लिए भी मारे-मारे फिरते हैं।"

दीपाली और शुभव्रत की ओर देखकर महिम बोला, "तुम लोग यहां क्यों खड़े हो ? जाओ, सो जाओ। इतनी रात तक जग-जगकर बीमार पड़ जाओगे तो क्या मैं नौकरी छोड़कर बुत बना जगन्नाथ की तरह घर में बैठा रहूंगा ?"

सरला बोली, "दीपाली आखिर अकेले कितना कर सकती है। कितने दिनों से ननदजी को लाने की बात हो रही है !"...

"तारकदादा को चिट्ठी भेज दी है। मुझे तो देख ही रही हो, जाने का समय ही नहीं मिलता। तुम बीमार पड़ी हो, पर दो घड़ी तुम्हारे पास भी नहीं बैठ पाता। सुन रहा हूं कि स्कूल में कल हड़ताल होगी। अगर छुट्टी मिल गई तो जाकर कल ही दीदी को ले आऊंगा।"

महिम का दाहिना हाथ अपने दोनों हाथों में सरला ने दबा लिया। एकाएक उसकी आंखों से आंसू टपक पड़े। साड़ीके अंचल से आंसू पोंछकर सरला ने कहा, "सुनो, एक बात कह रही हूं। कौन जाने फिर कभी..."

पति के चेहरे पर नजर पड़ी तो सरला जल्दी-से सम्भल गई और बात बदलकर बोली, "अब तो मैं करीब-करीब ठीक ही हो गई हूं। सब ठीक-ठाक रहने पर तो फिर कुछ कहने-सुनने की याद ही नहीं रहती, इसीलिए कह रही हूं कि मेरे शुभो और पुन्न कभी मास्टर न बने।"

महिम भावना-मिश्रित आवेश के स्वर में बोला, "वे ही क्यों, कोई भी कभी स्कूलमास्टर न बने।"

इतना कहकर महिम ने दूसरा प्रसंग छेड़ दिया। बोला, "तुम ठीक हो जाओ, फिर सिनेमा देखने चलेंगे। एक बार हम दोनों गये थे। याद है न ? मैट्रिक का इम्तहान खत्म हो जाय तो शाम के लिए सिर्फ एक ही ट्यूशन रखूंगा। उसे पढ़ाकर दोनों चलकर सिनेमा देखेंगे। ज्यादा रात बीत जाने पर छात्रों का झमेला नहीं रहता।"

टन्-टन् करके किसी घड़ी ने बारह बजाये। महिम को अभी कुछ काम करने को बाकी थे। ढक्कन हटाकर वह जल्दी-जल्दी भात खाने लगा,

फिर ऊपर के छोटे कमरे में चला गया। बत्ती जलाकर बड़ी रात तक काम करता रहा। बत्ती जलने से दूसरों की नींद में बाधा पड़ती है, इसीलिए इसी कमरे में एक पतले से गद्दे पर बैठकर महिम काम करता रहा। काम खतम होने पर उसीपर सो भी जाता है।

अब काम है दिन-भर का हिसाब लिखना। दीपाली ने मामूली ढंग से लिख तो रखा है, पर अब महिम एक-एक पाई का हिसाब बड़ेवाले खाते में उतारेगा। सालों से वह हर रोज हिसाब लिखता आरहा है। मोती जैसे सुन्दर अक्षर हैं। सभी हिसाबों का खाता यहीं लकड़ी के बक्से में रखा हुआ है। अदृश्य विधाता के लिए महिम जैसे सही कैफियत लिखता जा रहा है। जिन्दगी के एक पल का भी महिम ने अपव्यय नहीं किया। उसका एक पैसा भी अन्याय से अर्जित नहीं है और न उसने कभी एक पाई का भी बेकार खर्च किया है—ये खाते इसी के अकाट्य प्रमाण हैं।

हिसाब लिखने के बाद भी कभी-कभी कमरे में बत्ती जलती रहती है। महिम पढ़ता रहता है—नेस्फील्ड का व्याकरण, भूगोल, मैकेनिक्स। ट्यूशनों पर पढ़ाने के लिए इन सबकी जरूरत पड़ती रहती है। आंखें कमजोर हैं, इसीलिए किताब को आंखों के बिल्कुल करीब लाकर पढ़ता है।

२१

स्कूल में साढ़े नौ बजे हाजिरी देने का हुक्म हुआ है, रोज से ठीक एक घंटे पहले। मालिक को तो लगता है कि घंटा-भर आगे-पीछे आ जाने में मास्टरों के लिए क्या मुश्किल है, पर बात वास्तव में ऐसी नहीं है। ट्यूशनों के मारे उन्हें फुरसत कहां रहती है! उनका समय एकदम बंधा रहता है।

महिम के जल्दी करते-करते भी स्कूल पहुंचने में कुछ देरी हो ही गई। इतनी भीड़ थी कि रास्ता काट पाना मुश्किल हो रहा था। महिम आगे बढ़ा तो फाटक के पास से कई आवाजें आईं—"अन्दर मत जाइये, सर!

अन्दर मत जाइये, सर ।"

पर अन्दर तो जाना ही पड़ेगा। न जायं तो कहेंगे कि महिम मास्टर छिप-छिपकर स्वदेश-प्रेम दिखाता है, आज हड़ताल करके स्कूल नहीं आया है। नौकरी में देशभक्ति तो गाली है। कुहनी से रास्ता बनाते-बनाते महिम आगे बढ़ गया। लड़के फाटक के सामने जमीन पर लेटे हैं, कहते हैं—"हम लोगों के ऊपर से जाना चाहें तो जा सकते हैं, सर। यों नहीं जाने देंगे।" उनमें से एक महिम का परिचित भी है। उसका नाम है ध्रुव। यहीं से पास करके अब कालेज में पढ़ रहा है। ध्रुव बहुत बड़े अफसर का बेटा है, बाप हजार रुपये से ऊपर तनख्वा पाता है।

महिम घबड़ा गया। बहुत-से मास्टर तो अन्दर चले गए हैं, भीतर-वाले हाते से वे अब दिखाई पड़ रहे हैं। खुले फाटक के दोनों ओर आदमियों की कतार दीवार की तरह खड़ी है। बाहर तो स्वयंसेवकों ने रास्ता रोक रखा है। मास्टर या छात्र, किसीको भी नहीं घुसने देंगे। अन्दर मास्टर और दरवान आदि के साथ दाशू खड़े हैं, जिससे छात्रों और शिक्षकों के अलावा कोई बाहरी आदमी भीतर न आ सके। ऐसा लगता था मानों लड़ाई के मैदान में दोनों सेनाएं आमने-सामने तैयार खड़ी हैं। हैडमास्टर और चित्तबाबू दूसरी मंजिल की खिड़की पर खड़े हैं। शायद ऊपर खड़े-खड़े दूर से युद्ध पर अपना असर डाल रहे हैं। बड़ी मुसीबत है। महिम को बुरा लगा। एक ट्यूशन का नागा करके वह आया है, फिर भी काम नहीं बन रहा है। हैडमास्टर ऊपर से देख रहे हैं कि कौन आया, कौन नहीं आया। शायद यह सब नोट भी करते जा रहे हैं। घन्टा-भर पहले आने से महिम शायद अन्दर जा सकता था, पर तब तो एक और ट्यूशन का नागा हो जाता।

ऊपर से हैडमास्टर ने जोर से कहा, "घंटा बजा दो। साढ़े दस बज गये। मास्टर लोग अपनी-अपनी कक्षा में चले जायं।"

महिम छटपटा रहा है कि इस व्यूह को किस कौशल से भेदकर भीतर जाया जा सकता है! जाने किधर से आकर भूदेवबाबू ने महिम का हाथ पकड़ लिया, दबी आवाज में कहा, "चले आइये। देखते नहीं कि साहब, हवा का रुख क्या है। स्कूल में नहीं घुस पाये तो क्या फांसी पर लटका देंगे?"

महिम और भूदेव ही नहीं, और भी कई मास्टर कुछ दूरी पर निरापद स्थान पर खड़े हैं। कुछ लड़कों की भी भीड़ है। भूदेव बोले, "अन्दर नहीं जा सके। पर वाहर भी तो काम किया जा सकता है। वह देखिये, दुमंजिले की खिड़की से दो जोड़ी आंखें टकटकी लगाये देख रही हैं। काम दिखाइये, साहब, कुछ करके तो दिखाइये!" कहकर ऊपर की ओर मुंह करके भूदेव-वावू चिल्ला पड़े—"मैं कहता हूं, लड़को, भीड़ मत लगाओ। अभी पुलिस आकर अश्रुगैस छोड़ेगी। चलो-चलो, अन्दर चलो। घन्टा वज गया। अव पढ़ाई शुरू होगी।"

भूदेववावू ने दो-एक लड़कों को धक्का भी दिया, पर विपरीत दिशा में। साथ ही दवी आवाज में वोले, "घर जाओ। आज ही स्कूल में पढ़कर तो विद्यासागर वन नहीं जाओगे।"

एकाएक शोर मचा। तीसरी मंजिल की छत पर से आवाज आई—"वन्देमातरम्!" छत की दीवार पर एक लड़के ने तिरंगा झंडा फहरा दिया। उसके गोरे शरीर पर धूप चमक रही थी। वहुत दूर से शायद ट्राम की लाइन से भी वह दिखाई पड़ रहा है। मणि घोष के अलावा और कौन होगा? वह जान की परवा नहीं करता। झंडा फड़फड़ाता हुआ उड़ रहा है। विजली से वचानेवाली लोहे की छड़ के साथ उसने धीरे-धीरे झंडे को वांध दिया और मणि तीसरी मंजिल से दूसरी मंजिल पर, फिर पहली पर और फिर रास्ते पर आगया और सवकी ओर देखते हुए मुस्कराने लगा। रास्ते पर वूढ़े-वच्चे भीड़ लगाकर झंडे की ओर देख रहे थे। वन्दे-मातरम् का नारा वार-वार गूंजने लगा। स्कूल की ओर से सव चुप हो गये। खिड़की पर भी कोई नहीं दिखाई पड़ रहा था। ऐसा भी नहीं लगता कि अन्दर कोई है।

झंडा फहराकर स्वयंसेवकों का दल वहां से चला गया तो महिम, भूदेव और दूसरे लोग स्कूल के अन्दर पहुंचे। अव कोई वाधा नहीं थी। फाटक पर एक के वजाय दो-दो ताले लग गये। हैडमास्टर नाराजी से चिल्ला रहे हैं—"वाहर का आदमी अहाते के अन्दर कैसे आया, सो भी इतना वड़ा झंडा लेकर? सीढ़ियों से ऊपर तक चढ़ गया, फिर भी किसी-

को दिखाई नहीं दिया ? सभी आंखें मूंदे रहते हैं ? देखना, इस वार मैं मजा चखाकर रहूंगा। मंत्री से कहकर एक-एक को निकलवा वाहर करूंगा।"

चित्तवावू चपरासियों की तरफदारी करते हुए वोले, "वे क्या करते ? मणि घोष वहुत शरारती है। इसी स्कूल का छात्र था। दरवान, चपरासी अपने काम में लगे थे, जमादार कमरे खोलकर झाड़-वुहारी कर रहा था, उसी समय शायद वह पीछे की ओर से अहाते की नीची दीवार लांघकर भीतर आकर छिप गया होगा। जव सामने की ओर भीड़ इकट्ठी होगई तो वह ऊपर पहुंच गया होगा।"

नवीन पंडितजी ने अखवार को लपेटते हुए कहा, "सामने और पीछे, दोनों ओर से एक ही साथ हमला किया। इसीसे हम लोग कावू में आगये, नहीं तो क्या मजाल कि सामने से एक मक्खी भी आई हो !"

चित्तवावू वोले, "जो होगया, सो होगया, अब आगे की सोचिये।"

"सोचने को क्या है !" दाशू गरज उठे—"आप हुक्म-भर दीजिये। अभी झंडा उतारे देता हूं।"

हैडमास्टर चिन्तित होकर सिर हिलाने लगे, "झंडा छत के ऊपर है, लोग देख लेंगे। झंडे का अपमान होते देखकर लोग इकट्ठे हो जायंगे। वात फैलते-फैलते अखवार के दफ्तर में पहुंच जायगी।"

चित्तवावू ने भी सहमति प्रकट की, "ठीक ही है, जिद्द से काम नहीं वनेगा, दाशू। झंडे को दिन-भर पड़ा रहने दो, रात को दरवान हटा देगा।"

पर हैडमास्टर घवराये स्वर में कहने लगे, "देखिये तो, कैसी मुसीवत आ गई है ! इधर के किसी स्कूल में ऐसा नहीं हुआ। प्राची शिक्षालय तो वन्द कर दिया गया था, पर न्यू माडेल खुला है। न्यू माडेल के नयनवावू लम्बी-चौड़ी हांक रहे थे—वड़े-वड़े आदमियों के लड़के पढ़ते हैं। हमारे यहां वन्देमातरम् की गुंजाइश नहीं है। कालाचांदवावू, आप एक वार घूम-घामकर ज़रा देख तो आइये। अगर दूसरे किसी स्कूल में भी ऐसा ही हुआ होगा तो कमेटी के सामने जान वच जायगी। शिक्षकों की तनख्वा वढ़ाने के लिए जांच भी इसी समय हो रही है !"

महिम ने कक्षाओं में घूम-घामकर आकर कहा, "कक्षाओं से लड़के तो गायव हैं। क्या करूं, चित्तवावू, घर चला जाऊं ?"

भूदेवबाबू बोले, "चले कैसे जायंगे, साहब ? नवीन पंडितजी के यहां चाय मंगाई जा रही है । गगनबिहारीबाबू की नम्बरों की सूची खो गई थी। फकीरचंद ने ढूंढ़ निकाली, सो उनसे एक रुपया वसूल किया गया है। चाय आ रही है ।"

करालीकान्तबाबू ने कहा, "आप पागल हो रहे हैं क्या ? महिमबाबू चाय पीने के लिए बैठेंगे ? इतनी देर में तो वह दो ट्यूशन निपटा लेंगे !"

महिम ने सूखी आवाज में कहा, "नहीं, पढ़ाने के लिए नहीं, घर में पत्नी बहुत बीमार है । अगर छुट्टी मिल जाय तो बेहाला जाकर बड़ी बहन को लाऊंगा ।"

चित्तबाबू कार्यक्रम देखते हुए बोले, "दूसरी 'बी', पहली 'ए', चौथी 'डी' ! नहीं, इन कक्षाओं के लड़के नहीं आये हैं । दोपहर की आधी छुट्टी के बाद है तीसरी 'बी' । हां, तीसरी 'बी' में पांच-छः लड़के हैं ।"

तीन-चार अध्यापक एकसाथ बोल उठे, "तो दोपहर की आधी छुट्टी के बाद भी स्कूल लगेगा क्या ?"

हैडमास्टर ने गम्भीर होकर कहा, "स्कूल चार बजे तक चलेगा । हां, जिनकी कक्षाओं में एक भी लड़का नहीं आया है, वे जा सकते हैं । जिस कक्षा में एक भी लड़का होगा, उसे पढ़ाना पड़ेगा ।"

चित्तबाबू बोले, "आपको भी तो तीसरी 'बी' पढ़ानी है, भूदेवबाबू, अभी इसी घंटे में । आप कक्षा में नहीं गये, यहां बैठे हैं !"

भूदेवबाबू जैसे आसमान से गिर पड़े । बोले, "मेरी ? नहीं तो, मेरी कक्षा कहां है ?"

फिर जेब से डायरी निकालकर देखी, "ओहो, हफ्ते में दो दिन तीसरी 'बी' । हां, आज भी तो है। ऐसी बढ़िया महफिल छोड़कर जाना पड़ेगा ।" भूदेवबाबू मुंह लटकाकर खड़े हो गये । बोले, "विनोद, अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका के दो नक्शे क्लास में भेज देना ।"

कक्षा में जाकर चेहरे पर बनावटी मुस्कराहट लाते हुए भूदेवबाबू ने कहा, "तुम कितने जने आये हो ? बहुत अच्छे ! किसी कक्षा में कोई भी नहीं आया , पर तुम लोग खूब आये !"

लड़के एक-दूसरे से बड़ाई पाने के लिए बोलने लगे, "बड़ी मुश्किल

से घुसा, सर। फाटक के सामने लोग लेटे थे, तभी ख्याल आया कि पीछे की ओर से दीवार नीची है। उसे ही लांघकर अन्दर आगया। हम चार-पांच जने आगये तो स्वयंसेवकों को पता लग गया। फिर क्या था, वे शोर मचाते हुए आगये। उसके बाद कोई नहीं आ सका।"

भूदेवबाबू ऊंची आवाज में तारीफ करने लगे, "अच्छा-अच्छा, तुम लोगों में सचमुच ही पढ़ने की लगन है।"

लड़के कुछ और जोश से अपनी बहादुरी का बखान करने जा रहे थे, पर भूदेवबाबू ने उन्हें रोक दिया, "इतनी मुसीबत उठाकर आये हो तो पढ़ाई होनी ही चाहिए। अफ्रीका का नक्शा बोर्ड पर टांग दो।"

लड़के कहने लगे, "अफ्रीका तो चौथी क्लास में ही खत्म कर लिया था, सर।"

"पुराना पाठ ही पूछूंगा। पढ़-लिखकर ऊपर की कक्षा में आगये हो, अब कितना याद रह गया है, यह भी जान लेना जरूरी है। अफ्रीका के बाद दक्षिणी अमरीका पूछूंगा, वह नक्शा भी लाया हूं। जगह का नाम लेने के साथ-साथ उसे नक्शे में दिखाना होगा। ओहो, डंडी लाना भूल गया। अच्छा, मैं ले आता हूं। अगर किसीसे एक भी गलती हुई तो कसकर पिटाई करूंगा। तीसरी में आकर क्या समझ रखा है अपनेको? अगर गलतियां हुई तो समझूंगा कि नकल करके पास हुए हो। पीटते-पीटते खाल उधेड़ दूंगा। ठहरो, मैं अभी आता हूं।"

इतना कहकर भूदेवबाबू बाहर की ओर चले, फिर पीछे मुड़कर बोले, "तबतक चुप बैठे-बैठे किताब पढ़ो। नक्शे में दिखाने लायक जगहें याद करलो। नदी, पर्वत, झील, राजधानी, सब पूछूंगा।"

विनोद के पास से भूदेव ने डंडी ले ली। वह ऊपर से मोटी और नीचे की ओर पतली है। इसीके सहारे नक्शा दिखाया जाता है और जरूरत पड़ने पर यही बेंत के भी काम में आती है। कक्षा में बेंत लाना बन्द हो हो गया है, पर डंडी, स्केल, ये सब अस्त्र अभी तक चालू हैं।

हैडमास्टर और चित्तबाबू इतनी देर में अपने कमरे में घुस गये। आज की घटना की रिपोर्ट कितनी कम करके मंत्री के पास भेजी जाय, इसीपर सलाह-मशविरा हो रहा था। फिलहाल उस ओर से कोई आफत

नहीं आयगी । भूदेवबाबू इधर-उधर देखकर नवीन पंडित के पास पहुंच गये । चाय आगई थी । अफीम की गोली मुंह में डालकर पंडितजी धीरे-धीरे चाय की चुस्की लेने लगे और लड़ाई में हारते-हारते अंग्रेज किस तरकीब से जीत गये, इसीका विवरण देने लगे । वैठने की जगह नहीं थी । सिर्फ दो ही कुर्सियां थीं । पर नवीन पंडितजी को घेरकर मास्टरों ने भीड़ लगा रखी थी ।

आत्मतुष्टि की हँसी हँसते हुए सबकी ओर देखकर पंडितजी ने कहा, "अखबार तो बहुत-से लोग खरीदते हैं, पर पढ़ने का तरीका कितनों को मालूम है ? अखबार पढ़ना भी सीखना पड़ता है । जो बातें छपती हैं, सब-की-सब झूठ होती हैं । अखबार में सच्ची खबरें नहीं छपतीं । किसकी मजाल है कि छापे ? इसलिए सच बातें इशारे से कही जाती हैं । उसे ध्यान से पढ़कर बुद्धि से ही समझा जाता है ।

आंख के सामने अखबार खोलकर नवीन पंडितजी 'सच्ची खबरें' बताते जा रहा हैं—"हिटलर शुद्धि करके हिन्दू बना था । तभी वक्षस्थल पर स्वस्तिक चिह्न धारण करता था । उसके कोट के नीचे बगलामुखी कवच बंधा होता था । उसके पास ज्योतिषी भी था, जिसे नियमित रूप से वेतन मिलता था । युद्ध से बहुत पहले एक बार हिटलर बनारस आकर मदनमोहन मालवीय को प्रणाम भी कर गया था ।"

चाय का प्याला हाथ में लिये भूदेव भी मगन होकर सुन रहे हैं । पर ईर्ष्यालु व्यक्ति क्या किसी दूसरे का सुख सह सकते हैं ? दाशू बोल उठे, "भूदेवबाबू, आप तो कक्षा ले रहे थे, उसे छोड़कर यहां कैसे आ बैठे ?"

"हां, अभी जा रहा हूं । ज़रा डंडी लेने आया था ।"

लाइब्रेरी के कमरे में अकेला महिम आंखें मूंदे बैठा है । वह समय का अपव्यय नहीं करता । जब कोई काम-काज नहीं रहता तो बैठे-बैठे थोड़ा सो ही लेता है । जरूरत पड़ने पर शायद खड़े-खड़े भी सो सकता है, पर वह आज सो नहीं रहा था । जागते-जागते ही स्वप्न देख रहा था । कुछ कुछ नशा-सा आ रहा है । मणि घोष को देखकर ऐसा हुआ है । तेजस्वी तरुण है । छत की दीवार पर झंडा लिये खड़ा वीर मूर्ति लगता था । देवताओं के चित्र में जैसा दिखाई पड़ता है, ठीक वैसा ही प्रकाश धूप के

कारण मणि के चेहरे पर दिखाई पड़ रहा था। मणि की माताजी दरवाजे की ओट में खड़ी होकर बातें करती हैं। एक दिन महिम यह चर्चा छेड़ेगा। दीपाली बुरी नहीं है। वे लोग ज़रूर पसन्द कर लेंगे। मणि भी महिम को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता है। शायद वह भी इन्कार नहीं करेगा। एक दिन मणि को घर ले जाकर सरला को भी दिखा देना होगा।

भूदेवबाबू उठकर खड़े हो गये। वह खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। महिम से बोले, "अब आप जा सकते हैं, महिमबाबू। मैं डंडी लेने आया था। इस बीच तीसरी 'बी' के लड़के भाग गये। लड़के चालाक हैं न! समझ गये। मैंने भी उन्हें समझने के लिए काफी समय दे दिया था।"

महिम ने कहा, "पर फाटक पर तो ताला लगा है। वे भागे कैसे?"

"फाटक से स्कूल भी तो नहीं आये थे। दीवार लांघकर आये थे। गये भी उसी रास्ते से। लीजिये छुट्टी करवा दी। एक दिन चाय पिलानी पड़ेगी।"

सुधा को लिवाकर महिम ट्राम से घर आ रहा था। सारे रास्ते मणि घोष की ही बातें करता रहा, "तुम चल रही हो दीदी, अच्छा ही हुआ। लड़के को लाकर तुम लोगों को दिखा दूंगा। वर और कन्या की उम्र के अंतर को लेकर तुम्हें हिचकिचाहट है, पर एक बार मणि को आंखों से देख लो और उसकी विद्या-बुद्धि के बारे में सुन लो तो यह बात मन में आयगी ही नहीं। किसी बहाने से बुला लाऊंगा। मेरे कहने से जरूर आजायगा। हां, मेरी आंखें स्त्रियों की आंखें तो हैं नहीं। तुम लोग चाहे जैसे जांच-पड़ताल कर लेना। तुम और तुम्हारी भावज, दोनों ही लड़के को पसन्द कर लोगी तभी ब्याह की बात छेड़ूंगा, पहले नहीं। दीपाली की शक्ल-सूरत अच्छी है, वे उसे जरूर पसन्द करेंगे।..." फिर सुधा के कान में पास मुंह लाकर धीरे-से बोला, "मैं एक मास्टर जरूर हूं, पर खाली हाथ बेटी का ब्याह नहीं करूंगा। दिन-रात खून-पसीना एक करके खटता रहता हूं, सो बेटी की शादी और दोनों बेटों को पढ़ाने के लिए ही, और नहीं तो क्या काम है? सोना-चांदी, नकदी, जितना भी मुझसे बनेगा, दूंगा।"

नहीं आयेगी। भूदेवबाबू इधर-उधर देखकर नवीन पंडित के पास पहुंच गये। चाय आगई थी। अफीम की गोली मुंह में डालकर पंडितजी धीरे-धीरे चाय की चुस्की लेने लगे और लड़ाई में हारते-हारते अंग्रेज किस तरकीब से जीत गये, इसीका विवरण देने लगे। बैठने की जगह नहीं थी। सिर्फ दो ही कुर्सियां थीं। पर नवीन पंडितजी को घेरकर मास्टरों ने भीड़ लगा रखी थी।

आत्मतुष्टि की हँसी हँसते हुए सबकी ओर देखकर पंडितजी ने कहा, "अखबार तो बहुत-से लोग खरीदते हैं, पर पढ़ने का तरीका कितनों को मालूम है? अखबार पढ़ना भी सीखना पड़ता है। जो बातें छपती हैं, सब-की-सब झूठ होती हैं। अखबार में सच्ची खबरें नहीं छपतीं। किसकी मजाल है कि छापे? इसलिए सच बातें इशारे से कही जाती हैं। उसे ध्यान से पढ़कर बुद्धि से ही समझा जाता है।

आंख के सामने अखबार खोलकर नवीन पंडितजी 'सच्ची खबरें' बताते जा रहा हैं—"हिटलर शुद्धि करके हिन्दू बना था। तभी वक्षस्थल पर स्वस्तिक चिह्न धारण करता था। उसके कोट के नीचे बगलामुखी कवच बंधा होता था। उसके पास ज्योतिषी भी था, जिसे नियमित रूप से वेतन मिलता था। युद्ध से बहुत पहले एक बार हिटलर बनारस आकर मदनमोहन मालवीय को प्रणाम भी कर गया था।"

चाय का प्याला हाथ में लिये भूदेव भी मगन होकर सुन रहे हैं। पर ईर्ष्यालु व्यक्ति क्या किसी दूसरे का सुख सह सकते हैं? दाशू बोल उठे, "भूदेवबाबू, आप तो कक्षा ले रहे थे, उसे छोड़कर यहां कैसे आ बैठे?"

"हां, अभी जा रहा हूं। ज़रा डंडी लेने आया था।"

लाइब्रेरी के कमरे में अकेला महिम आंखें मूंदे बैठा है। वह समय का अपव्यय नहीं करता। जब कोई काम-काज नहीं रहता तो बैठे-बैठे थोड़ा सो ही लेता है। जरूरत पड़ने पर शायद खड़े-खड़े भी सो सकता है, पर वह आज सो नहीं रहा था। जागते-जागते ही स्वप्न देख रहा था। कुछ कुछ नशा-सा आ रहा है। मणि घोष को देखकर ऐसा हुआ है। तेजस्वी तरुण है। छत की दीवार पर झंडा लिये खड़ा वीर मूर्ति लगता था। देवताओं के चित्र में जैसा दिखाई पड़ता है, ठीक वैसा ही प्रकाश धूप के

कारण मणि के चेहरे पर दिखाई पड़ रहा था। मणि की माताजी दरवाजे की ओट में खड़ी होकर बातें करती हैं। एक दिन महिम यह चर्चा छेड़ेगा। दीपाली बुरी नहीं है। वे लोग ज़रूर पसन्द कर लेंगे। मणि भी महिम को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता है। शायद वह भी इन्कार नहीं करेगा। एक दिन मणि को घर ले जाकर सरला को भी दिखा देना होगा।

भूदेवबाबू उठकर खड़े हो गये। वह खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। महिम से बोले, "अब आप जा सकते हैं, महिमबाबू। मैं डंडी लेने आया था। इस बीच तीसरी 'बी' के लड़के भाग गये। लड़के चालाक हैं न! समझ गये। मैंने भी उन्हें समझने के लिए काफी समय दे दिया था।"

महिम ने कहा, "पर फाटक पर तो ताला लगा है। वे भागे कैसे?"

"फाटक से स्कूल भी तो नहीं आये थे। दीवार लांघकर आये थे। गये भी उसी रास्ते से। लीजिये छुट्टी करवा दी। एक दिन चाय पिलानी पड़ेगी।"

सुधा को लिवाकर महिम ट्राम से घर आ रहा था। सारे रास्ते मणि घोष की ही बातें करता रहा, "तुम चल रही हो दीदी, अच्छा ही हुआ। लड़के को लाकर तुम लोगों को दिखा दूंगा। वर और कन्या की उम्र के अंतर को लेकर तुम्हें हिचकिचाहट है, पर एक बार मणि को आंखों से देख लो और उसकी विद्या-बुद्धि के बारे में सुन लो तो यह बात मन में आयगी ही नहीं। किसी बहाने से बुला लाऊंगा। मेरे कहने से जरूर आजायगा। हां, मेरी आंखें स्त्रियों की आंखें तो हैं नहीं। तुम लोग चाहे जैसे जांच-पड़ताल कर लेना। तुम और तुम्हारी भावज, दोनों ही लड़के को पसन्द कर लोगी तभी ब्याह की बात छेड़ूंगा, पहले नहीं। दीपाली की शक्ल-सूरत अच्छी है, वे उसे जरूर पसन्द करेंगे।..." फिर सुधा के कान में पास मुंह लाकर धीरे-से बोला, "मैं एक मास्टर जरूर हूं, पर खाली हाथ बेटी का ब्याह नहीं करूंगा। दिन-रात खून-पसीना एक करके खटता रहता हूं, सो बेटी की शादी और दोनों बेटों को पढ़ाने के लिए ही, और नहीं तो क्या काम है? सोना-चांदी, नकदी, जितना भी मुझसे बनेगा, दूंगा।"

मुहल्ले में घुस ही रहे थे कि गोविन्द डाक्टर से भेंट होगई। डाक्टर लौट रहा था, महिम को देखकर गाड़ी रोककर बोला, "तो आप अब आ रहे हैं? जाइये-जाइये..."

उसके बोलने का ढंग कुछ और ही किस्म का था। महिम ने हैरान होकर पूछा, "क्या हाल है, डाक्टरसाहब?"

डाक्टर ने खिन्न होकर कहा, "इतने बड़े मरीज को बच्चों के सहारे छोड़कर दिन-रात पैसे के पीछे दौड़ते रहते हो? आप पढ़े-लिखे हैं। बुरा न मानिये। बस्ती में रहनेवाले मजदूर भी अपने फर्ज को पूरा करते हैं। वे भी इतने निष्ठुर नहीं होते। कल मैं कह आया था कि आप मुझसे सवेरे ही मिल लें। मिले?"

इतना कहकर डाक्टर चले गये। महिम व्याकुल होकर बोला, "क्या कह गये, दीदी? कल तुम्हारी भाभी ने जाने क्या-क्या बातें कीं। कह रही थीं—और दिनों से अच्छी हूं। फिर डाक्टर मुझे बुरा-भला क्यों कह रहा था?"

घर का दरवाजा खुला हुआ था। छोटी लड़की रुपाली बगलवाले मकान के किरायेदार की गोद में थी। तीन-चार लड़के-लड़कियां और दिखाई पड़ रहे थे। महिम को देखते ही पुण्य, शुभो, दीपाली, सभी, धाड़ मार-मारकर रो पड़े।

सरला की आंखें अध-खुली थीं। एकाएक जान नहीं पड़ता कि वह चल बसी है। ऐसा मालूम होता था मानो सो गई हो। कल रात को उसने बातें की थीं। अब वह कभी नहीं बोलेगी।

२२

दूसरा सारा दिन महिम ने घर में ही बैठे-बैठे बिता दिया। याद नहीं पड़ता कि पिछले कई सालों में कभी भी ऐसा हुआ हो।

सांझ के वाद वाहर से सातू घोष की आवाज सुनाई पड़ी। शायद सरला की वात सुनकर सान्त्वना देने आये होंगे। महिम ने जल्दी-से दरवाजा खोल दिया। वह अलक के साथ मोटर पर आये थे और वड़ी खोज करने पर महिम का घर मिला था। सातू घोष अव कितने वड़े आदमी वन गये और इन्हींका काम छोड़कर आने पर महिम ने मां से कहा कहा था—सातू का व्यापार डूव जायगा। अधर्म से व्यापार नहीं होता। उन दिनों नई-नई कितावें पढ़कर महिम ने अच्छी-अच्छी वातें सीखी थीं। वह किसी और ही दुनिया में विचरता रहता था, पर आज वह सातू घोष की उन्नति देखकर चकित हो रहा था।

सातू घोष ने अंदर आते ही कहा, "कल पढ़ाने क्यों नहीं आये? अलक पास हो गया है और अव फाइनल परीक्षा में वैठेगा, तो उसे पास कराना ही होगा। क्या अलक के पीछे मैं कम रुपया खर्च कर रहा हूं?"

दोनों ही पड़ोसी गांव के हैं। महिम के वाप का सातू घोष पर अहसान भी था। महिम तो सातू घोष से सान्त्वना के दो वोल सुनने की आशा कर रहा, पर सुनना पड़ा यह सव!

सातू घोष वोलते गये, "भर-भर अंजलि पैसे खर्च रहा हूं। दो-दो मास्टर लगा रखे हैं, कालाचांदवावू तो एक नम्वर के कामचोर हैं। एक दिन आते हैं, दो दिन नहीं आते। मैं घर नहीं रहता तो एक प्याला चाय पेट में उंडेलकर भाग जाते हैं। जान-पहचान के हो, इसीलिए तुम्हें रखा, पर तुम भी वैसे ही निकले। सो मैं आज खुद ही आगया हूं। अगर न आता तो तुम जो करते, वह भी जानता हूं। दो दिन और नागा करते। मास्टर लोग कुछ नहीं कर पाते। तभी तो जिन्दगी-भर दर-दर विद्या वेचनी पड़ती है। चलो, गाड़ी पर वैठो।"

दीपाली पता नहीं, कव आकर पीछे खड़ी होगई थी। एकदम वोल पड़ी, "पिताजी नहीं जायंगे।"

सातू घोष आगववूला हो उठे। वोले, "इसका क्या मतलब? पढ़ाता है तो क्या कोई अहसान करता है? हर महीने तनख्वाह देता हूं। कह दिया, नहीं जायगा! यही सोचकर गाड़ी लेकर आता हूं कि [illegible] वहाना वनाकर नागा न करें।"

"हर आदमी के ऊपर दुख-सुख पड़ता है। पिताजी आज नहीं जा सकते।" इतना कहकर दीपाली ने महिम का हाथ पकड़ लिया।

महिम ने धीरे-से अपना हाथ छुड़ा लिया और बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए बोला, "आप बुरा मत मानिये सातूदादा, इसकी मां का देहान्त हो गया। बच्चे है। बातचीत करने का ढंग नहीं जानते। आइये, आप लोग अन्दर आकर बैठिये।"

सातू घोष तुरन्त नरम पड़ गये। बोले, "उफ्, मुझे यह मालूम नहीं था! क्या हुआ था? वह कब गुजर गई?"

"वह पहले से बीमार थीं, पर अचानक चली जायंगी, ऐसा कभी नहीं सोचा था। बच्चे छोटे हैं। छोटा लड़का तो रो-रोकर बीमार पड़ गया है उसे एक सौ छः बुखार है।"

सातू घोष ने कहा, "नहीं-नहीं, कोई बात नहीं है। कल आ जाइये। असल में परीक्षा एकदम सिर पर आगई है, नहीं तो कहता कि सोमवार से आवें।"

फिर लम्बी सांस लेकर दार्शनिक के ढंग से बोले, "जो चला जाता है, वह चला ही जाता है। बाकी सब रह जाते हैं। पर करना तो सभी काम पड़ता है। काम में जुट जाय तो आदमी को शोक नहीं सताता। हां, तो तुम कल शाम को आओगे?"

गाड़ी में चढ़ते-चढ़ते फिर बोले, "तो यही है तुम्हारी बड़ी लड़की? वाह, काफी बड़ी हो गई। देखने में भी अच्छी लगती है। तुम्हें बहुत मानती है। कैसी नाराज हो गई थी। मुझे तो कुछ भी नहीं मालूम था, नहीं तो क्या मैं ऐसे कहता?"

आज जल्दी नहीं हुई। अच्छी तरह सवेरा होने पर महिम पढ़ाने निकला। प्रबोध को उठाना नहीं पड़ा। वह खुद ही किताब लिये बैठा था। महिम पढ़ाना शुरू करता और चुप हो जाता। उड़ते मन को बार-बार धक्का मारकर काम में जुटाना पड़ता था। प्रबोध ने कहा, "मास्टरजी, आप चले जाइये, मुझे कुछ काम देते जाइये, मैं कर रखूंगा।"

इसके बादवाले छात्र के यहां महिम नहीं गया। महिम दौड़ नहीं पा

रहा था। भारी कदमों से चल रहा था। सिंह-परिवार में पहुंचने का समय भी आ गया। थोड़ी देर वहां विताकर महिम धीरे-धीरे चल पड़ा। अब राविन के घर। राविन को आज महिम ने नहीं मारा। ओट में खड़ी हुई माताजी से कह दिया, "घर में सूतक है, मांजी। इन सबसे परे ही रहना पड़ेगा।"

स्कूल से एक घंटा पहले ही छुट्टी लेकर महिम ट्राम से घर लौट आया। शामवाली दोनों ट्यूशनों को नहीं पढ़ाया। जो होगा सो होगा। महिम जब सवेरे जा रहा था, तब पुण्य सो रहा था। महिम ने उसका शरीर छूकर देखा था, वह बुखार से तप रहा था। गोविन्द डाक्टर आज भी जाने क्या-क्या कहें, इसी डर से शाम को ट्यूशनें पढ़ाये विना ही महिम घर लौट आया।

वहुत-से सन्तरे, वेदाना और एक डिव्वा विस्कुट देखकर महिम ने पूछा, "दीदी, तुम्हारे पास पैसे हैं, यह तो मुझे मालूम है, पर यह सब इतना सामान लाकर क्यों भर दिया ? एक वच्चा इन्हें कितने दिनों में खायगा।"

सुधा ने कहा, "भाई, मैंने नहीं खरीदा है। तुम्हारा छात्र अलक, सातू घोष का वेटा, यह सब दे गया है। वाप की तरह चमार नहीं है। अच्छा है।"

अलक की प्रशंसा में सुधा ने वहुत-कुछ कह डाला। वोली, "ऐसा लड़का आज कहीं देखने को नहीं मिलता। इतनी अच्छी तरह वातचीत करता है। वुआ कहकर उसने मेरे पैर छुये। कहने लगा कि ये फल मैं नहीं लाया हूं, माताजी ने भेजे हैं। गोविन्द डाक्टर ने आकर नुस्खा लिख दिया तो शुभो के हाथ से कागज छीनकर अलक खुद दौड़ गया। कहने लगा कि ऐसे समय नंगे वदन शुभो को जाने की जरूरत नहीं है। दवा लाया तो दाम की वात ही नहीं की। दोपहर से वैठे-वैठे इतनी देर तक कितनी ही वातें करता रहा। अभी गया है। कहने लगा कि मास्टरजी घर पहुंच जायंगे तो वहां न मिलने पर नाराज होंगे।

महिम ने कहा, "आज उसने इतना समय क्यों खराव किया ? यह अच्छी वात नहीं है। पढ़ाई छोड़कर इधर-उधर जायगा तो वह कभी पास

नहीं होगा।"

सुवा जल्दी-से बोली, "देखना, इस बात को लेकर अलक से कुछ मत कहना। अच्छा लड़का है। उसकी मां ने भेजा था तो वह क्या करता! जो दूसरे की मुसीबत में मदद देता है, भगवान उसकी भलाई करते हैं। उसकी पढ़ाई का जो नुकसान हुआ होगा, उसे भगवान पूरा करेंगे। फिर वह क्या रोज-रोज यहां आयगा!"

कुछ समय बाद महिम कन्धे पर चद्दर डालकर सातू घोष के घर जाने के लिए तैयार हो गया, अलक के पास। लड़का किताब-कापी लेकर तैयार बैठा था। अलक का दिमाग तेज नहीं है, पर दिल उसका बहुत बड़ा है। महिम ने कहा, "तुम हमारे घर गये थे? दीदी तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रही थीं।"

"आप स्कूल के बाद घर होकर आये हैं?"

महिम ने कहा, "पुण्य बीमार हो गया। दिल घबड़ा रहा था, इसीलिए एक बार जाकर उसे देख आया। मां को बहुत चाहता था। इसलिए 'मां-मां' करते-करते बीमार पड़ गया है। बुखार का रंग-ढंग भी कुछ अच्छा नहीं जान पड़ता। पर बेटा, तुम डाक्टर के यहां से दवा लाये। दवा के दाम क्यों नहीं लिये?"

अलक ने कहा, "फिर कभी ले लूंगा। आप चिन्ता न करें!"

"नहीं बेटा, यह बात ठीक नहीं है। फल वगैरा दे आये हो, पर उन्हें तुम्हारी माताजी ने भेजा है, इसलिए मैं सिर झुकाकर स्वीकार करता हूं। पर तुम तो छात्र हो, तुम क्यों पैसे खर्च करोगे?"

अलक ने कहा, "छात्र तो बेटे के बराबर होता है, मास्टरजी। केवल आठ-दस आने के लिए आप इतने परेशान हो रहे हैं! अगर मैं न होकर मेरी जगह शुभो होता तो आप क्या करते?"

वह ऐसी बातें करता है कि महिम जवाब भी नहीं सोच पाता। बात बदलकर बोला, "तुम्हारा दिल बहुत बड़ा है। मेरी आफत में दौड़कर मदद के लिए पहुंचे। पर तुम्हारे लिए एक-एक मिनट कीमती है। अगर बार-बार मेरे यहां जाकर समय खर्च करोगे तो मैं अपनेको ही अपराधी समझूंगा।"

पुण्यव्रत का बुखार मियादी पड़ गया, पर मामूली। फिर भी काम तो रुक नहीं सकता था। परीक्षा एकदम सिर पर आगई थी। महिम पहले की तरह फिर स्कूल से ही ट्यूशनों पर जाने लगा। जो लड़का बाहर के कमरे में ही किताब लिये तैयार बैठा रहता था, वह नहीं मिला। पहले खेलने, घूमने तो नहीं जाता था, फिर कहां गया ? नौकर ने बताया कि उसने किसी शिक्षण वर्ग में पढ़ने का इन्तजाम कर लिया है। कल से वहीं पढ़ने जाता है। इन दिनों गली-गली में इस तरह के वर्ग चल रहे हैं। उनमें थोड़े पैसों में कई लड़कों को एक साथ पढ़ाया जाता है, जैसे रेल के डिब्बे में दस-बीस जने एक साथ बैठकर जाते हैं। पढ़ाई तो वहां क्या खाक होती है, एक मास्टर को सामने बैठाकर दस-बीस लड़के हल्ला करते हैं। पर है वह सस्ता। चार-पांच दिन महिम को न पाकर लड़का कोचिंग क्लास में दाखिल हो गया। जब एक बार सस्ते का चस्का पड़ गया, फिर महिम के पास नहीं पढ़ेगा। सो यह ट्यूशन बन्द हो गई।

सुलता की ट्यूशन भी समाप्त हो गई। वहां जाकर महिम ने देखा कि एक नया मास्टर बड़े जोश के साथ पढ़ा रहा है। कुछ लिख रहा है, कुछ समझा रहा है। लाल पेंसिल से निशान लगा रहा है। चार-पांच दिन से ही महिम ने शाम के ट्यूशनें नहीं पढ़ाये तो जैसे दुनिया ही बदलने लगी। ट्यूटर जैसे पढ़ाने की मशीन है। जैसे उसकी घर-गृहस्थी, दुख-सुख कुछ नहीं है। अच्छा ही हुआ, जाने दो। शरीर भी कुछ ठीक नहीं है। मेहनत करने को मन नहीं करता। स्कूल से आकर पुण्य के पास बैठेगा। घर की देखभाल करेगा।

परीक्षा के प्रश्नपत्र बनानेवालों ने प्रश्न-पत्र तैयार किये। विश्व-विद्यालय के अधिकारियों ने बड़े जतन से उन्हें छपाकर गुप्त रूप से ताले के भीतर बन्द कर दिया। कहीं किसीको प्रश्न मालूम न हो जायं और वह उन्हीं प्रश्नों को बताकर उनका उत्तर छात्रों को लिखाकर याद न करा दें। महिम जैसों का यही काम है, सन्दूक तोड़कर चोरी से प्रश्नपत्र निकालकर नहीं, बल्कि प्रश्न बनानेवालों के मन के अन्दर घुसकर प्रश्नों को ढूंढ़ निकालकर। बुद्धि का खेल है। वे कितना छिपा सकते हैं और ढूंढ़ने वाले कितना ढूंढ़ निकाल सकते हैं ! बड़ी रात गये काम-काज खत्म

करके महिम छत पर चहलकदमी करता है। सोचता है कि पिछले साल के प्रश्न ये थे। उससे पिछले साल ये थे। इस साल के प्रश्न क्या होंगे ? सोचते-सोचते उसे अंदाज हो जाता है। हर साल यही करता है। तभी तो उसका इतना नाम है, उसके पास इतनी ट्यूशनें हैं। दूसरे लड़के महिम के छात्रों के इर्द-गिर्द मंडराते रहते हैं। पूछते हैं कि भाई, बताओ तुम्हारे मास्टरजी ने किस-किस प्रश्न पर निशान लगाया है ? छात्रों का दृढ़ निश्चय है कि महिमबाबू जो कुछ बतायंगे, उन्हींमें से सवाल आयंगे। महिम के छात्र झूठ-मूठ उल्टा-सीधा बता देते हैं, या साफ-साफ इंकार कर देते हैं। कहते हैं—महीनों से तनख्वा दे-देकर तब पता लगा है, मुफ्त में नहीं। मिठाई की तरह यह हरेक को बांटने की चीज नहीं है। कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि महिम घंटों छत पर चहलकदमी ही करता रह जाता है। उसकी चप्पल की आवाज नीचेवाले लोग नींद में भी सुन लेते हैं। जब सरला थी तो कई बार वह उठ आती थी। सीढ़ी का दरवाजा इस ओर से बन्द होता तो उसे थपथपाती। महिम दरवाजा खोलकर पूछता, "क्यों क्या बात है ?"

वह कहती, "रात बहुत बीत गई है। अब सो जाओ।"

महिम कहता, "अच्छी बात है। सो जाऊंगा।"

सरला कहती, "नहीं, तुम पहले सो जाओ। मैं देखकर जाऊंगी। सवेरे एक पहर रात रहते ही फिर से दौड़ना पड़ेगा। तन्दुरुस्ती खराब हो जायगी।"

पर अब सरला नहीं रही है तो प्रश्न सोचते-सोचते महिम रात-भर भी घूम सकता है। कभी-कभी महिम पढ़ाकर लौटता है और कुछ खा-पीकर जल्दी-से लेट जाता है। आदत न होने से उसे जल्दी नींद नहीं आती। वह करवटें बदलता रहता है। पर उठने का मन नहीं करता। जाने कैसा आलस आता है !

सालाना परीक्षा हो गई। अब महिम खाली हो गया है। सिर्फ राबिन का ट्यूशन रह गया है। धीरे-धीरे फिर ट्यूशन इकट्ठे हो जायंगे। कितने ही लड़कों ने कह रखा है कि खाली हो जाने पर उन्हें पढ़ाना पड़ेगा। एक-

दो लड़कों के अभिभावक तो आकर मिल भी गये हैं। परीक्षा के बाद से परीक्षा-फल निकलने तक बीच के थोड़े दिन छुट्टी रहती है।

घूमते-घूमते महिम सिंह-परिवार के यहां पहुंच गया। वैसे जाली चालाक लड़का है। कुल मिलाकर परीक्षा में कैसा लिखा है, महिम यह जानने गया था।

चन्द्रभूषण की उनपर नज़र पड़ गई। उन्होंने बरामदे में से बुलाया, "मास्टरसाहब, ज़रा इधर होकर जाइयेगा। प्रश्न-पत्र देखा आपने ?"

"जीहां।"

"कैसा किया ?"

महिम ने टालनेवाली दृष्टि से जवाब दिया, "अच्छा ही हुआ है।"

"आपने जिन प्रश्नों पर निशान लगाये थे, वे तो आपको जरूर याद होंगे ?"

महिम ने कहा, "एक-दो नहीं, कई हैं। इतने कैसे याद रहेंगे ?"

"किताब-कापी लेकर मैंने सारा मिलाया है। आपके लगाये निशान बेकार रहे। उनमें से एक भी नहीं आया।"

बात सही थी। ऐसा लगता है, जैसे प्रश्न-पत्र बनानेवाले लोगों ने महिम के हर छात्र के घर घूम-घूमकर निशान लगाये सवालों को देखकर छोड़ दिया है। कुछ अनजान-सा बनते हुए महिम ने कहा, " ऐसी बात है ? मैंने अन्दाज ही तो लगाया था। आप तो जानते ही हैं कि मैं जाकर प्रश्न-पत्र तो देख नहीं आया था।"

कुछ उत्तेजित होकर बोले, "तो फिर पैसे देकर मास्टर रखने की जरूरत ही क्या है ? लड़का सारा-का-सारा याद करे सो तो स्कूल में भी होता है। यहां तो मास्टर इसीलिए रखा जाता है कि चुन-चुनकर खास-खास सवाल याद करा दे।

"सब जगह तो यही करता हूं।"

"आप और जगहों में क्या करते हैं, यह जानने में मेरी दिलचस्पी नहीं है, पर आपने जाली को एक भी असली सवाल नहीं बताया। आपकी यह चाल क्या मैं समझता नहीं ?"

महिम ने हतबुद्धि होकर पूछा, "कैसी चाल ?"

"आप दूर की योजना बना रहे हैं। पास हो जाने से तो ट्यूशन खत्म हो जायगा। इसीलिए फ़ेल कराकर ट्यूशन बचा रहे हैं। सो बच गया।"

अब महिम को जाली से मिलने की इच्छा नहीं रह गई। वह बाहर निकल आया। एक बार प्रबोध के यहां भी जाना होगा। वहां तीन महीनों की तनख्वा बाकी रह गई है। प्रबोध के बाप से भेंट नहीं हो पाती, सो प्रबोध के जरिये तगादा करना पड़ता है। आज नहीं, कल का बहाना करते-करते ही परीक्षा भी खत्म हो गई। और देर होने से तनख्वा नहीं मिलेगी।

प्रबोध के बाप से आज भेंट होगई। उन्होंने कहा, "पैसों के लिए आये हैं? लड़का तो कह रहा है कि परीक्षा में सिर्फ रसगुल्ले मिलेंगे।"

महिम ने सिर हिलाकर कहा, "ऐसा कैसे होगा?"

"तो क्या हीरा-मोती मिलेंगे? नतीजा निकलने दीजिये, आठसौ में हजार-डेढ़ हजार, कितने नम्बर पाता है। देखियेगा, फिर आइयेगा। तभी हिसाब करके अपने पैसे भी ले लीजियेगा।"

इतना कहते-कहते गुस्से से आग-बबूला होकर बोले, "मास्टर रखना ही सबसे बड़ी भूल हुई है। यह सवाल आयगा, वह सवाल आयगा, निशान लगा-लगाकर आपने लड़के का सत्यानाश कर दिया। वह तो वही रटता रह गया। परीक्षा में बैठा तो एकदम अंधेरा छा गया। वैसे तो शायद कुछ और पढ़ता। दो-चार नम्बर लाता, पर आधी रात आप चुपचाप पता नहीं क्या पढ़ा जाते थे। लड़का कहीं का न रहा। नौ महीनों की तनख्वा तो ले ही ली है, उतने पैसे बरबाद हो गये।"

एक के बाद एक अपमान! आज सवेरे जाने किसका मुंह देखकर महिम निकला था। फिर भी सातू घोष के यहां तो एक बार जाना ही होगा। अलक की परीक्षा के बारे में पूछ-ताछ करने के लिए नहीं, क्योंकि वह तो जानी हुई बात है। सातू घोष तिकड़मी आदमी है। उन्हें तो यह मालूम ही होगया होगा। पर सातू घोष से मिलना जरूरी है। उनपर आफत आई है। कल्याणश्री बैंक फेल होगया है।

सातू घोष के घर पहुंचने पर महिम को आफत का कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ा। सातू घोष पांसा खेल रहे थे, चाल चलते समय इतने जोर से बोलते थे कि रास्ते से ही सुनाई पड़ जाता था। महिम को देखकर हँसकर

सातू बोले, "आओ बेटा ! अलक कह रहा है कि खूब अच्छा लिखा है। कहता है कि अव्वल दर्जे में आजायगा। तुमने ही उसे पूरी तैयारी करा दी थी। थोड़ा बैठो। फिर बात होगी। बस एक चाल और रह गई है।"

खेल खत्म होगया तो घोष उठकर कमरे में आये। महिम ने कहा, "अखबार में पढ़ा है कि कल्याणश्री बैंक फ़ेल होगया है ?"

सातू घोष हँसकर बोले, "इससे तुम्हारा क्या बिगड़ा। वहांपर तुम्हारे कुछ पैसे जमा थे क्या ? मुझे तुमने कभी नहीं बताया !"

"नहीं दादा, मास्टरी करता हूं। भला बैंक में रखने के लिए पैसे कहां से पाऊंगा ?"

सातू बोले, "तब तो अच्छा है। कंगाल के घर में चोर क्या चोरी करने आयगा ? रुपया-पैसा बड़ी खराब चीज है। मैं तो डायरेक्टर हूं, मेरा तो कुछ नहीं, पर कितने ही लोगों ने बैंक में अपने रुपये-पैसे जमा कर रखे थे। वे बेचारे मुसीबत में पड़ गये। एकदम सब नहीं खत्म होगा, शायद थोड़ा-बहुत वापस मिल जाय, पर उसमें कितना समय लग जायगा, यह नहीं कहा जा सकता।"

फिर दबी आवाज में बोले, "सुनो, अगर किसी बैंक में कुछ जमा किया हो तो उसे जल्दी से निकाल लो। कुकुरमुत्ते की तरह कितने ही बैंक खुले हैं, पर लड़ाई खत्म होने के साथ ही सब डूब जायंगे।"

फिर अलक की परीक्षा की बातें होने लगीं। सातू घोष ने कहा, "भई, मुझे तो यह सब सुनकर बड़ा ताज्जुब हुआ। चौदह पीढ़ियों में किसीने पास नहीं किया है, पर वह कहता है, पहले दर्जे में पास होगा। असलियत तो भगवान ही जानें !" फिर महिम की पीठ पर थपकी देते हुए बोले, "यह काम तुम्हारे अलावा और कोई नहीं कर सकता था। अलक मुझसे रुपये लेकर सन्देश खरीदकर तुम्हारे ही यहां गया है। कह गया है कि मास्टरसाहब को प्रणाम कर आऊं।"

घर लौटकर महिम ने देखा कि अभी तक अलक वहीं पर था। मिठाई खाने के साथ-साथ गपशप चल रही थी। वह कह रहा था, "मुवा बुआ और दीपाली को लेकर सिनेमा चलें। शुभव्रत तो ठहरा अच्छा लड़का, वह पढ़ाई छोड़कर नहीं चलेगा। अगर मास्टरजी की राय हो तो हम भी

चल सकता है।"

महिम को देखकर अलक ने झट उठकर उनके पैर छुये। बोला, "सारे हिसाव मिला लिये हैं, पच्चासी नम्बर के सवाल सही हैं। अस्सी से कम नम्बर नहीं मिलेंगे। मास्टरजी, हिसाव में जरूर ऊंचा स्थान मिलेगा।"

महिम ने कहा, "सातूदादा भी यही कह रहे थे, पर यह कैसे हुआ? क्यों किसीकी नकल की?"

आहत स्वर में अलक वोला, "यह आप क्या कह रहे हैं, सर? आपने ही तो सारा वता दिया था।"

"मैंने?"—महिम ने लम्बी सांस लेकर कहा, "वरावर ऐसा ही होता रहा है, बेटा। पर अवकी वार न जाने क्या हुआ! दीपाली की मां क्या गईं, मुझे भी खत्म कर गईं।"

अलक वोला, "आप भूल रहे हैं, सर। आपने ही हिसाव वताये थे। इतिहास भी संक्षिप्त करके लिखा दिया था। व्याकरण में भी निशान लगाये थे। आपने जो-जो वताया था, वही आया। मैंने हूवहू वैसा ही लिखा है। इसीलिए वुआजी से कह रहा था, मुझे प्रथम श्रेणी मिलकर ही रहेगी।"

अलक यह क्या कह रहा है? और लड़के तो कुछ और ही कह रहे हैं। सवको छोड़कर क्या अलक को ही उसने असली वातें वताई थीं? नहीं, यह सवकुछ नहीं। जरूर इसने नकल की होगी।

२३

मैट्रिक का परीक्षा-फल निकल गया। महिम से जितने छात्रों ने पढ़ा था, सव-के-सव फ़ेल हो गये। हिसाव में अलक को अस्सी नम्बर मिलने की उम्मीद थी, पर मिले कुल आठ। किसी भी विषय में पास नहीं हुआ। पर अलक को इसकी कोई परवा नहीं है। अव भी महिम के घर पर आता रहता है। सुवा से कहता है, "पता नहीं क्या होगया, वुआजी। मैंने खुद

हिसाव मिलाये थे। एक वार कापी देखने को मिल जाय तो शायद पता लग जाता। जाने दीजिये, फिर परीक्षा दूंगा। मां से कह रखा है, महिम-वावू के अलावा और किसीसे मैं नहीं पढ़ूंगा।"

पर महिम अव वहां नहीं जायगा। अलक सभी विषयों में फेल हुआ है। महिम सातूं घोष को कैसे मुंह दिखायगा! अव एक भी नया ट्यूशन नहीं मिल रहा है। कितने ही छात्रों और अभिभावकों ने कह रखा था, पर अव तो किसीकी सूरत भी नहीं दिखाई पड़ती। केवल राविन पढ़ रहा है। वह भी अब सवेरे नहीं, शाम को पढ़ता है। शाम को वस इतना ही काम रहता है। अगले साल राविन फाइनल परीक्षा देकर निकल जायगा। फिर जैसा दीख रहा है, स्कूल के अलावा सारा समय घर में ही वीतेगा। आज सरला नहीं है। जव थी, तव एक मिनट उसके पास वैठने का मौका नहीं मिलता था। जिन्दगी-भर इसी वात पर जाने कितनी वार शिकायतें हुईं। सरला ने कितनी ही वार मुंह लटका लिया था। अगर वह आज होती तो महिम सांझ-सवेरे उसीके पास बैठा रहता।

पर राविन की ट्यूशन भी शायद फाइनल तक न रहे। एक दिन पढ़ाने गया तो वाहर से ही मणि और राविन की वातें सुनाई पड़ीं। वातें महिम के ही वारे में हो रही थीं। इसलिए महिम ने थोड़ी देर खड़े होकर सुन लीं। राविन उसके पास नहीं पढ़ना चाहता। कहता है, "भैयां, किसी और को ढूंढ़ो। कैसा मास्टर है! इतने छात्रों में से एक भी पास नहीं हुआ।"

मणि ने कहा, "महिमवावू जैसा शिक्षक और किसी स्कूल में है या नहीं, यह तो मुझे नहीं मालूम, पर तुम्हारे स्कूल में एक भी नहीं है। मैं पूरे तीन साल उनके पास पढ़ा हूं। किसी भी कक्षा में जाकर कोई भी विषय पढ़ा देते थे। पढ़ाई भी ऐसी कि छात्र मगन हो जाते थे। कमरे में एक सुई भी गिरती तो उसकी आवाज सुनाई दे जाती।"

राविन ने कहा, "कव क्या थे, यह तो मुझे नहीं मालूम, पर अव तो पांचवीं के ऊपर उनका क्लास ही नहीं है। छोटे-छोटे वच्चों को सम्भालने में ही परेशान हो जाते हैं। ऊंची कक्षाओं में क्या पढ़ाया जाता है, यह सवकुछ नहीं मालूम रहता। उनके पढ़ाने से मैं कभी पास नहीं हो सकता।"

महिम ने और नहीं सुना। कमरे में घुस गया। पुरा

छात्र मणि ही उसकी क्षमता का साक्षी है, पर शिकायतों से उसके भी कान भरे जा रहे हैं । जबतक हो सकेगा, महिम इसे रोकने की कोशिश करेगा।

राबिन को पढ़ाने के बाद महिम चित्तबाबू के यहां गया । वह भी पुराने दिनों के साथी हैं। महिम ने तो चित्तबाबू की जाने कितनी कक्षाएं पढ़ाई हैं। वह महिम की असलियत जानते हैं । पर चित्तबाबू अभी कहां से मिलते ! वह तो ट्यूशनें पढ़ाने चले गये थे। वह महिम की तरह बेकार थोड़े ही हैं। चित्तबाबू महिम से उम्र में भी कितने बड़े हैं, पर अभी तक कितने मजबूत हैं। हमेशा मौज करते हैं। इस उम्र में भी चश्मे की जरूरत नहीं पड़ी। सहायक हैडमास्टर हैं, सभी जानते हैं कि उनसे प्राइवेट पढ़वाया जाय तो लड़का कम-से-कम टेस्ट में पास होकर फाइनल में तो बैठ सकेगा । इसीलिए उन्हें ट्यूशन के लिए बुलाया जाता है । कुछ दिन के लिए तो बेफिकरी हुई। फाइनल परीक्षा में क्या होगा, सो बाद में सोचा जायगा ।

कच्चे नाले के ऊपर की पुलिया से चित्तबाबू के घर में घुसने का रास्ता है। महिम कपड़े से नाक दबाये पुलिया पर बैठा है। आधी रात हो गई, बात क्या है ? पढ़ाने के बाद चित्तबाबू कहीं और जम गये क्या ?

"कौन ?"

"अच्छा, आप आगये ?" महिम ने कहा, "मैं बड़ी देर से बैठा हूं, चित्तबाबू ।"

चित्तबाबू बोले, "अन्दर आइये, वहां क्यों बैठे हैं ? आवाज देकर दरवाजा खुलवा लेते ।"

"बैठने की जरूरत नहीं है। बस, थोड़ी-सी बात है, इतना ही कहने के लिए मैं कबसे आपकी राह देख रहा हूं। बातें खड़े-खड़े ही हो जायंगी ।'

आगे महिम ने कहा, "नये क्रम में मेरा सर्वनाश हो गया। मुझसे अगर कुछ कसूर हो गया है तो बताइये । आपने जब भी जिस कक्षा को पढ़ाने के लिए दिया है, मैंने इन्कार नहीं किया । आप ही बताइये, कभी इन्कार किया है ?"

प्रवीण शिक्षक होकर इतनी रात गए दरवाजे पर खड़ा होकर महिम

इस तरह कह रहा था, इससे चित्तवाबू हैरानी में पड़ गये। वोले, "मैं क्या कर सकता हूं! मेरे हाथ में तो कुछ भी नहीं है। किसे कौन-सी क्लास दी जाय, यह तो हैडमास्टर ही तय करते हैं। मैं केवल सिलसिला लगा देता हूं।

महिम वड़ा दुखी होकर बोला, "हिसाब में आनर्स लेकर बी. ए. पास किया है, क्या पांचवीं के ऊपर पढ़ाने का दिमाग मुझमें नहीं है?"

"दिमाग की वात नहीं है। स्कूल अच्छी पढ़ाई चाहता ही नहीं। परेशानी यह है कि आप क्लास के लड़कों को सम्भाल नहीं सकते। पांचवीं में भी शोर होता है। वार-वार शिकायतें आती हैं।"

"आंखों में जाला पड़ गया है। अच्छी तरह नहीं देख पाता। अगर आंखें ठीक होतीं तो मैं शरारत करनेवाले वच्चों को देख लेता। कहिये, पहले भी कभी ऐसा हुआ था? अवकी वार जाड़े में आपरेशन करवा लूंगा। मेरी मदद कीजिये, चित्तवाबू।"

इतना कहकर महिम ने चित्तवावू का हाथ पकड़ लिया, फिर कहने लगा, "सचमुच मैं मर रहा हूं। एक भी ट्यूशन नहीं मिल रही है। वच्चों के मां-वाप पूछते हैं, किस कक्षा के मास्टर हो? भला, पांचवीं कक्षा के मास्टर को कौन रखता है, और पैसे भी कितने देते हैं। कम-से-कम एकाध ऊंची कक्षा तो मुझे पढ़ाने दीजिये, जिससे मैं लोगों से कह तो सकूं।"

चित्तवावू ने जान छुड़ाने के लिए कहा, "अच्छा, इस साल तो जो होना था, वह हो गया। देखिये, अगले साल के लिए क्या कर सकता हूं!"

"अगले साल तक तो मैं विल्कुल मर जाऊंगा, चित्तवावू। पत्नी मर गई है। वच्चे भी भूखों मरेंगे। यदि कार्यक्रम में न हो तो कम-से-कम अपनी कापी में कभी-कभी मेरा नाम किसी ऊंची कक्षा के साथ रख दिया करें। आप अपनी ही दो-एक कक्षा, जैसे पहले देते थे, देकर देखिये।"

चित्तवाबू इसके लिए राजी हो गये। हो क्या गये, होना पड़ा।

वह शुभ घड़ी चार दिन वाद ही आगई। चित्तवावू की मोटीवाली कापी के अनुसार ऊंची कक्षा यानी चित्तवाबू की ही हिसाव की क्लास में पढ़ाने का आदेश था। वहुत ऊंची कक्षा तो नहीं थी। तीसरी का 'बी' विभाग। महिम के लिए तो अव यही गौरीशंकर की चोटी के समान थी। कम-से-

कम पांचवी से दो सीढ़ी ऊपर तो आये। अच्छा काम दिखाकर एक और ऊपर की कक्षा देने की खुशामद करेगा। लड़के मान जायंगे कि हां, ऊंची कक्षा के शिक्षक हैं।

मास्टरी के पहले दिन इसी तीसरी 'बी' में ही महिम ने हिसाब करवाया था। शरारती, दुष्ट लड़के उस दिन महिम का हिसाब निकालने का तरीका देखकर मोहित हो गये थे। एक ही घंटा पढ़ाकर महिम ने मैदान मार लिया था, पर आज वैसा नहीं हो सका। समय बदल गया है। महिम की उम्र बढ़ गई है। लड़कों का भी क्या कसूर है! महिम के कुछ दांत टूट गये हैं। सो उसकी बातों को लड़के अच्छी तरह समझ नहीं पाते। कहते हैं, "फिर से बोलिये।"

गले में जितनी ताकत है, उसे लगाकर महिम पढ़ा रहा है। आंखें इतनी खराब हो गई हैं कि बोर्ड पर के मोटे-मोटे अक्षर भी धुंधले जान पड़ते हैं। बेचारा! बीज-गणित की किताब बदल गई है। नई किताब के पन्नों में दूसरे हिसाब हैं। बिना किताब खोले ही पहले की तरह अपनी याददाश्त के भरोसे ही बोलता जाय, ऐसा अब नहीं हो सकता। किताब खोलकर भी नहीं बोल सकता। पढ़ ही नहीं सकता तो बोलेगा क्या?

बेंच पर कतार लगाये बैठे हुए लड़कों की ओर महिम ने देखा, जैसे वे छात्र नहीं, कठोर न्यायाधीश हों। महिम अच्छी तरह नहीं देख पा-रहा है, पर यह जानता है कि लड़के टकटकी लगाये उसके निकाले हिसाब की ओर देख रहे हैं, जैसे अच्छी तरह देख-समझकर ही न्यायाधीश अपना फैसला देंगे। महिम करता ही क्या! इधर-उधर की बातें समझाकर किसी तरह घंटा पूरा करने लगा। उसके पैर कांप रहे थे और उसे पसीना आरहा था।

"म्याऊं!"

महिम आगबबूला हो गया। बोला, "तुम कक्षा में बिल्ली की बोली बोल रहे हो? मेरा नाम महिमा रंजन सेन है। हिसाब में आनर्स लेकर ग्रेजुएट हूं। तीसरी कक्षा के इतने छोटे-छोटे लड़के हो, मेरे साथ मजाक कर रहे हो? तुम सब मूर्ख हो, क्या समझोगे? अपने पिता और भाइयों से महिम मास्टर के बारे में पूछना। मैं जिस कायदे से हिसाब निकाल

दूंगा, खुद न्यूटन भी वैसा नहीं कर सकेंगे। मैं जिस हिसाब पर निशान लगा दूंगा, विश्वविद्यालयवाले ठीक वही हिसाब परीक्षा में देंगे।"

कहते-कहते महिम का गला भर आया। वे कैसे दिन थे! आज महिम तीसरी कक्षा में आकर परेशान हो रहा है और उन दिनों पहली कक्षा में जाकर एक से दूसरे विभाग में राजा की तरह पढ़ाता था। अच्छे-से-अच्छे मास्टर नहीं आते थे तो चित्तबाबू पूछते, "क्यों, महिमबाबू, पढ़ायंगे।"

"आप कहें तो क्यों नहीं पढ़ाऊंगा।"

"पर भूगोल है।"

"हो जायगा।"

फिर कार्यक्रम देखकर चित्तबाबू कहते, "गलती होगई। भूगोल नहीं, नागरिक शास्त्र है।"

"वह भी पढ़ा दूंगा।"

चित्तबाबू हँसकर कहते, "अगर पंडितजी की संस्कृत की कक्षा पढ़ानी हो तो?"

"तो वह भी पढ़ाऊंगा।"

आज उसी महिम के सामने तीसरी कक्षा के छोटे-छोटे लड़के, जो शुभव्रत से भी छोटे हैं, बिल्ली की बोली बोल रहे हैं!

पर बिल्ली की आवाज लड़कों ने नहीं की थी। सचमुच ही खिड़की से बिल्ली का बच्चा अन्दर आगया था। दरबान ने जो बिल्ली पाल रखी है, उसीका बच्चा। महिम को दिखाई नहीं पड़ता। इसीलिए वह लड़कों को बेकार ही गाली देने लगा।

और तभी उन्हें विनोद का सामान मिल गया।

"म्याऊं-म्याऊं!"

महिम एकदम बौखला गया। आवाज के सहारे अन्दाज लगाकर वह लड़के की ओर दौड़ पड़ा। अब तो लड़के ही आवाजें लगा रहे थे, पर एक ही जगह पर खड़े-खड़े मार खायं, इतने मूर्ख वे थोड़े ही थे!

"म्याऊं-म्याऊं, म्याऊं-म्याऊं!"

एक के बदले अब चार-पांच लड़के आवाजें करने लगे। उन्हें खेल मिल गया, जैसे आंख-मिचौनी का खेल हो। महिम क्लास में दौड़ र

और वे उसे चिढ़ा रहे हैं। पागल-सा होकर महिम उन्हें कोसने लगा—"तुम सब बरबाद हो जाओगे। तुम्हारा भविष्य अंधकारमय हो जायगा।"

अबतक एक भी लड़का बाकी नहीं रह गया था। सारी कक्षा 'म्याऊं-म्याऊं' करने लगी। महिम दौड़ते-दौड़ते थककर धम-से कुर्सी पर बैठ गया, फिर बोला, "अब मैं कभी तुम्हारी कक्षा में नहीं आऊंगा। मास्टरी ही नहीं करूंगा। इस काम में हाथ डालना ही मेरी भूल थी, यह भले आदमी का काम नहीं है!"

एक लड़का खड़ा होकर शरीफ-सा बनता हुआ बोला, "सर, आप तो बेकार नाराज हो रहे हैं। बिल्ली ही तो आवाज कर रही है। बिल्ली आपके कोट की जेब में है, वहीं से बोल रही है।"

गले में चद्दर और बदन में बन्दगले का ढीला कोट। मास्टर की इस पोशाक का रिवाज पुराने हैडमास्टर के जमाने से चला आरहा था। न जाने कब लड़कों ने कोट की जेब में बिल्ली का बच्चा रख दिया था!

स्कूल से निकलकर महिम ट्राम पर नहीं चढ़ा। इतनी जल्दी घर पहुंचकर क्या करेगा! काम ही क्या है! फिर बेकार में पैसे खर्च क्यों करे! लड़कों के सामने गुम-सुम होकर बैठने में भी शरम आती है। सब बड़े हो गये हैं। वे समझ जायंगे कि अब पढ़ाने के लिए कोई बाबूजी को नहीं बुलाता। सबने उन्हें छोड़ दिया। इसीलिए वह पैदल ही चलने लगा। बलराम मित्र लेन में राबिन को पढ़ाकर घर चला जायगा। समय की भी तंगी नहीं थी, इसीलिए खूब धीरे-धीरे चल रहा था।

फिर कुछ सोचकर महिम दाहिनी ओर की गली में घुस गया। यहीं पुराने जमाने के एक छात्र का घर है। उसके पास होने की कोई उम्मीद नहीं थी, पर पास हो जाने पर उसके बाप ने महिम की अच्छी-खासी दावत की थी। महिम सीधे उसी मकान में चला गया।

"भूपतिबाबू हैं?"

भूपतिबाबू उसी समय दफ्तर से लौटे थे। कुछ आश्चर्य से बोले, "क्या बात है, मास्टरसाहब?"

"आपका छोटा लड़का तो अब सेकिन्ड क्लास में आ गया, ट्यूटर

नहीं रखेंगे ?"

"एक जने पढ़ा रहे हैं।"

"अच्छा, पढ़ानेवाला रखिये, साहब। अमिय ने जब पास किया था तभी आपने मुझसे कहा था कि मिहिर को भी पास करा देना होगा।"

"हां, बात तो सही है!" इतना कहते-कहते भूपतिबाबू के स्वर में करुण सहानुभूति भर आई। बोले, "महिमबाबू, आप तो बहुत ही कमजोर हो गये हैं। इस तरह दर-दर मेहनत करते कितने दिन निकाल सकेंगे? आपने बहुत मेहनत की है। अब आपको आराम करना चाहिए। आये हैं तो थोड़ी मिठाई खाकर जाइये।"

मिठाई खाई, गिलास-भर पानी गट्-गट् पीकर महिम फिर चलने लगा। शाम हो गई। रास्तों पर बत्तियां जल गईं। कुछ लड़के खेलकर मैदान से लौट रहे थे। महिम ने सुना, वे सब तुकबन्दी करके उसीकी हँसी उड़ा रहे थे।

बिल्ली का बच्चा लिये, घूमे-फिरे ऐन।
हमारा स्कूल मास्टर, काना महिम सेन॥

नज़र ठीक नहीं है, इसलिए लड़कों की तो पहचान हो नहीं सकी। पर तीसरी 'बी' का एकाध भला लड़का इसमें जरूर होगा। बस, तीन ही चार घंटे बीते हैं और इसी बीच कविता भी बन गई।

सुबिन को पढ़ाकर महिम घर लौटा तो सुधा ने पूछा, "सिन्दूर की डिब्बी लाये हो?"

"सिन्दूर की डिब्बी कैसी? हां, याद आगया!"

तारकबाबू के लड़के मन्मथ की परसों शादी हुई थी। शादी के दिन महिम सुधा को लेकर बेहाला गया था, फिर वर-कन्या की विदाई के बाद ही दोनों लौट आये थे। कपाली को लेकर बड़ी मुश्किल है। वह किसके पास रहती। दिन-भरके लिए दीपाली के पास छोड़ गये थे, पर दिन-भर दीपाली परेशान रही। दूसरे दिन बृहस्पतिवार को तारकबाबू के घर खाना-पीना है, घर-भर का न्यौता मिला है।

सुधा ने कहा, "आज भूल गये न? अच्छा, कल सवेरे-सवेरे ही खरीद लाना। मन्मथ आज भी आया था। कह रहा था कि दीपाली, शुभो, पुण्य,

सभीको जाना होगा। मैंने कह दिया कि रुपाली बच्ची है, रात को वहां नहीं रह सकती, वैसे काम-काज के घर में बच्चा लेकर जाना भी बेकार है। हम लोग दोपहर को जाकर रात को लौट आयंगे। कल तुम ज़रा जल्दी छुट्टी लेकर आजाना, महिम। रुपाली तुम्हारे ही पास रहेगी।"

महिम ने कहा, "कल मैं स्कूल ही नहीं जाऊंगा। पता नहीं, स्कूल जाना कब बन्द हो जाय।"

२४

उस रात महिम ऊपर के कमरे में सोया था। नींद में ही ऐसा लगा, मानो कोई कमरे में घूम रहा है। फिर जान पड़ा, जैसे कोई आकर उसके सिरहाने बैठ गया।

"कौन ? कौन हो ?"

दीपाली महिम के सिर के बालों के बीच अपनी कोमल अंगुलियाँ फेरने लगी।

महिम ने पूछा, "तू अभी तक सोई नहीं, दीपाली ?"

"नींद नहीं आरही थी, बाबूजी। कमरे में बहुत गर्मी थी, इसीलिए छत पर आगई थी। देखा कि आप नींद में ही बार-बार करवटें बदल रहे हैं। सोचा, ज़रा हाथ-पैर दबा दूं !"

"सीढ़ी के दरवाजे में तो कुण्डी लगी थी। तूने उसे कैसे खोला ?"

"सींक डालकर खोल ली।"

दीपाली बाप के पैर दबाने लगी। महिम मास्टर का दिल जाने कैसा हो आया। आज स्कूल के लड़कों ने उसे बहुत तंग किया था। तुकबन्दी करके रास्ते में भी उसकी बेइज्जती की थी। ट्यूशन की आशा में पुराने छात्र के घर जाकर भी उसे निराश लौटना पड़ा था। इनमें से एक भी घटना उसकी आंखों में आंसू नहीं ला सकी थी, पर मातृहीना पुत्री की

पिता पर यह ममता जैसे एक असहाय शिशु को सान्त्वना देने लगी तो महिम मास्टर के लिए आंसू रोकना मुश्किल होगया। तकिये में मुंह गड़ाकर महिम खूब रोया, खूब रोया।

बड़ी देर बाद दीपाली जाने को हुई, फिर जाने क्या सोचकर बोली, "कल हम सब बेहाला दावत में जायंगे। आप नहीं चलेंगे, बाबूजी ?"

"मैं बूढ़ा आदमी, आंखों से ठीक से दिखाई नहीं देता, उस भीड़ में कहां जाऊंगा ! शादी के दिन हो भी तो आया हूं।"

"तो घर में अकेले ही रहेंगे ?"

"मैं और रुपाली, दोनों रहेंगे। अकेला कैसे हुआ, बेटी ? सो वह भी कितनी देर ? रात को तो तुम लोग लौट ही आओगे।"

थोड़े दिन बाद की बात है। चित्तबाबू की मोटी कापी आंख से सटाकर महिम अपनी क्लास देख रहा था। दाशू शोर कर रहे थे—"मास्टर का नाम जोड़कर तुकबन्दी कर रहे थे। लड़के बहुत ही उद्दण्ड हो गये हैं। दीवार पर और टट्टी में तो बुरी-बुरी बातें ही लिख दी हैं। कागज पर लिखकर बोर्ड पर भी चिपका दी हैं। मुझसे कोई नहीं बचेगा, मैं उन्हें जरूर पकड़ लूंगा। और वे स्कूल से निकलवा दिये जायंगे।"

महिम को देखकर दाशू जैसे कुछ ज्यादा चिल्ला रहे थे। शब्दों में हमदर्दी जरूर थी, लेकिन होठों पर कुटिल मुस्कान। और इतना चिल्लाने का अर्थ ही यह था कि हैडमास्टर, चित्तबाबू या दूसरे मास्टरों को अगर पता न हो तो उन्हें भी पता चल जाय, और लिखा हुआ मिटा देने के पहले ही वे जाकर अपना कौतूहल शान्त कर लें।

दाशू महिम को एक दीवार के पास ले गये और उसपर जो लिखा था, उसे दिखाकर, कहने लगे, "लड़के बन्दर हैं, पकड़कर जरा ठुकाई कर सकता तो ठीक रहता।"

अब महिम से नहीं रहा गया तो कड़वी आवाज में बोल उठा, "यह तो हम लोगों की ही खूबी है, दाशूबाबू। आदमी बनाने के बजाय हमने उन्हें बन्दर ही बना दिया है। हम विश्वकर्मा जैसे बड़े कारीगर थे, जिन्होंने ठंठे जगन्नाथ की मूर्ति बनाई थी।"

सभीको जाना होगा। मैंने कह दिया कि रुपाली वच्ची है, रात को वहां नहीं रह सकती, वैसे काम-काज के घर में बच्चा लेकर जाना भी वेकार है। हम लोग दोपहर को जाकर रात को लौट आयंगे। कल तुम ज़रा जल्दी छुट्टी लेकर आजाना, महिम। रुपाली तुम्हारे ही पास रहेगी।"

महिम ने कहा, "कल मैं स्कूल ही नहीं जाऊंगा। पता नहीं, स्कूल जाना कब वन्द हो जाय।"

२४

उस रात महिम ऊपर के कमरे में सोया था। नींद में ही ऐसा लगा, मानो कोई कमरे में घूम रहा है। फिर जान पड़ा, जैसे कोई आकर उसके सिरहाने बैठ गया।

"कौन ? कौन हो ?"

दीपाली महिम के सिर के वालों के बीच अपनी कोमल अंगुलियाँ फेरने लगी।

महिम ने पूछा, "तू अभी तक सोई नहीं, दीपाली ?"

"नींद नहीं आरही थी, वावूजी। कमरे में वहुत गर्मी थी, इसीलिए छत पर आगई थी। देखा कि आप नींद में ही वार-वार करवटें वदल रहे हैं। सोचा, ज़रा हाथ-पैर दवा दूं !"

"सीढ़ी के दरवाजे में तो कुण्डी लगी थी। तूने उसे कैसे खोला ?"

"सींक डालकर खोल ली।"

दीपाली वाप के पैर दवाने लगी। महिम मास्टर का दिल जाने कैसा हो आया। आज स्कूल के लड़कों ने उसे वहुत तंग किया था। तुकवन्दी करके रास्ते में भी उसकी वेइज्जती की थी। ट्यूशन की आशा में पुराने छात्र के घर जाकर भी उसे निराश लौटना पड़ा था। इनमें से एक भी घटना उसकी आंखों में आंसू नहीं ला सकी थी, पर मातृहीना पुत्री की

पिता पर यह ममता जैसे एक असहाय शिशु को सान्त्वना देने लगी तो महिम मास्टर के लिए आंसू रोकना मुश्किल होगया। तकिये में मुंह गड़ाकर महिम खूब रोया, खूब रोया।

बड़ी देर बाद दीपाली जाने को हुई, फिर जाने क्या सोचकर बोली, "कल हम सब बेहाला दावत में जायंगे। आप नहीं चलेंगे, बाबूजी ?"

"मैं बूढ़ा आदमी, आंखों से ठीक से दिखाई नहीं देता, उस भीड़ में कहां जाऊंगा ! शादी के दिन हो भी तो आया हूं।"

"तो घर में अकेले ही रहेंगे ?"

"मैं और रुपाली, दोनों रहेंगे। अकेला कैसे हुआ, बेटी ? सो वह भी कितनी देर ? रात को तो तुम लोग लौट ही आओगे।"

थोड़े दिन बाद की बात है। चित्तबाबू की मोटी कापी आंख से सटाकर महिम अपनी क्लास देख रहा था। दाशू शोर कर रहे थे—"मास्टर का नाम जोड़कर तुकबन्दी कर रहे थे। लड़के बहुत ही उद्दण्ड हो गये हैं। दीवार पर और टट्टी में तो बुरी-बुरी बातें ही लिख दी हैं। कागज पर लिखकर बोर्ड पर भी चिपका दी हैं। मुझसे कोई नहीं बचेगा, मैं उन्हें जरूर पकड़ लूंगा। और वे स्कूल से निकलवा दिये जायंगे।"

महिम को देखकर दाशू जैसे कुछ ज्यादा चिल्ला रहे थे। शब्दों में हमदर्दी जरूर थी, लेकिन होठों पर कुटिल मुस्कान। और इतना चिल्लाने का अर्थ ही यह था कि हैडमास्टर, चित्तबाबू या दूसरे मास्टरों को अगर पता न हो तो उन्हें भी पता चल जाय, और लिखा हुआ मिटा देने के पहले ही वे जाकर अपना कौतूहल शान्त कर लें।

दाशू महिम को एक दीवार के पास ले गये और उसपर जो लिखा था, उसे दिखाकर, कहने लगे, "लड़के बन्दर हैं, पकड़कर ज़रा ठुकाई कर सकता तो ठीक रहता।"

अब महिम से नहीं रहा गया तो कड़वी आवाज में बोल उठा, "यह तो हम लोगों की ही खूबी है, दाशूबाबू। आदमी बनाने के बजाय हमने उन्हें बन्दर ही बना दिया है। हम विश्वकर्मा जैसे बड़े कारीगर थे, जिन्होंने ठूंठे जगन्नाथ की मूर्ति बनाई थी।"

कहते-कहते महिम जल्दी-जल्दी कक्षा की ओर बढ़ने लगा—नवीं कक्षा, यानी सबसे छोटी कक्षा। चित्तबाबू ने महिम का छुट्टी का घंटा काटकर यह कक्षा दी है। इसमें उनका कसूर नहीं है। उन्होंने महिम से पूछ लिया था। चतुर शिक्षक ने चित्तबाबू के घर तक जाकर ऊंची कक्षा में पढ़ाने देने की प्रार्थना की थी, पर वहां तो आफत ही होगई। इसीलिए चित्तबाबू ने पूछ लिया, "चार मास्टरों का नागा है। तीसरे घंटे में पढ़ाना पड़ेगा। चौथी 'बी' का इतिहास पढ़ाएंगे या नवीं 'बी' का बंगला? कौन-सी कक्षा दूं?"

"मुझे नवीं कक्षा दीजिये। उससे भी छोटी कक्षा होती तो वही मांगता।"

नवीं श्रेणी के बच्चे एकदम अबोध हैं। महिम के मन में कितना आक्रोश भरा है। मन-ही-मन बोला, "अभी तो कितने भोले हो। देखना; थोड़े ही सालों के बाद हम लोग तुम्हें क्या बना देंगे! तुम्हारे मां-बाप भी समझ जायंगे और बड़े होने पर तुम भी समझ जाओगे।"

फिर महिम गरजकर बोला, "किताब खोल लो, पहले दस पन्नों से कापी में सुलेख लिखो। अच्छी तरह बनाकर लिखो। हिज्जे गलत हुए और लेख टेढ़ा-मेढ़ा हुआ तो बहुत मारूंगा।"

यह बात अच्छी तरह मालूम है कि चालीस मिनट के समय में दस पृष्ठ तो क्या, उसके आधे पांच पृष्ठ भी नहीं लिखे जा सकते। यह महिम के स्कूल आने के पहले दिन का रामकिंकरबाबू से सीखा हुआ पहला सबक था। अब उस पुण्यात्मा शिक्षक का स्वर्गवास हो गया है। महिम ने निश्चिन्त होकर दोनों पैर मेज पर फैलाकर आंखें बन्द कर लीं।

पर आराम कौन करने देता है। हैडमास्टर की चिट लेकर चपरासी आ खड़ा हुआ—"हैडमास्टर ने बुलाया है।"

तंग होकर महिम ने कहा, "घंटा खत्म हो जाने पर जाने से काम न बनेगा? ऐसे कहीं पढ़ाई होती है? अच्छा, जाओ, जाकर कह दो कि अभी आता हूं।"

महिम ने मुंह फुलाकर लड़कों से कहा, "बैठकर लिखो। अगर एक के मुंह से भी आवाज निकली या कोई अपनी जगह से उठा तो लौटकर पीट-

पीटकर चमड़ी उधेड़ दूंगा।"

हैडमास्टर के कमरे में आकर महिम ने देखा कि सातू घोष उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हींकी वजह से हैडमास्टर ने बुलाया था। सातू घोष गुस्से से तमतमा रहे थे। बोले, "यहां बातचीत नहीं हो सकेगी, बाहर चलो!" और वह महिम का हाथ पकड़कर बाहर खींच ले गये।

"अलक ने क्या लिखा है, पढ़ो। चिट्ठी पर इलाहाबाद के डाकघर की मोहर है। दोनों शैतान, इलाहाबाद तक पहुंच गये हैं। लड़का एकदम गायब हो गया। मैं तो बड़ी हैरानी में था। अब यह चिट्ठी मिली तो चिन्ता दूर हुई।"

कहते-कहते सातू घोष ने लिफाफे में से निकालकर चिट्ठी महिम को थमाकर कठोर स्वर में कहा, "कैसी डायन बेटी है तुम्हारी। छिः-छिः शरीफ घर में ऐसी बेटी! मेरा एक ही बेटा है। ब्याहना चाहता तो कितनी ही अच्छी-अच्छी जगहों से रिश्ता आ जाता, पर मेरी सारी उम्मीदों पर पानी फिर गया। बार-बार तुम्हारे घर जाना-आना, मास्टर पर श्रद्धा से गद्‌गद् भाव! बहुत दिनों से यह षड्यन्त्र रचा जा रहा था।"

सातू घोष ने महिम की ओर इस तरह देखा, मानो महिम भी उस षड्यन्त्र में शामिल है।

महिम बोला, "दीपाली का भाग्य ही खोटा है। तभी उस महामूर्ख की बातों में आ गई। मैं मुकदमा दायर करूंगा। आपके लड़के को जेल भेजकर ही मानूंगा।"

दीपाली बेहाला के तारकबाबू के घर में दावत खाने गई थी। और सब तो रात को ही चले आये, सिर्फ दीपाली वहींपर रह गई। तारकबाबू ने ही कहा था कि दीपाली दो-चार दिन रह जाय, क्योंकि नई दुलहिन दीपाली की ही हमउम्र है। सहेली मिल जाने से वह खुश रहेगी। सुधा दीपाली को वहीं छोड़ आई थी। पांच-छः दिन बाद दुलहिन के मैके लौट जाने पर दीपाली चली आयगी, यही तय हुआ था। अलक की चिट्ठी से साफ जाहिर हो गया कि वह अब नहीं लौटेगी। कालीघाट के मंदिर में गुप्त रूप से माला पहनाकर शादी हो चुकी है। षड्यन्त्र तो

है ही। काफी दिनों से सलाह-मशविरा हो रहा है।

महिम सातू घोष से बिना और कुछ बात किये ही कक्षा में लौट गया। वह खोया-खोया-सा कुर्सी पर बैठा रहा। लड़के भी मौन मास्टर के आदेश की प्रतीक्षा करते रहे। हाथ के इशारे से एक लड़के को पास बुलाकर महिम ने एक कागज पर लिखकर हैडमास्टर के पास भेज दिया कि सिर में दर्द है, वह घर जा रहा है।

उस लड़के को भेजकर महिम तुरन्त चला गया। हैडमास्टर का आदेश सुनने के लिए नहीं रुका।

समय से पहले ही घर लौटकर महिम ने सुवा को बुलाकर कहा, "सुन रही हो दीदी, दीपाली डूब मरी है। तारकदादा के बेहाला के मकान से..."

"यह क्या कह रहे हो ?"

"डूब मरी है, पर पानी में नहीं, सड़ांध, कीचड़ में।" इतना कहकर हाथ की चिट्ठी को सुवा की ओर फेंककर महिम छत पर चला गया। जाकर सीढ़ी के दरवाजे में कुण्डी लगा दी। काफी देर हो गई, महिम छत पर एक छोर से दूसरे छोर तक लगातार घूमता रहा। सिर-दर्द का बहाना करके वह स्कूल से चला आया था, पर अब सचमुच ही उसका सिर फटा जा रहा था। वह कमरे में जाकर लेट गया।

कुछ देर बाद महिम जब कुछ शान्त हुआ तो सोचने लगा—माया-ममता, सेवा-सुश्रूषा, पुराने दिनों की सब अच्छी-अच्छी बातें जैसे खत्म होती जा रही हैं, केवल अभिनय-भर रह गया है।

महिम का विचार-प्रवाह चलता रहा—चलो, अच्छा ही हुआ। मुफ्त में ही बेटी का ब्याह होगया। जो-कुछ बचा-खुचा है, वह शुभव्रत के काम आयगा। अच्छा लड़का है, कक्षा में पहले-दूसरे नम्बर पर रहता है। इसमें कोई शक नहीं कि अच्छी तरह ही पास होगा। शायद छात्रवृत्ति भी मिल जाय। फिर महिम उसे डाक्टरी पढ़ायगा। कैम्पबेल मेडिकल स्कूल में भर्ती करवा देगा। सरला की बड़ी इच्छा थी कि मास्टर का बेटा मास्टर ही न हो। कुछ बड़ा होकर दस आदमियों के बीच सिर ऊंचा करके बैठ सके।। शुभो को कैम्पबेल में भर्ती करने की तरकीब महिम अभी से ही

सोचने लगेगा। विना कोशिश के तो इस जमाने में कुछ होता नहीं। महिम के कितने ही छात्र बड़े ओहदे पर पहुंच गये हैं। उन्हींकी मदद लेकर महिम शुभो को जरूर भर्ती करवा सकेगा। देर नहीं, कल परसों से ही वह पता लगाना शुरू कर देगा।

महिम ने तकिये को गोद में ले लिया। अंगुली से रुई टटोलने लगा। सिलाई पर नजर पड़ी तो महिम चौंक पड़ा। लगता है, नई सिलाई की गई है। उसने जल्दी-से सिलाई खोल डाली और तकिए में से रुई निकालने लगा। बैंक की गड़बड़ी सुनकर महिम ने सौ-सौ रुपये के अट्ठारह नोट बैंक से लाकर तकिये में भरकर सी दिये थे। उन्हें महिम ने बारह साल में इकट्ठा किया था। नोटोंवाले उस तकिये को लेकर रात को वह निश्चिन्त होकर सोता था। न जाने कैसे दीपाली को पता चल गया था। तभी तो वह रात को छत पर घूमने आती थी, बाप के पैर दबाती थी। सिर पर हाथ फेरती थी। महिम अपने आप ही खिलखिलाकर हँसने लगा। दहेज की नकद रकम आंचल में बांधकर ही लड़की बिदा हुई है। दुहिता थी न! यथाशक्ति दोहन करके ही मधुयामिनी मनाने के लिए पश्चिम की ओर रवाना हो गई है।

२५

ठीक एक साल वीत गया।

महिम अब स्कूल नहीं जाता। बेकार हो गया है। पढ़ा नहीं सकता, बूढ़ा हो गया है। पर नौकरी नहीं छोड़ी है। लम्बी छुट्टी पर है।

शुभव्रत ने मैट्रिक पहले दर्जे में पास किया है। थोड़ी-सी कमी से छात्र-वृत्ति नहीं मिली। महिम ने मंत्री के यहां चक्कर लगाया एक दिन उसने उनसे कहा, "लड़के को कोई नौकरी दिलवा दीजिये। घर की बुरी हालत हो रही है।"

मंत्री ने जवाब दिया, "अरे, अभी तो वह बच्चा है। फिर अब तो

भारती इन्स्टीट्यूशन में ग्रेजुएट से कम मास्टर नहीं रखे जाते।"

"यह सब मैं नहीं जानता। जिन्दगी-भर से आप ही के सहारे हूं अब बुढ़ापे में बाल-बच्चों को लेकर क्या मरूंगा ?"

मंत्री दयालु थे। पुराने अध्यापक को कैसे निराश करते ! शुभव्रत को नौकरी मिल गई। उसका काम था हर कक्षा में जाकर फीस वसूल करना। इसके अलावा सुबह-शाम अक्षर-बोध की दो ट्यूशनें भी करता है। पांच-पांच रुपये मिलते हैं। इस काम के लिए इससे ज्यादा और कौन देगा ! शुभो प्राइवेट आई. ए. पढ़ रहा है। आई. ए. फिर बी.ए.। मंत्री ने वादा किया है कि उसे मास्टर बना देंगे।

शाहनगर के पक्के मकान को छोड़कर महिम ने स्कूल के पास ही टीन का एक घर ले लिया है। सुधा फिर अपने जेठ के घर बेहाला चली गई। बातों-बातों में सुनाई पड़ा कि सातू घोष का गुस्सा उतर गया है। अब वह बहू-बेटे, दोनों को घर में रखेगा। ठीक है, पर दीपाली बड़े आदमी के घर की बहू है। महिम से उसका क्या रिश्ता !

अब कोई झंझट नहीं रह गया। महिम दो बेटों और रुपाली को लेकर बस्ती के टीन के घर में रहता है। महिम खुद ही खाना पकाता है। खा-पीकर शुभो चला जाता है। फिर कोई काम नहीं रह जाता। महिम कभी-कभी पुण्यव्रत को पढ़ाने बैठ जाता है। सैकड़ों झंझटों से पुण्यव्रत की पढ़ाई में देर हो गई। बहुत पिछड़ गया है। इतने दिनों में अब पहला पाठ खत्म करके दूसरा भाग शुरू किया है।

कमजोर आंखें पुस्तक पर गड़ाये महिम बेटे को पढ़ा रहा है—सदा सच बोलो। जो सच बोलता है, उसे सभी प्यार करते हैं। जो झूठ बोलता है, उसे कोई प्यार नहीं करता। सब उससे घृणा करते हैं।

पढ़ाते-पढ़ाते वह सोचता है—बात बिल्कुल सही है। सातू घोष महान सत्यवादी है ! भूतपूर्व अध्यक्ष प्रभात पालित भी चरित्रवान थे ! चरित्र पर भाषण देकर रेबेका के घर में मरे थे !

महिम फिर पढ़ाने लगता है—बचपन में ध्यान लगाकर पढ़ाई करो। विद्वान होने पर सभी तुम्हारा आदर करेंगे। जो पढ़ाई में आलस्य करता है, उसका कोई आदर नहीं करता।...

उसके विचार दौड़ने लगते हैं—सही है। मैं, महिमा रंजन सेन बी.ए.। पढ़ाई की मैंने कभी अवहेलना नहीं की। बराबर प्रथम आता था। जिन्दगी-भर सच्चाई की राह पर चला। मेरी डायरी देखकर इस बात को कोई भी समझ जायगा। ऐसा है तभी तो सब मेरा आदर करते हैं! तीसरी 'बी' के बिल्ली की आवाज करनेवाले छात्रों से लेकर अपनी बेटी दीपाली तक! ..

पढ़ाते-पढ़ाते महिम स्तब्ध हो जाता है। बेटे से कहता है—पुण्य, हिज्जे करके पढ़ो, मतलब समझ लो, पर इसके एक भी अक्षर का विश्वास मत करना। सब झूठ है।

किसी जमाने में सूर्यबाबू 'भारत में अंग्रेजी शासन' पढ़ाते थे। पढ़ाना खतम होता था तो कहते थे—इसे याद कर लेना, पर इसके एक शब्द पर भी विश्वास मत करना। यह सब झूठ है।